चील और चट्टान

मूल्य
चार रुपये

कृष्णगोपाल साहनी द्वारा साहनी प्रकाशन दिल्ली
के लिए बालूजा प्रेस, दिल्ली में मुद्रित ।

चील और चट्टान

करतारसिंह दुग्गल

भारती प्रकाशन
५७, एस्प्लानेड रोड, दिल्ली-६

लेखक की अन्य रचनाएँ

हिन्दी

१. अमानिशा : कहानी सग्रह
२. नया घर · कहानी सग्रह
३. चोली दामन उपन्यास

पंजाबी

कहानी संग्रह

१. सवेर सार २. पिप्पुल पत्तियाँ ३. कुडी कहानी करदी गई
४. डगर ५. कच्चा दुद ६. अग्ग खाण वाले
७. नवा घर ८. नवा आदमी ९. खरीड

उपन्यास

१. आंदरा
२. नौ ते मास

नाटक

१. इक सिफर सिफ़र
२. तिन नाटक

कविता

१. कंडे कंडे

समालोचना

१. नवी पंजाबी कविता

उर्दू

१. दिया बुझ गया (नाटक)

कृष्णा बिजौर के प्रति

दो शब्द

'चील और चट्टान' के लेखक श्री करतारसिंह दुग्गल की गिनती पंजाबी के प्रसिद्ध साहित्यकारो मे है। उनकी रचनायें काफी लोकप्रिय हुई है। उनका दृष्टिकोण प्रगतिशील है, पर साहित्य पहले साहित्य है, इस बात को उन्होने कभी नहीं भुलाया। उनकी लेखनी में रस है पर वे इस बात को जानते है कि संयम के अभाव में कला खंडित हो जाती है। नाटक कहानी, उपन्यासादि साहित्य के अनेक अंगो को उन्होंने छुआ है। इधर उनकी कुछ रचनाएँ हिन्दी में भी आई है। उनकी कहानियो ने हिन्दी पाठकों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया है। अब वे अपने दो अनुदित उपन्यास लेकर आये है। 'चोली दामन' कुछ पूर्व प्रकाशित हो चुका है। वह विभाजन से ठीक पहले के पंजाब का सजीव मर्मात्मक चित्र है। उस में कथाकार जैसे इतिहासकार भी बन गया है। इतिहास-कार भी वह जो चितेरा है, जिसकी दृष्टि से कुछ बच नहीं पाता।

प्रस्तुत उपन्यास, 'चील और चट्टान' उनका दूसरा उपन्यास है। इसमें 'जमींदार' की कहानी है। जमींदारी-प्रथा अब मिट रही है। उसे मिटना ही था, क्यों मिटना था इसी का विशद, गहन और सजीव चित्रण इस उपन्यास में हुआ है। दीमक जैसे धीरे-धीरे भीतर ही भीतर सब कुछ को ग्रस लेती है उसी प्रकार स्वयं जमींदार की अपनी वासना

धीरे-धीरे कैसे उसको ग्रसती है, कैसे उसका अपना दूषित रक्त-मानव का रूप धरकर उसी पर प्रहार करता है और उसे ग्रस लेता है, यही संक्षेप मे इस उपन्यास की आधार-भूमि है।

उपन्यास पजाबी से हिन्दी में आया है। इसी लिए उसकी भाषा और उसकी शैली पर पंजाबी का गहन प्रभाव है। शैली तो मूलतः वही है, वर्णनात्मक और चित्रमय। हृदय का सूक्ष्म से सूक्ष्म मूर्त्त भाव वस्तु का सूक्ष्म से सूक्ष्म भाग लेखक की दृष्टि में विशद होकर उभरा है। बेशक यह उपन्यासकार की आदर्शशैली कार्टूनिस्ट की शैली नहीं है पर यह मात्र फोटोग्राफर की शैली भी नहीं है। फिर भी हो सकता है हिन्दी का पाठक पढ़ते-पढ़ते उतावला हो उठे पर इस शैली का अपना स्थान है और वह हिन्दी मे घुल-मिल जायगी तो उसे शक्ति ही देगी।

निश्चय ही हिन्दी जगत उनका स्वागत करेगा।

विष्णु प्रभाकर

११-२-५३

बोझिल बोझिल!

१

उसे ऐसे लगता था जैसे धरती के धुरे के साथ बाँध दिया गया हो। भोर की उभरती हुई किरणो से उसे आँच आती थी, साँझ की धुँधलाती हुई लालिमा उसे जलाती थी। वह मर जाने के लिए जितना तडपती, जीवन पर उसकी पकड उतनी ही गहरी होती जाती।

भागभरी पहले ही एक डेढ वर्ष के शिशु की जननी थी।

जब वह दालान के धुँधलके मे से बाहर निकली तो उसके अंग काँप रहे थे। वह पाँव रखती कही और पडता कही, उसका शरीर भीगा-भीगा, गीला-गीला, पसीने-पसीने था, उसकी पलकें उसकी आँखो की पुतलियो तक ढुलक आई थी। उसकी भवें उलझी हुई थी। पीठ पर पडी हुई एक दो खराशे उसे अनुभव नही हो रही थी। किन्तु उसके ओठो पर, उसके गालो पर एक क्षीण-सी पपडी स्पष्ट दिखाई दे रही थी।

भागभरी को ऐसे अनुभव हुआ जैसे उसके चारो ओर कीचड-ही-कीचड उछाल दिया गया हो। उसका आस-पास जैसे दुर्गंध और घृणास्पद वस्तुओ से भर गया हो, जैसे सडते हुए कूडे की टोकरी उस पर किसी ने उडेल दी हो; दुर्गंध की बासी सडाँद से, वह कटी-कटी, दबी-दबी जा रही थी। उसका जी चाहा कि उसके पेट में जो कुछ भी है, उसे उगल दे। खेत वाले मकान के दालान मे उसके घिसटते हुए चरण-चिह्न सबेरे की पहली किरण की रोशनी मे उभर आए थे। उसका दिल चाहा कि कय कर-कर के सारा दालान भर दे। फिर उसे ऐसे

अनुभव हुआ जैसे सारी-की-सारी धरती कय से लिपी-पुती हुई है और उबकाइयो की लेसदार सफेदी मे लोग चल रहे है, जी रहे है, खा रहे है। फिर उसने अनुभव किया— इस लेस मे सफेद-सफेद पीले-पीले कीडे कुलबुलाने लगे है, फिर उसने देखा, वे कीडे काले पड गए है, फिर उसने देखा, वे कीडे लाल हो गए है।

खेत की मेढो पर बिखरा सरसो का साग उसे यो दिखाई दिया जैसे किसी ककाल की अस्थियाँ छिटक कर बिखर गई हो। भागमरी ने एक-एक करके साग की पत्तियो को बटोर लिया। फिर अपना मुँह-सिर लपेट कर वह गाँव की ओर चल दी।

खेत की मेढ़ो पर लडखड़ाती हुई भागभरी जब पगडडी पर पहुँची तो मैले-कुचैले कपडे पहने एक पुरुष चीथडो में लिपटे हुए एक अधे की बाँह पकडे सामने से आता दिखाई दिया। जब वे निकट आ गए तो उसे पता लगा कि वे भिखमगे थे।

"ओ साई फकीर, ईश्वर कहाँ है ?" उसने लाख-लाख चाहा कि वह न बोले, किन्तु भागभरी के मुँह से अनायास यह प्रश्न निकल गया।

"बहन, मैं तो आँखो से लाचार हूँ। उससे पूछ जो आँखो वाला है," उसने अपने आगे चलते हुए साथी की ओर सकेत किया।

भागभरी ने और आगे बढ कर देखा—दूसरा फ़क़ीर गूँगा था।

गाँव के पास नदी के एक सुनसान तट पर भागभरी ने वस्त्र उतारे और अपने थलथलाते शरीर को पानी मे छिपा लिया। गीली बालू मे उसके पाँव धँसते जाते—"आज मै कितनी बोझिल हो गई हूँ।" उसने अनुभव किया और तत्काल ही उसके ओठो पर एक व्यग्यात्मक मुस्कान दौड गई। मोतियों से साफ-स्वच्छ जल मे उसका हृदय उछल-उछल कर छाती से बाहर आने की करता। भागभरी ने अपने बाल भिगोए, किनारे की चिकनी मिट्टी से अपना अंग-अग रगडा, खुर्दरे पत्थर के साथ अपने पाँव मले, कितनी देर वह पानी में पट लेटी रही; किन्तु

फिर भी जब वह बाहर निकली तो ज्यो-की-त्यो. बोझिल और भारी ही रही। उसके पॉव बालू मे धँस रहे थे, जहाँ-जहाँ रेत मे उसके पाँव धँसते, वहाँ-वहाँ से पानी सिमट आता ।

नदी की ऊँचाई चढ कर जब वह बाहर आई, भागभरी ने देखा कि नवोदित सूर्य का पीलापन लाल हो रहा है और तेजी से बढती हुई लाली रुधिर ऐसे रक्त-वर्ण मे बदलती जा रही है। फिर उसके देखते-देखते यह लाली सारे आकाश पर फैल गई, सूर्य एक कोने मे टिकिया बन कर रह गया। गगन पर विस्तृत-लालिमा और फैलती गई और गहरी होती गई । भागभरी ने सहसा अनुभव किया, जैसे पवन रुक गई हो, घर की ओर तेज-तेज डग भरते हुए उसकी साँस घुट रही थी । एक आँधी-सी छा गई थी, गर्दो-गुबार की आँधी जो आकाश पर छाई तो उसने सम्पूर्ण-प्रदेश को अपनी लपेट मे ले लिया था ।

गाँव के लोग सहमे और आतकित-से, गर्दन उठा-उठा कर ऊपर की ओर देखते, घबराए हुए पशुओ ने खूँटे तोडने आरम्भ कर दिये, पछी शोर मचाने लगे, बालक किसी अज्ञात भय के कारण अपनी माताओं के गले लिपट-लिपट जाते, मदिरो और मस्जिदों के रक्षक इसका कोई कारण न बता पाते ।

"प्रलय आ गई है" आखिर एक सफेद बालो वाली, झुरियो से भरी बुढिया ने अपनी रूखी लटो को पकड कर आकाश की ओर देखा तो स्वयमेव यह बात उसके मुँह से निकल गई ।

"नही-नही, भगतसिह के साथ जो दूसरे दो व्यक्ति कोल्हू में पेले गए है, यह आँधी उन निर्दोषो का रक्त बहाने पर ईश्वर का प्रकोप है । स्कूल के मुन्शी ने एक अखबार मे यह बात पढी थी ...।" एक स्वस्थ-युवक ने कहा, और फिर आकाश की ओर आँखें फाड-फाड कर देखना आरम्भ कर दिया, उसकी टागों के ऊपर का धड एक कँप-कँपी बना हुआ थर्रा रहा था ।

"धूल है धूल—यह धूल ईश्वर ने उसके पीछे उडाई है, गुफा में

बैठ कर बडा आया था कही की साधना करने वाला, चार दिन भी नही गुजरे और कही खिसक गया है," मदिर के एक पुजारी ने अपने साथ के भयभीत जटाओ वाले साधु से कहा और उसने सिर हिला कर इस बात को स्वीकार कर लिया।

बहादुर के दालान मे जलती हुई आग का धुआँ सीधा ऊपर चढता गया। एक सीधे स्तम्भ के समान, जैसे वह आकाश की आग मे जाकर मिल रहा हो।

जब धीमे से ड्योढी का द्वार बद करके भागभरी दालान मे आई, तो दीवार के साथ लग कर खडे हुए बहादुर ने उसकी झोली मे साग की ढेरी देख कर उसे कुछ न कहा।

"साग तोडते-तोडते इतना समय हो गया!" भागभरी ने अपनी व्यग्रता छिपाने के लिए कुछ कहना चाहा।

"ओ भगवान्! इतना साग क्या करना था?" पति ने अपनी पत्नी से समवेदना जताने का प्रयत्न किया।

"जभी मै कहूँ आज मै इतनी बोझिल-बोझिल क्यो हूँ!" कुछ समय के बाद भागभरी ने अपने मन-ही-मन मे सोचा।

वह अभी दालान मे पाँव रखने न पाई थी, सामने सोए हुऐ बच्चे ने हिलना आरभ कर दिया। जितने समय वह भीतर पहुँची, बच्चे ने अपने-आपको मल मे लथपथ कर लिया। उसने छोटे-छोटे नाखूनो में, पलकों मे, बालो मे, नथुनो मे, न जाने किस प्रकार लोट-पोट होकर हाथ-पाँव मार कर गदगी भर कर अपनी दुर्दशा कर ली। माँ ने बच्चे की गंदगी को अगुलियो के पोरो से मल-मल कर धोया, निखारा, चमकाया, चूमा-चाटा और जब उसे गोद मे उठाया, उसे ध्यान आया कि वह एक लोरी का बोल "बच्चे की बहू मै ढूँढ़ कर लाई" गाए, किंतु उसका मन न माना।

चाहे कुछ भी क्यो न कर दे, भागभरी अपने बच्चे पर कभी गुस्सा नही होती थी। उसके ललाट पर जन्म-जात त्रिशूल था और उसे विश्वास था कि वह जीवित नही रहेगा। जब उसे अवकाश होता,

वह सदैव यही चाहती कि बच्चे को जी-भर दुलराए। जैसे कभी कोई पछी दालान मे आकर बैठे, तो पता नही होता कि कब उड जायगा। जब रात को बच्चा उसकी छाती से लगा होता तो भागभरी की चीखें निकल जाती।

किंतु आज उसे अपना बच्चा भी मर्द मालूम हो रहा था, मर्द, जो स्त्री को तोड-फोड, और झिंझोड सकता है।

पत्नी को अपने काम मे सलग्न देख कर पति अपने काम पर बाहर चला गया। भागभरी ने जब बडे कमरे से बाहर झाँका, तो क्या देखती है कि चौके मे चूल्हे की आग दहक कर उसके बैठने वाले पटडे को जा लगी है और आधे से अधिक पटडा जल चुका है। तेजी से दौड कर घडा उसने उस पर उलटना चाहा तो घडा खाली था।

"दुर-दुर्" करती हुई भागभरी ने देखा कि बरामदे के कोने मे एक कुत्ता टाग उठाए चक्की के एक पाट पर पेशाब कर रहा था।

रसोई में जब वह दाखिल हुई, एक छिपकली छत से गिर कर मरी पडी थी, और चीटियाँ उसे चिमट रही थी, उन्होंने छिपकली को औंधा कर दिया था। उसका पीला धड ऊपर की ओर था और खुर्दरी पीठ नीचे। फिर भागभरी के पेट मे सहसा दर्द उठा, बडे कमरे मे आ कर वह अपनी चारपाई पर बैठ गई, फिर लेट गई।

सामने कोठरी मे से म्याऊँ-म्याऊँ करता हुआ बिल्ली का एक पतला-दुबला बच्चा झिझकता हुआ निकला। उसके बाद एक और, एक और, फिर एक और! बडी देर से बोझिल-बोझिल पेट उठाए बिल्ली ने बच्चे दिये थे। एक बिल्ली ने चार बच्चे दिये थे। कुछ समय बाद बिल्ली कोठडी से अकडी और ऐंठी हुई बाहर आई। बडे कमरे मे बिखरे हुए बच्चो की ओर उसने ललचाई हुई दृष्टि से देखा।

लेटे-लेटे भागभरी को नीद आ गई। उसने स्वप्न में देखा कि बिल्ली के सारे बच्चे उसके पेट मे घुस कर बैठ गए हैं और उसका शरीर फूलता जा रहा है, फूलता जा रहा है?

हाँपती हुई वह ज़ाग उठी, किंतु अभी तक उसे ऐसे ज्ञात होता था जैसे उसके नीचे चारपाई दबती जा रही हो और वह स्वयं बोझिल होती जा रही हो। जिस करवट वह लेटी थी, वह करवट सुन्न हो गई थी।

"सचमुच मैं बोझिल-बोझिल होती जा रही हूँ!" भागभरी ने सोचा।

कीचड़

२

शेरे को कुएँ की मेढ पर बिठा कर जहाने को बाग मे गए काफी देर हो गई थी, किंतु वह अभी तक नही लौटा था। आखिर उसकी राह देखते-देखते शेरे ने उसे आवाजे देनी आरभ कर दी, जब उसका पसीना बह निकला तब कही जहाना गाजरो और मूलियो से झोली भरे खट्टों की ऊँची बाड के पीछे से निकला।

"अबे ओ ससुरी के, क्यो दिमाग चाट रहा है ?"

किंतु गाजरो और मूलियो से उसकी झोली भरी हुई देख कर शेरे की बाँछे खिल उठीं और वह अपनी सारी झल्लाहट भूल गया।

जहाने ने कुएँ की मेढ पर गाजरो और मूलियो का ढेर लगा दिया, और शेरा एकदम उन पर टूट पडा। थोडी-बहुत मिट्टी जो उसके टाट-ऐसे पाजामे के साथ लगती, उसे उतारता, साफ करता, और खाए जाता।

"ओ भूखे इन्हे धोकर तो खा, तुझसे इतना भी सतोष नही होता! पेट-दर्द से मर जायगा!"

"अबे इन्होने पेट मे कहाँ रहना हैं!" तत्काल शेरे ने जहाने के नेफे की ओर कनखियो से देखा और फिर दोनो हँस पडे।

"बदमाश, तूने आखिर देख ही ली, तेरे फटे हुए नथुने तो दारू की छाबा तक सूँघ लेते हैं!"

"जभी तो मै कहूँ, यह लफगा कहाँ जाकर छिप गया है!" और फिर दोनों बोतल से ही मुँह लगा पीने लगे। देर तक पीते रहे, गहरे

लाल रग की शराब, जिसका एक-एक घूँट उन्हे मदहोश कर रहा था, चकरा रहा था, औंधा कर रहा था। जहाने ने बताया कि रियासत जीद से उसके एक लगोटिये मित्र ने यह बोतल उसे उपहार स्वरूप भेजी थी, और उसकी एक-एक बूँद उसने अपनी आँखो के सामने निकाली थी !

दोनो निरन्तर पी रहे थे। और तब, बाग की सुनसान सध्या रात के सन्नाटे मे बदल गई, आसमान पर कही-कही तारे टिमटिमाने लगे, कुएँ के भीतर के जल मे मेढक टर्राने लगे और फिर उनके टर्राने के स्वर ऊँचे होते गए। आस-पास के गावो से उभरता हुआ धुआँ अधकार में विलीन होता गया। दूर गाँव की मस्जिद मे 'अजाँ' आरभ हुई और समाप्त हो गई, किंतु वे पीते रहे, पीते रहे !

आखिर पीते-पीते जहाना लेट गया और वह फूट-फूट कर रोने लगा, रोता जाता और कुएँ की मेढ पर बिछता जाता।

शेरे ने उसे समझाया, ढारस बँधाई और बालको की तरह उसे उठा कर अपने पास बिठा लिया और बडी देर तक वह उसका दिल बहलाता रहा।

"अबे तुझे कौनसी गधी याद आ गई ? ससुरी के, वह तेरे किस काम की ? पिछले हफ्ते वह मुझे शहर मे मिली थी, नजाकत आ गई है सूअरनी में ! काम-काज के वक्त, दिन को भी दूधिया सफेद उजले कपडे पहने हुए थी। ऐसी नखरे वाली औरत तेरे किस काम की ?"

जहाने की बस एक अभिलाषा थी। शेरा जिस प्रकार तेज और अडियल घोडो को सीधा कर लिया करता था, वैसे, यदि वह दो मास भी उसके पास टिक जाती तो वहाँ से कभी हिलने का नाम न लेती। किंतु वह तो दसवे दिन ही किसी परदेसी-पथिक के साथ चल दी।

"एक तो यह जी चाहता है" जहाने ने आह भर कर फिर बोलना आरंभ किया—"किसी रात जाऊँ और उसे निकाल लाऊँ !" और फिर उसकी आँखों मे आँसू डबडबा आए।

"फिटकार है तुझ पर !" शेरा फिर उसे समझाने लगा, किंतु जहाने से कौन सी बात छिपी हुई थी !

एक पत्नी अभी जहाने के घर में थी, जहाने के दो बच्चो की माँ थी, किंतु जहाने ने उन्हें कभी मुँह नही लगाया था। उसका विचार था कि जैसे गाय अथवा भैंस कुछ समय तक बाँझ रह कर समाप्त हो जाती है, इसी प्रकार पत्नी भी यदि उसे छोड दे तो किसी काम की नही रहती । और जिस चमारिन के साथ उसे प्यार हुआ वह ख़ाना-बदोशो के एक छरहरे शरीर वाले लडके के साथ शहर चली गई ।

जहाना आजकल अकेला था ।

जहाने ने जब दोबारा आह भरी, शेरे ने आव देखा न ताव, एक तमाचा उसके मुँह पर जड दिया—"अबे ओ, मेरी ओर तो देख !" और फिर उसने अपनी दशा बयान करनी आरभ की ।

उसकी पहली पत्नी, जिसका भेद अभी तक किसी को मालूम नही था, वास्तव मे ज़मीदार की नज़रो मे जँच गई । उसने शेरे से उसे छीन लिया । आठ-दस दिन अपने पास रखकर न जाने उसने उसे क्या किया, फिर उसकी खबर न मिली । शेरे ने अनुनय-विनय भी की, जैसे उसके ढोर-डगर कभी बाहर रह कर फिर अपने रेवड में आ मिलते हैं, वैसे ही वह अपनी पत्नी को भी घर मे बसा लेगा, किंतु जमीदार ने उसकी एक न सुनी, उसकी पत्नी को कही खिसका दिया । शेरे की दूसरी पत्नी बडी ईर्ष्यालु थी, उससे अच्छी तरह से कोई काम नही हो सकता था । एक दिन उसके हाथ से मक्खन की कटोरी छूट गई, शेरे ने उसे ठोकर मारी, वह एक क्षण के लिए घायल पक्षी की, तरह फड-फडाई और फिर वही उसका दम निकल गया । उसके पेट में शेरे का आठ महीने का बच्चा था । उसे अभी तक अपने बच्चे का दुःख था, स्त्रियाँ तो मिल ही जाती है । उसकी तीसरी पत्नी का हर बार गर्भपात हो जाता, उसने उसे उसके मायके भिजवा दिया कि "यह माल हमारे किसी काम का नही !" और अब यह उसकी चौथी पत्नी

थी जिसे उसने कभी चैन से न बैठने दिया।

"अबे ओ, मुझे देख, मै कभी नही रोया, चाहे वह आठ महीने का मेरा लडका पेट मे लेकर चली गई ....।"

"क्या मालूम कि वह लडकी ही होती, कौन जाने !" जहाने ने चिढाने के लिए कहा—

"मै तेरे पेशाब से अपनी दाढी मुँडा दूँ यदि वह लडकी होती। किसी को मालूम नही होता कि लडकी पैदा होगी या लडका ?" शेरे को क्रोध आ गया।

शेरे की क्या बात थी—एक बार उसकी घोडी जब बच्चा देने वाली थी, तो उसने कहा कि बछेरी होगी, और जब घोडी ने बच्चा दिया, बछेरी ही पैदा हुई। उसने अपनी एक पत्नी से कहा—"ससुरी, तू भी एक जोडा पैदा करके दिखा। अपनी गाय की ओर देख...."

और उसके घर उस वर्ष जुडवाँ बच्चे हुए।

शराब की बोतल समाप्त हो चुकी थी। हल्के-हल्के शीत की ठडक मे मदमस्त होकर नशे मे चूर दोनो कुएँ की मेढ पर बैठ गए, बैठे रहे।

स्त्रियो की बातें करते-करते उन्होंने पशुओं की चर्चा छेड़ दी। शेरे ने जहाने को बताया कि जमींदार की सफेद घोडी आजकल उससे बिगडी हुई है। एक मास हुआ, उसके बछेरे की दशा खराब थी, और शेरे ने उसे रात को अहाते मे बाँध दिया तथा माँ को भी बाहर ही बँधा रहने दिया।

उस दिन से जब-कभी वह अस्तबल मे जाता, घोडी उसकी ओर मुँह उठाकर न देखती, न कभी हिनहिनाती। अब शेरा सोचता था कि उसे स्वय मना ले। कुछ दोष तो उसका अवश्य था—"और फिर इन सुन्दरियो का क्रोध मुझे बिल्कुल नही भाता," उसने कहा।

पिछले वर्ष इसी प्रकार उसने एक बार ज़मीदार के एक बाज़ को

सलाम न किया, और जब उसका दाँव लगे उसके कबूतरो को आ दबोचा करे, देखते-ही-देखते उनकी गर्दन मरोड कर फेंक जाया करे। उसने बाज को कई लालच दिये, कई धमकियाँ दी, किन्तु वह न माना। आखिर सरकार ने खुद बीच-बचाव करवाया, सुलह हो गई और शेरे के कबूतरो की जान बची।

शेरे की आँखे अब थक कर मुँदी जा रही थी।

फिर शेरे ने जमीदार की एक कुतिया के बारे मे उसे बताया, जिसका एक बच्चा जमीदार ने किसी अतिथि को उपहार-स्वरूप भेज दिया था। कुतिया चुपचाप यह सब कुछ देखती रही। साझ को उसने कुछ न खाया। सबने सोचा कि उसके विरह का दुख अगले दिन ही मिट जायगा, किंतु रात को उसने अपनी लोहे की जजीर को बल दे-देकर अपने-आपको फासी लगा ली।

शेरे की अपनी एक गाय उसकी पत्नी को बहुत प्रिय थी। एक दिन उसके सामने वह अपनी पत्नी को बुरा-भला कहने लगा, फिर उसने लाख प्रयत्न किये। गाय ने दूध न दिया, और दोनो समय उससे बिगडी रही। जबतक शेरे ने अपनी पत्नी को मना न लिया।

शेरा यू ही कितनी देर किस्से-कहानियाँ सुनाता रहा, सुनाता रहा। आखिर, जब उसने मुँह फेर कर ध्यान से देखा तो जहाने की आँखो से अश्रु धारा बहती हुई उसे दिखाई दी। शेरा सहसा चुप हो गया, जहाने की चीख निकल गई।

"अबे ओ जहाने, तुझे क्या हो गया है। तुझ पर यह क्या फिटकार पड़ गई कि तू बच्चो की तरह रो रहा है!"

जहाना बिल्कुल चुप था, बिल्कुल गुमसुम!

शेरे ने झुँझला कर उसे तनिक जोर से, जरा निर्दयता से झिझोडा, किन्तु जहाना निश्चल ज्यों-का-त्यो पड़ रहा। आखिर उसे सख्त क्रोध आया और शेरे ने अपने सिर से पटका उतार कर उसकी मुश्के कस

दी तथा उसे अपने कधों पर डालकर घर की ओर चल पडा। शेरे का घर बाग के दूसरे किनारे पर था।

मार्ग में एक गहरी खाई देखकर शेरे का क्षणभर के लिए जी चाहा कि वह अपने उस अनावश्यक बोझ को उसमे फेक दे!

आखिर जब वह घर पहुँचा, तो शेरे ने देखा कि ड्योढी का द्वार खुला पडा है। उसने सोचा कि द्वार खटखटाने की मुसीबत से भी छुटकारा मिला। शेरा सीधा अपने भूसे वाले कमरे मे गया और अपने कधों पर उठाए हुए बोझ को उसने खीचकर घासफूस के ढेर पर पटख दिया। जहाने को उसने उसी प्रकार बँधा रहने दिया और बाहर से साँकल लगा कर अपने कमरे मे आ गया।

शेरे की पत्नी अभी अपनी चारपाई पर करवटें बदल रही थी— "ओ भागवान, तू अभी तक सोई नही?" शेरे के कुछ बच्चे माँ की चारपाई पर और कुछ उसके पलग पर सिकुडे हुए पडे थे।

देसी शराब से उनीदा शेरा शीघ्र ही सो गया।

सबेरे जब शेरा जागा, उसने देखा—भूसे वाले कमरे की साँकल ज्यों-की-त्यो बाहर से बद थी, किन्तु जहाना वहाँ नही था। भूसे पर खडा शेरा ताज्जुब कर रहा था कि उसने कमरे के एक कोने मे गुलाबी रग की काँच की चूडी टूटी हुई पाई।

शेरा हैरान था कि उसके घर तो कभी चूडियाँ नही आई थीं।

"ससुरी का! पटका भी साथ ले गया और चूडियाँ भी यहाँ तोडता रहा!"

शेरा जहाने के घर की ओर चल पड़ा।

दुर्गन्ध-सुगन्ध



३

"सरकार आ गए" हाँपते हुए एक नौकर ने बाहर से आकर ड्योढ़ी मे ऊँघते हुए चौकीदार को बताया और आन-की-आन में यह समाचार हवेली मे फैल गया। शरफू ने अपनी झोली में मचलती हुई बिल्ली को परे फेका और शीघ्रता से ज़मीदार के कमरे मे दृष्टि डाली—सब वस्तुए ठीक रखी थी। उसके सामने आधीधूप आधीछाया में बैठी हुई उसकी स्त्री ने बच्ची की जुएँ निकालनी बद कर दी और जल्दी में बच्ची के सिर का चुटीला वही छोडकर भाग गई। जुम्मे ने चुटीला उठा कर अपने नेफे मे टाँग लिया और एक बड़ी-सी गाली उसने अपनी स्त्री को दी। ज़नानखाने में कहार की इस्पात जैसे रग की पत्नी कपडे दे-ले रही थी। ज़मीदार के आने का समाचार सुनकर बेगम स्वयं अहाते में निकल आई। उसने स्त्री को एक नजर देखा—फिर एक पल देखने के बाद उसे पिछली ओर से बाहर भेज दिया। बेगम की आँखो मे सम-वेदना छलक रही थी। वह भीतर चली गई, और जब उसने दर्पण में झाँककर देखा, उसे ऐसा लगा जैसे उसकी परछाई काँप रही हो, फिर उसकी आँखो मे आँसू आ गए।

अभी उसने अपने आँचल का पल्लू आँखे पोछने के लिए उठाया ही था कि उसने दर्पण मे देखा—ज़मीदार दरवाजे पर आ पहुँचा था, उसका तुर्रा चौखट को छू रहा था। उसके पीछे एक चौडे मुँह वाला 'बुली' कुत्ता था, उसके पीछे एक दुबला-पतला लबे नोकदार मुँह वाला शिकारी कुत्ता था, उसके एक हाथ मे बाज़ था और दूसरे हाथ मे हंटर था,

जिससे वह घोडो को इशारा करता था, नौकरो को मारता था। ज्यो-के-त्यो अपनी आँखो मे आँसू लिये बेगम ने मुड कर देखा और वही-की-वही खडी रही जैसे उसे ललकार रही हो—"मै अभी मुश्किल से पद्रह वर्ष की हूँगी।" उसका काँपता हुआ रोम-रोम जैसे कह रहा था, "और एक तेरा बच्चा पहले ही मेरे पेट मे है। तीन पत्नियो को तू पहले ही खा चुका है, मै चौथी हूँ। न जाने मेरे माँ-बाप क्यो अधे हो गए—मै अच्छी-भली पढ-लिख रही थी और तूने मुझे इस गाँव मे ला फैका, तूने मेरे माँ-बाप की गरीबी खरीद ली, तुझे अपने खुदा की कसम ! तनिक अपनी ओर देख और मेरे शरीर की ओर देख, मेंहदी से लाल किये हुए तेरे बाल काले तो नही हो सकते। तेरे माथे पर, तेरी सूरत पर, तेरी उम्र के निशान कितने खौफनाक है, तेरे हाथो पर तेरी नसे दिखाई देती रहती है !

"तेरी पहली बीवी से तेरा एक लडका पैदा हुआ, तुझे बेटा देकर बेचारी खुद चल बसी। दूसरी बीवी को भी तूने न जाने किस तरह जान से मार दिया, लोग तो न जाने क्या-क्या बाते करते है। तीसरी बीवी सड-सड के, सुलग-सुलग के, जल-जल के तेरी बातो के कारण सती हो गई। तूने उसकी लडकी को कैदी किया हुआ है और अब मेरी बारी है। मुझे यो महसूस होता है जैसे मेरी मौत दहलीज पर खड़ी हो—कल पडितायन को हाथ दिखाया था"तो उसने भी यही कुछ कहा था।

"तुम जैसे लोगो का रहन-सहन अजीब-सा है। जबान भी पराई-सी है और रग-ढग भी अलग है, यहाँ तेरे नौकर और नौकरानियाँ सारा दिन पड़ी सूखती रहती है। उन्हे कोई काम नही, कभी सिर जोड़ के बैठते है, आपस मे, कानो मे न जाने क्या-क्या फूँकते रहते हैं। जैसे चोरों-डाकुओ की कोई टोली हो। मुझे यों जान पडता है जैसे हर वक्त कोई मुझ पर नजर रख रहा हो, मैं कभी-भी अपने-आपको अकेली नही समझ सकती।

"इतनी बडी यह हवेली, मुझे काट खाने को दौडती है; और इस

उलट-पलट, इस शान-शौकत और इस हवेली के मारे, मेरा दम घुटा जा रहा है। तेरे फानूसो, तेरे कालीनो और तेरे पलगो के नीचे मै दबी-पिसी जा रही हूँ। तेरे मखमली-गद्दो पर मुझे नीद नही आती। तेरे झरोखो मे से जब-कभी झॉकती हूँ तो मुझे चारो ओर गरीबी और बीमारी के पिजर दिखाई देते है, जैसे उनका मॉस किसी ने नोच लिया हो!

"तुझे शायद ऐसा कभी महसूस नही हुआ। मेरा खयाल है कि जानवरो और बाजो के साथ रहते हुए तेरा, अन्दर का इन्सान मर चुका है।"

न जाने वह आँखो-ही-आँखो मे और क्या कुछ कह जाती, लेकिन ज़मीदार ने अपना बाजू उसके कधों के गिर्द डालकर उसे अपने बाहुपाश मे ले लिया! एक सहमी हुई फाख्ता जैसे किसी बाज़ के पजो मे सिकुड़ गई हो।

ज़मीदार ने समझा शायद वह सवेरे का बाहर गया हुआ अब आया है और बेगम इसस नाराज़ है। कितनी देर तक वह उसके लिए बहाने लगाता रहा; बिल्कुल ऐसी ही बाते वह हमेशा किया करता था। जिन पर दूसरे को यकीन न आता और खुद उसे भी तसल्ली न होती।

ज्यो-ज्यो ज़मीदार बेगम को अपने पास खीचने का प्रयत्न करता, त्यो-त्यो वह और दूर होती जाती। उसे ज़मीदार में से एक भयानक दुर्गंध आती हुई महसूस होती। यह दुर्गंध उसे कभी दूसरे और कभी चौथे दिन, और कभी हर रोज हर घडी आती रहती। उसे जान पडता जैसे उसकी बोटी-बोटी नोची जा रही हो, गल-सड रही हो। कोई भी वस्तु, जो उसकी है, उसे कोई छीन रहा हो, या वह अपने-आप किसी की गोद मे जा गिरी हो।-कोई वस्तु जिसके अपनाने मे न उसे कोई रस अनुभव होता और न उसके खो जाने पर उसे कोई दुःख होता था।

ज़मीदार ने कुल्ले पर बँधी डोरिया पगडी उतार कर बेगम को पकड़ा दी, उसे उसमे से दुर्गंध आ रही थी। फिर उसने जूता उतारा,

बेगम को उसमें से भी उसी प्रकार की दुर्गंध आई। फिर उसने अपना कोट उसे दिया, उसमे से भी वही सडांद उठ रही थी। बेगम एक मशीन की तरह ये वस्तुएँ पकड़ती गई और उन्हे उनके स्थान पर रखती गई। जमीदार को अपनी भरपूर जवान कली की-सी नाजुक बीवी से काम करवाते बडा आनन्द मिलता था। कभी-कभी बेगम से अनुरोध किया जाता कि वह उसके सिर मे तेल मल दे, कभी-कभी वह अपने हाथ दबवाता था, मेहदी उससे चोरी छिपे लगाता था, कभी-कभी गोलियाँ भी उसकी नजर बचाकर खा लेता।

जमीदार की आयु इस समय लगभग साठ वर्ष की थी, और अपनी बीवी को हमेशा अपनी आयु चालीस वर्ष की बताया करता था। पच्चीस-तीस वर्ष का तो उसका जवान बेटा था!

जब कभी वह अपनी बीवी के पास बैठता, अपने हाथ की रेखाएँ देखता रहता, बीवी की हस्त-रेखाओ से उनकी तुलना करता।

"ओ भागवान देख! यह जो रेखा मेरे हाथ पर पडी है, जीवन की रेखा है, यह कही समाप्त ही नही होती, मिटती ही नही।"

जब बेगम उसकी फिजूल की बातों से उकता जाती, वह मदिरा-पान आरभ कर देता, वह दिन भर पीता रहता, रात भर पीता रहता।

वर्षों के पुराने नौकर थे जो घर का सारा धदा चलाते जाते, चलाते जाते। उसकी लडकी रेशमा के लिए अलग कमरा था, अलग नौकरानियाँ थी। उसके लडके नव्वाब का लगभग एक अलग हवेली ही मे घर था, जहाँ वह अपनी बीवी के साथ रहता था।

साँझ को जमीदार कई बार अपनी बीवी को अपनी हवेली की छत पर ले जाता और पोठोहार की पुखराज ऐसी हरी-भरी धरती दिखाता। अपनी लबी-लबी भुजाएँ फैला कर बताता कि कहाँ-कहाँ तक जमीन उसकी अपनी थी। एक ओर 'सुहाँ' तक, 'सुहाँ' के पार के भी कुछ गाँव उसके अपने थे। दूसरी ओर मोरगाह और मोरगाह के

पीछे जो गाँव थे, वे भी उसके अपने थे। उस ओर उसकी जागीर की सीमा रावलपिंडी की छावनी से लगती थी और पश्चिम की ओर उस का अंतिम-गाव 'कोट' था. जो वहाँ से दिखाई न देता, जहाँ वे खडे होते। उस गाँव तक पहुँचते-पहुँचते शाम हो जाती थी।

ऐसी शाम को कभी-कभी छत पर खडे-खडे बेगम अपने-आपको भूल जाती, उसे एक मादकता-सी घेर लेती। एक ओर 'सुहा' इस प्रकार फैल-फैल कर बह रहा था जैसे उसका दिल न चाहता हो कि वह उस प्रदेश को छोड कर चला जाय। दूर-दूर तक वह एक सफेद चादर-सी होकर रह जाता। दूसरी ओर चट्टानें थी, टीले थे, नन्ही-नन्ही पहाडियाँ थी, पहाडियाँ झाडियों से भरी हुई थीं, झाडियो के साथ गहरी सुर्ख बेरियाँ थी, जिन्हें चरवाहे दिनभर नोचते-खाते रहते, जिनकी पत्तियो से भेड-बकरियाँ चिमटी रहती। किसी ओर चश्मे थे, किसी ओर पेडो के झुण्ड थे, जिन पर फाख्ताओ की कतारे-की-कतारे आकर बैठती। खरगोश, लोमडियाँ और हिरण भागते फिरते। किसी ओर लहलहाते हुए खेतो मे कदावर पोठोहारने और सुहाँ का पानी पी-पी-कर उन्मत्त पोठोहारी युवक गीत गाते ओर अपने दिलो की कहते-सुनते।

बेगम का जी चाहता कि वह चारो ओर फैले हुए सौन्दर्य में समा जाय, उसका यह स्वप्न कभी न टूटे, किंतु झिंझोड कर जैसे उसे कोई जगा देता। वह थर-थर काँपने लगती। जमीदार से उसे तीव्र दुर्गन्ध आने लगती, उससे गहरी घृणा हो जाती—उसे चक्कर आ जाता, उसका दिल चाहता कि हवेली की भीत उसे स्थान दे दे और वह धरती पर जा गिरे तथा टुकडे-टुकडे हो जाय। जमीदार के अंक मे कभी-कभी वह चीखने लगती और बेसुध होकर गिर पडती।

"इन दिनो यूँही हुआ करता है, फिकर की कोई बात नही," जमीदार की बूढी नौकरानियाँ उसे ढारस देती।

जमींदार कभी-कभी रेशमा के कमरे की ओर जाता। तीन वर्ष की

एक कोमल काली एक सुघड नौकरानी के हवाले थी। बच्ची को कभी-कभी जमीदार छाती से लगा कर खूब रोता और नौकरानी के हाथ जोडता कि वह उसे उस हवेली की हवा न लगने दे। हवेली का कोई व्यक्ति रेशमा से नही मिल सकता था, रेशमा ऊपर चौबारे मे रहती थी। वह और उसकी दासियाँ—दरवाजे बद रहते थे, खिडकियाँ बद रहती थी।

अपनी बच्ची के साथ जमीदार कभी-कभी छोटी-छोटी बाते किया करता, देर तक उसे खिलाता रहता। कभी-कभी वही उसके साथ बैठ कर दलिया और खिचडी ऐसी हल्की-हल्की वस्तुए खाता, रेशमा के मुँह मे चमचे से कौर डालता, बच्ची की कठिन-से-कठिन माँगे पूरी कर देता, उसे झूला झुलाता, उसे देर तक झूला झुलाने के लिए सेवा मे खड़ा रहता।

कभी-कभी अपने हाथो से उसे नहलाता, उसका हाथ, मुँह, नाक, कान साफ करता, उसे कपडे पहनाता और अपने सामने उसकी आँखो मे काजल डलवा कर उसके बाल सुलझाता, और फिर थपक-थपक कर उसे सुला देता।

और इस प्रकार जब कभी वह अपनी बच्ची के कमरे मे कुछ समय रह कर बाहर निकलता, तो उसे अपना-आप हल्का-हल्का लगता, जिस प्रकार कोई नहाने के बाद साफ-साफ महसूस करता है।

इसी प्रकार, एक शाम को जब रेशमा के कमरे से लौट कर वह अपने कमरे मे आया, तो बेगम ने उससे कहा—"आज तुमसे यह सुगधि कैसी आ रही है ?"

इस बात को छ मास बीत चुके थे।

चीरपड़ !

४

जुम्मे को 'चीरपड' की कहानी पर कभी विश्वास न आता, उसने कई बार यह कहानी रावेल से सुनी थी। दूसरे लोगो ने भी उसे यह कहानी सुनाई थी, उसका मन इस कहानी को कभी स्वीकार न करता। बहुत से लोग जब उससे तर्क करते तो उसके पट्ठे फडकने लगते, उसकी छाती और-भी तन जाती और उसके दाँत कटकटाने लगते।

नदी के पार उसके सामने 'चीरपड' थे, और इस पार नदी के किनारे बैठ कर रावेल ने जुम्मे को आज फिर यह कहानी सुनाई।

चीरपड—पत्थर का एक घोडा, जिस पर पत्थर का एक सवार बैठा था। पत्थर की एक शिला पर घोडे की टापो के चिह्न—सामने पथरीले–टीले मे एक-एक बारीक-सी दराड थी जो आरपार हो गई थी। पिछली पहाडी सारी-की-सारी पत्थर की थी, पत्थर-ही-पत्थर, गोल-गोल शिरो ऐसे लम्बे-लम्बे श्वेत-श्वेत खम्बो के समान, जहा तक दृष्टि पहुँचती, वे स्थिर क़िर्मची रग के पत्थर यो खडे हुए दिखाई देते जैसे खून जम कर इस्पात बन गया हो।

फिर रावेल ने दाई ओर सकेत किया—पहाडी के तीन टीले यूँ पडे थे, जैसे कोई चूल्हा बना हुआ हो, यह उस चुडैल की रसोई थी।

प्रतिवर्ष यह चुडैल खून माँगती, एक जान का बलिदान चाहती, चाहे वह पुरुष हो या स्त्री, युवक हो या वृद्ध। एक जान लेकर फिर वह कभी किसी वस्तु को न छेड़ती। चुडैल की इच्छा थी कि आसपास

---

१. पोठोहार में एक पथरीली चट्टान

के गाँव वाले एक-न-एक को अपने-आप भेज दिया करे। कई वर्षो तक यूँ ही होता रहा। कई शताब्दियाँ यूँही व्यतीत हो गईं। यदि कभी किसी गाँव वाले देरी करते तो चरवाहो का कोई लडका, उसके साथी बताते, पहाडी पर से ढोर-डगरो को हाँकता हुआ फिसल पडता और वही तडप कर उसके प्राण निकल जाते। अथवा पास कही नदी मे नहाती हुई स्त्री डूब जाती। पहाडी के आँचल मे कही किसी पथिक को कोई कत्ल कर देता। एक बार एक पागल स्त्री ने चूल्हो मे खडी होकर छलाँग लगा दी और टुकडे-टुकडे हो गई। चुडैल किसी-न-किसी प्रकार अपनी प्यास बुझा लेती।

लोग प्राय चैत के महीने मे चुडैल को मुँह माँगा बलिदान स्वय जाकर दे आते और एक वर्ष के लिए सपूर्ण प्रदेश बे-फिकर हो जाता। और यदि कही सुस्ती अथवा देरी हो जाती तो चुडैल अपना काम आप निकाल लेती। फिर चाहे कोई जवान लडका हो या कोई सुप्रसिद्ध धनाढ्य हो, चुडैल के हत्थे जो कोई भी चढ जाता, वह उसे कुचल कर रख देती। वह वर्ष मे एक का खून अवश्य बहाती।

फिर लोगो ने मिल कर सोचा, शायद चुडैल गाय, भैंस अथवा कोई दूसरा जानवर लेकर मान जाय। पचो को पत्थरो की ओर भेजा गया। वे कितनी देर चुडैल का इन्तजार करते रहे, आखिर पत्थरो में हलचल हुई और चुडैल ने उत्तर मे सिर हिलाया, पत्थर हिले और उसमे से 'हाँ' की गूँजती हुई प्रतिध्वनि आई। पंच चुडैल से डरते-काँपते लौट आये।

फिर राजा रसालू का इस प्रदेश पर अधिकार हुआ तो उसने चुडैल को ये भेंट देने से लोगो को रोका और आदेश दिया कि पत्थरों के समीप कोई न जाय। उसने अपने फौजी-दस्ते की एक चौकी वहाँ बिठा दी। फौज के सिपाही गोले छोडते रहते, शराब पीते रहते और हर घडी कोलाहल मचाये रहते। चीरपड मे से चिंघाडने की ध्वनियाँ गूँजती रहती, फुकारने के स्वर सुनाई देते रहते, किंतु ये लोग जरा

भी न डरते, जरा भी भयभीन न होते। एक बार आँधी मे एक पत्थर लुढकता हुआ उनकी चौकी की ओर आ गया किंतु सिपाहियो ने मिल कर उसे रोक लिया—इस प्रकार कितने वर्षो तक कोई घटना न हुई।

लोग कहते कि चुडैल अब भाग गई थी। जहाँ गोले चलते थे, राक्षस कहाँ ठहर सकते है, पोठाहार का सपूर्ण-प्रदेश राजा रसालू को आशीष देने लगा।

समय बीते राजा रसालू ने अपना विवाह रचाया। 'ढेरी चकरी' की ओर बरात ने जाना था। ढोल, शहनाइयो और बाजे-गाजो के साथ बरात निकली, और जब 'चीरपडो' के पास से गुजरी तो घोडो ने मुँह मोड लिये। लोग बहुत भयभीत हुए और काँपने लगे? राजा रसालू ने यह देखा तो अपना घोडा सबसे आगे बढा दिया और उसे एडी लगा कर पत्थरो पर चढ गया। ढोल बजने लगे, शहनाइयों ने ऊधम मचा दिया, सारी बरात राजा रसालू के पीछे-पीछे चलने लगी। इतने मे चूल्हो मे से धुआँ उठने लगा, पलक-झपकते आँधी आ गई, बिजली कडकी। राजा रसालू ने अपनी तलवार म्यान से खीच ली और हवा मे लहराई, किंतु अगले ही क्षण राजा रसालू सारी-बरात सहित बुत बन चुका था। राजा की तलवार जिस पत्थर पर बरसी—उस पर अभी तक उसकी काट की दराड मौजूद है।

रावेल कहानी सुनाता गया, सुनाता गया। जुम्मे ने हाथ में एक पत्थर पकडा हुआ था, जब कहानी समाप्त हुई, उसकी मुट्ठी मे छोटे-छोटे टुकडे थे, जिनमे से बहुत से पिस गए थे। जुम्मे ने उन्हे दूर फेंक दिया और फूँक मार कर अपनी हथेली साफ़ की।

"अबे ओ रावेल यार! आज तो मै चीरपडो की ओर जाकर ही रहूँगा," वह दृढ सकल्प करके उठ खडा हुआ।

"अबे बैठ के बात तो सुन ले फाटेखाँ के बच्चे! बिना कारण ही गर्म हो रहा है।"

जुम्मे का जी चाहता था कि चलकर अपनी आँखो से देखे।

चुड़ैल कैसी थी। उसमे कितनी शक्ति थी, लोगो के साथ उसे क्या वैर है, और वह वहाँ रहती क्योकर है ?

"आमने-सामने होकर उससे बाते करूँगा। यदि कुश्ती लडनी पडी तो कीलदार छडी मेरे पास है।" जुम्मे ने तय कर लिया, उसकी लाल आँखो की पुतलियाँ बाहर निकल आई और वह खम्बे के समान जमकर खडा हो गया।

"मैं कहता हूँ—शेरे और जहाने को भी पुकारते चलें," रावेल ने धीरे से राय दी।

"अबे किससे डर रहा है, मदद माँग रहा है ?" जुम्मे को ताव आ गया।

रावेल उठ कर उसके साथ चल पडा। किन्तु मार्ग मे धीरे-धीरे जुम्मे को सुनाकर खबरदार भी करता गया। भूत-प्रेतो की कुछ बात ही और होती है। किन्तु चुड़ैले, राक्षस-राक्षसिने तो बडी भारी मुसीबत खडी कर देते है। ये कोई मुजारे थोडा ही थे कि सरकार के हौसले पर उनसे जो-जी चाहता काम ले लेता।

अँधेरा बढता जा रहा था। फिर उनके पास कोई हथियार भी तो नही था। चाहे रावेल यह जानता था कि उसने अपने नेफे मे पिस्तौल छिपा रखा है, जिसमे एकदम सात गोलियाँ थी। एक गोली उसने महरी के पति पर यूँही गँवा दी थी। वह यदि उसे धमकाता तो भी उस बेचारे का दम निकल जाता।

उस महरी का पति तो अब पेडों के झुड मे पडा हुआ ठडा हो गया होगा। अपनी ओर से बडा पति बना फिरता था। जुम्मे को यह बात कभी अच्छी नही लगती थी कि कोई किसी पर अधिकार जमाकर बैठ जाय। फिर उसने तो जुम्मे को घूर कर देखा था। सरकार के विशेष-चहेते जुम्मे को इस प्रकार कोई नहीं दबा सकता था। फिर जुम्मा सोचता कि अभी तो उस चतुर स्त्री से उसने कई काम निकलवाने है। वह क्यो एक मैले-कुचैले पुरुष की स्त्री बन कर रह गई थी।

अच्छी स्त्रियाँ अच्छे पुरुषो के साथ मिल कर ही अच्छे बच्चें पैदा करें, जुम्मा सदैव ये बात किया करता था। उसने जमीदार को कई बार राय दी—"यदि आप आज्ञा दे तो इन दुबले-पतले नौकरो को एक रात भर मे कही गायब कर दूँ!" खेत वही अच्छा होता है, जिसमे से झाड-झखार और अन्य फिजूल की चीजे निकाल दी जाँय। उसकी इस बात पर जमीदार तथा उसके अन्य साथी हस दिया करते थे।

नदी के पार चीरपडो तक कोई विशेष कठिनाई नही थी। लगभग आध घटे के बाद अपने ध्यान में, बाते करते हुए जुम्मा और रावेल चट्टानो के समीप पहुँच गए थे। जुम्मे ने सोचा कि पहले पिछली ओर से निरीक्षण आरभ किया जाय। राजा रसालू की बरात देखता हुआ वह आखिर उसके घोडे तक पहुँच गया। पहले उसने घोडे की पूँछ पकड कर अपने मुँह से ऐसी आवाज़ निकाली जैसे उसे चलने के लिए कह रहा हो! घोडा ज्यो-का-त्यो खडा रहा। फिर उसने राजा रसालू के कधे पर हाथ रख दिया।

"राजा साहब—राजा साहब! मै चीरपडो की चुडैलो का बाप हूँ, तनिक ऊपर की ओर देखो, अब जाग पडो," उसने ज़ोर-जोर से चिल्ला कर कहा।

किन्तु पत्थर मे जान न आई।

"अगर मुझे वह आज कही मिल गई······" जुम्मे की कीलदार छडी जैसे चुडैल को धमकी देने के लिए तडप रही थी।

फिर वे चूल्हो की ओर गए। जुम्मे ने पहले उनमे झाँक कर देखा। फिर नीचे आकर चूल्हो के भीतर घुस कर देखा। दीवारे जालो से अटी पडी थी। मोटे-मोटे काले जाले, जिनमे चिडियो और पछियो के पजर लटक रहे थे। कोनो मे, नुक्कडो में चमगादड उल्टे लटक रहे थे। नीचे घुटनो तक सूखी हड्डिया थी, जानवरो के पख थे, आदमियो की खोपडियाँ थी, टूटे हुए अडे थे। कई रगो और कई तरह के साँपो की केचुलियाँ थी। पैरो की आवाज सुनकर नेवलो का एक

जोडा चुपके से दौड गया। छिपकलियो ने अपनी आँखे फाड़-फाड कर उन्हें देखना आरभ कर दिया।

"यहाँ से तो वह सूअरनी भाग गई!"–आखिर जुम्मे ने नाउम्मीद होकर कहा और मुडने लगा, किन्तु देखता क्या है कि उसके पीछे रावेल नहीं था।

जुम्मे ने सामने सदियो के तने जालो को देखा। जालो मे लटकते हुए चमगादड देखे, साँपो की केंचुलियाँ देखी, एक आदमी की बडी-सी खोपडी देखी, एक बच्चे की छोटी-सी खोपडी देखी, तो उसने सोचा—कही ये वस्तुएँ, बुत और पत्थर न बन गई हो। पसीना जुम्मे के बालो से धार बन कर बह रहा था।

इतने मे जुम्मे ने पिस्तौल चलने की आवाज़ सुनी, इकट्ठी तीन गोलियाँ। वह चौक कर मुडा, क्या देखता है कि रावेल ने एक अजगर को ढेर कर दिया है।

ढेरो कछुए के समान बैठती तो फिर उससे उठा न जाता। ढेरो बैठी-बैठी सलवार मे जुएँ निकालती रहती, फटे-पुराने कपडे सीती रहती, रफू करती रहती—"डोह-डोह, शी-शी, दुर-दुर" करती कव्वो और कुत्तो को दूर से भगाती रहती। उसे इतना साहस न होता कि उठ कर चौके मे पडी हुई वस्तुएँ ढक दे। जहाँ ढेरो बैठती वहाँ मोटे-मोटे लेसदार खँखार छोडती रहती, नाक सुडकती, नाक के छिछडे निकाल कर मोढे के साथ पोछती जाती। उसकी छोटी-छोटी मैली-कुचैली जटाएँसदैव के उसके मुँह पर पड़ती रहती। मक्खियाँ उसके खँखारो पर बैठती, उसकी नाक की गंदगी पर बैठती और फिर वहाँ से उठ कर उसकी नाक और उसके मुँह पर आ बैठती। जो मक्खियाँ ढेरो की मुट्ठी में आ जातीं, उन्हें वह मसल कर रख देती, अन्य मक्खियो के वह पीछे पडी रहती।

ढेरो के चेहरे की खाल झुरियो में पलट कर उसकी काया छोड चुकी थी। उसका हड्डियो का पजर अलग मालूम होता और उस पर ढँकी हुई उसकी खाल अलग दिखाई देती थी। उसके कानो मे बालियो के छेद अब गुफाओ के मुँह के समान हो गए थे, उसकी आँखे धँस गई थी और हर समय जाले से भरी रहती थी।

ढेरो को इस बात पर बडा गर्व था कि जमीदार बचपन मे उसके साथ खेला करता था। कई बार उसने उसे जान-बूझ कर जिता दिया था, और अपने कधो पर चढा कर उसे सवारी कराई थी। कई बार

वे आँखमिचौली खेलते हुए एक-दूसरे से सट कर बैठते। जमीदार की दी हुई कई चीजे उसने आज तक सभाल कर रखी हुई थी। कई बार जमीदार को ढेरो वे चीजे लाकर देती जिन्हे जमीदार को घर मे खाने की आज्ञा नही थी। वे मिल कर छिप-छिप खाते। सब से बडी बात तो यह थी कि जमीदार को अभी तक ये सब बाते याद थी।

कछुए की तरह अकेली बैठी ढेरो कुछ-न-कुछ सोचती रहती। कभी-कभी आप-ही-आप मुस्करा उठती, कभी-कभी उसके ऊपर के बाकी दो दाँत उसके निचले ओठ मे आ चुभते।

ढेरो का एक बिल्कुल मरियल-सा सडा-गला कुत्ता था—हड्डियो को चाट-चाट कर फिर चाटने लगता, जहाँ ढेरो बैठती उससे चार कदम हट कर वह भी लेट जाता और ढेरो की ओर टकटकी बाँध कर देखता रहता, देखता रहता। उसका सारा खून कीड़ो ने चूस लिया था, उसकी खाल खुजली से उधड रही थी, फिर भी वह अभी तक जीवित था। ढेरो जब बाहर निकलती, 'मोती' कभी उसके आगे चलता और कभी पीछे, मुड-मुड कर उसकी सलवार सूँघता।

गाँव के लोग अभी तक ढेरो से आँखो मे चुटकी डलवाने आते और सोचते कि उनकी आँखें ठीक हो जाती थी। जिन्हें चौथे का ज्वर आता, वह उनके नाखुनो पर दालान मे उगे हुए थोहर का दूध लगाती और तावीज बना कर देती। चबल के रोगियों का मत्र भी उसके पास था। पहले वह मत्र पढती और फिर चबल पर थूकती, अन्य झाड-फूँक वाले तो केवल मत्र ही पढ़ा करते। काली खासी के लिए अजवाइन पीस कर देती, यदि पीठ मे बोझा इत्यादि के कारण दर्द उठने लगता तो पीठ पर लात मारती। बच्चो का टेटुआ और बडो के गले यदि खराब हो जाते तो मालिश करती। गर्म-गर्म चूरी कूट कर खाने के लिए कहती। नजर लग जाती, तो उसे उतारने के लिए उसके पास कई ढंग थे। आग में लाल मिर्चे झोक कर झट पहचान लेती कि नजर लगी है या नहीं। प्रेम के रोगी

उसके पास दूसरे रोगियो से अधिक आते, वह सबको भरमाए रहती। कँवारी लडकियाँ साँझ-सबेरे उसके घर आती-जाती रहती, लडको के साथ यह गली मे और नुक्कडो पर खुसर-फुसर करती रहती। कँवारियो को विवाह के वचन देती, जो विवाहिता होती उन्हे बेटो के वचन देती, विरह को मिलन मे बदलने की जिम्मेदारी लेती और मिलन को विरह मे बदलती। कही कुछ बनाती कही कुछ बिगाडती।

घर के एक कोने मे उसने दीवार पर कुछ रेखाएँ खीची हुई थी, कुछ चित्र बनाए हुए थे, जिनके आगे आठो पहर घी का दीपक जलता रहता था। उसी कोने मे कही कुछ नाखून कटे हुए पडे थे, कही कुछ बालो की लटे थी, कही रग-बिरेगे चीथडे थे और कही कुछ मोम पडी थी, कही सुइयों का ढेर था, काले धागे की गोलियाँ थी, सीपियाँ थी—सीपियो मे कही नमक था, कही लाल मिर्चे थी, कई प्रकार की कौडियाँ थी, सात टके थे और न जाने क्या-क्या अल्लम-गल्लम पडा था।

उसी कोने मे एक शख पडा था जिसे कभी-कभी वह फूँकती। एक ढोलक थी, जिसे वह कई बार द्वार बन्द करके पीटती हुई बेसुध होकर गिर पडती। उस समय वह कहा करती कि उसमे देवी उतरती है। जिसे कुछ प्रश्न पूँछने होते, उनके उत्तरो का उसे आप-ही-आप पता लग जाता।

एक बार गर्मियो के दिनो मे वर्षा न हुई। फसल सूखती जा रही थी, ढोर-डगर मरने लगे। प्रत्येक गाँव मे कई दुर्घटनाएँ होने लगी। ढेरो ने ढोलक बजाई, शँख फूँका, चिमटे बजाए और जब देवी उसमे उतरी तो उसने लोगो को अपनी बाँह दिखाई। कहने लगी कि बादलो को घसीट-घसीट कर उसकी यह दुर्दशा हुई है, किन्तु बादल आते ही नही, वह क्या करे?

अभी मुँह अँधेरा ही था कि एक दिन नव्वाब जमीदार का लड़का

ढेरो के दालान मे दाखिल हुआ। ढेरो ने उसे देखा तो उसके होश गुम हो गए। नव्वाब उसे सलाम करके धीरे से भीतर चला आया और न जाने कितनी देर तक वे बडे कमरे में बैठे हुए खुसर-फुसर करते रहे। कोई बात थी जो वह ढेरो से मनवा रहा था, किन्तु ढेरो मान नही रही थी। नव्वाब ने उसे लालच भी दिया, उसे डराया भी, धमकाया भी, किन्तु उसने एक ही 'नही' अपनाए रखी। ढेरो कह रही थी—"हाय, मैं उसके साथ खेल कर बडी हुई। यह अत्याचार मुझसे नही हो सकेगा।"

आखिर नव्वाब ने पैतरा बदला, और यह बात ढेरो के लिए कठिन नही थी—"पराई बेटी है, स्त्रियाँ क्या और कम है उसके लिए, यदि उसकी इच्छा हो तो···"

ढेरो इस बात के लिए सहमत हो गई। उसने उसे दूसरे दिन आने के लिए कहा और अपने काम में व्यस्त हो गई।

ढेरो दिन भर सोचती रही कि अब उसके सम्बन्ध सबसे बडे घर से होते जा रहे हैं। नव्वाब ने उससे कहा था कि वह उसे मुँह माँगी मुराद देगा, उसकी हर बात पूरी कर देगा। ढेरो ने सोचा कि सारी आयु चूल्हा फूँकती रही, अन्तिम समय अच्छा कट जायगा। सायकाल उसने अपने कुत्ते मोती को कानो से पकड लिया। उसके मुँह के पास मुँह ले जाकर उसकी आँखो-में-आँखे डालकर उसे समझाया कि वह क्या करने वाली थी—"रजवाडो को मेरी जरूरत पड गई है, तुझे मेरा कुछ पता भी है, मोती ?" आँखे फाड-फाड कर उसने—दानवी-ढेरो ने कहा—"कल की रात—कल की रात सब कुछ समाप्त, समझा····"

दूसरे दिन सवेरे नव्वाब पहुँच गया। ढेरो ने उसे नहलाया, स्वयं नहाई। नव्वाब अपने और उसके लिए नये वस्त्र लाया था। दोनों ने वस्त्र बदले। फिर उसने उसे एक पीढ़े पर बिठा दिया, जहाँ दीवार पर रेखाएं खिची हुई थी, चित्र बने हुए थे, जहाँ आठों पहर घी का दीया जलता रहता था।

ढेरो कितनी देर आँखे बन्द करके कुछ पढती रही। नव्वाब सुनता रहा, सुनता रहा। आखिर उसने कागज़ के चार टुकडे लिये, प्रत्येक पर कुछ रेखाएँ खीची, उनमे से प्रत्येक पर चित्रांकन किया और फिर उनमे बबूल के कॉट, सुइयाँ, पिसा हुआ काँच और मिर्चे डाली। फिर पुड़ियाँ बनाई। ये पुडियॉ नव्वाब ने अपने वैरी के पलग के चारों पायो तले रखनी थी। "ज्यो-ज्यो पुडियो पर बोझ पडेगा" ढेरो ने बताया, "त्यों-त्यो उसके सोने मे काटे चुभेगे, मिर्चे लगेगी, सुइयाँ और काँच के टुकडे उसकी छाती को छलनी कर देगे। उसके हृदय मे टीसे उठेगी, पीडा होगी, और वह सिसक-सिसक कर तडप-तडप कर प्राण दे देगी।"

तीन दिनो के बाद नव्वाब फिर आया। उसने कहा कि वह पलग पर आकर बैठी, बैठते ही उसके दिल मे टीस उठी और वह लेट गई, जैसे वह लेटी थी वैसी-की-वैसी पडी रही। जैसे उसका अन्तर बीध दिया गया हो—इलाके का कोई हकीम, कोई झाड फूँक वाला, कोई जादूटोना करने वाला ऐसा नही जो उसके पति ने इकट्ठा न कर लिया हो। आखिर 'पीलो' से एक फकीर आया, बीमार, पर एक नजर डाल कर पलंग के पाए उठा कर देखा, और पुडियाओं को बाहर निकाल कर सबको चकित कर दिया। नव्वाब ने बताया कि वह स्वय वही था—पुड़ियों के निकालने की देर थी कि बीमार को सब सुख मिल गया और उसके पेट के सारे दर्द जाते रहे।

ढेरो ने क्रोध मे अपने ऊपर के दाँतो को अपने सूखे हुए ओठों पर जोर से दबाया, उसकी आँखे और अधिक जोर से खुल गई। उसका मुँह झाग से भर गया, राल टपकने लगी, फिर वह नव्वाब को पकड़ कर दीवार के कोने मे ले गई।

नव्वाब पटडे पर बैठ गया। अत्यन्त क्रोध मे आकर ढेरो ने ऊँचे-स्वरो में कुछ पडना आरम्भ किया, पढती गई, पढती गई, साँझ हुई फिर रात हो गई। पढते-पढते उसका सिर और उसका मुँह लाल हो गया।

आखिर उसने आँखे खोली और नव्वाब की ओर देख के उसके ओठो पर एक भयानक दानवी हँसी दौड गई। उसने चिथडे लिये, रुई ली और गुडिया बना ली। फिर उसने मोम से उस पर एक स्त्री की सूरत बनाई, फिर उस गुडिया को उसने एक स्लेट पर बिठा दिया। और फिर ढेरो ने कुछ पढना आरम्भ कर दिया। पढते-पढते आधी रात हो गई, अमावस की काली-अँधेरी रात! केवल घी का दीपक जल रहा था। नव्वाब ने देखा कि ढेरो ने घूर कर स्लेट पर पडी हुई गुडिया की ओर दृष्टि की। गुडिया जैसे तडप उठी। वह अपने स्थान से हिल गई।

ढेरो ने चुडैलो जैसा एक भयानक नारा लगाया। उसके माथे, उसके हाथो पर पसीना आ गया। क्रोशिये की नोक को उसने दीये की जोत मे गर्माया, और जब वह लाल हो गई तो उसने उसे गुडिया की छाती मे घोप दिया—"अब बोल, तूने मेरा जादू उतरवा लिया था?"

दोनों दातो को अपने सूखे हुए निचले ओठो पर दबाती और जबडे भीच-भीच कर नोक गुडिया के सीने में घोपती जाती। सुई घोप-घोंप कर ढेरो ने खिलौने की छाती छलनी-छलनी कर दी। फिर निढाल होकर जैसे वह गिर पडी। ढेरो ने फिर एक दानवी-अट्टहास किया और नव्वाब के माथे को उचक कर चूम लिया। "जा बेटा! तेरा काम हो गया!" उसने कहा और मोढा उठा कर औधा कर दिया।

नव्वाब मुँह-अँधेरे घर पहुँचा, वहाँ पहले ही कुहराम मचा हुआ था, नव्वाब की सौतेली माँ मर चुकी थी।

नव्वाब की बीवी ने उसे बताया कि किस प्रकार तड़प-तडप कर उसने जान दी थी, जैसे कोई उसके सीने में सुइयाँ घोप रहा हो, बेगम चीख-चीख उठती, सुइयाँ चुभो-चुभो कर जैसे किसी ने उसके सीने को नोच-नोच लिया हो। वह रात को अच्छी-भली सोई थी। सोते-सोते बस चीखने लगी और सीने को पकड-पकड कर तडपती। और इससे पहले कि बाहर से आकर कोई उसकी खबर लेता, बेचारी ठडी हो चुकी थी।

नव्वाब हक्का-बक्का रह गया।

सुहाँ !

६

पोठोहार की धरती पर पहुँच कर सुहाँ की गति धीमी पड जाती है, फैल-फैल कर बहता है, रुक-रुक चलता है, मुड-मुड कर झाँकता है। कभी जैसे गहराइयो मे जाता हो, कभी कुओ मे छिपता है, कभी चट्टि-यल मैदानो मे लबी तान के लेट जाता।

सुहाँ स्वतत्र और बेपरवा दरिया है। कही-कही इसका पाट मीलभर चौडा है। इसकी इच्छा होती है तो उधर बहता है, इसकी इच्छा होती है तो इधर बहता है। यदि जी चाहे तो सारी जगह समेट लेता है।

सुहाँ के सीने पर कभी किसी पोठोहारी ने नाव नही चलाई। ये लोग पानी के साथ अधिक नही उलझते। सुहाँ तो पोठोहार मे एक मेहमान की तरह आता है और मेहमान की तरह वैसे-का-वैसा चला जाता है। कही-कही कोई जाट चर्खी से दो घूँट पानी निकाल ले तो दूसरी बात है, वरना सुहाँ मे से कोई नहर नही निकाली गई, इस पर कोई बाँध नही बाँधा गया।

सुहाँ पर लोगो को अभी तक पुल बनाने की आवश्यकता अनुभव नही हुई। दरिया पर कुल मिलाकर दो पुल हैं, एक जरनैली सडक का, दूसरा रेल का। पोठोहारियो के जीवन मे सुहाँ इतना रच गया है कि वे उसे अपने जीवन का आवश्यक अँग समझते है, उसकी रग-रग पहचानते है। जब यह खुशी मे आता है तो अपने साथ लोगों को बहा कर ले जाता है। जब यह क्रोधित होता है तो किसी की नही सुनता, और कभी यह रुक कर लाड भी करने लगता है। सुहाँ के द्वारा ख्वाजा

खिज़र को मनाते भेजी जाती है, बकरे और भेड़े मार कर लोग इसमे बहा देते है। इसमे सेंदूर, चावल और पैसे फेंके जाते है। इसके तट पर बैठ कर स्त्रियाँ अपने ऊपर से छाया उतारती है। छोटी-छोटी झाडियो मे अपने जादू-टोने के चिह्न चीथडे बाँधकर छोड जाती हैं। जब कभी वर्षा न हो, और तेज गर्मी पडनी आरम्भ हो जाय, तो लोग ढोलक और चिमटे लेकर गाते-गाते सुहाँ के तट पर पहुँचते है। वहाँ एक कुआँ खोदा जाता है और घुघनियाँ[1] बाँटी जाती है जिनमे शक्कर पडी होती है। फिर सब नहाते है और जवान लडके एक-दूसरे को कपडो समेत दरिया मे फेकते है और खेलते है। इस प्रकार आँधी के साथ वर्षा आ जाती है। किसी पोठोहारी के जीवन मे ये घूघनियाँ कभी व्यर्थ नही गई।

श्रावण मास में सुहाँ चढता है, तो उस पार जाना काफी दिनो तक बन्द रहता है। जब पानी उतरता है, लोग सलवारे और लहँगे उठाए उसे पार करना फिर आरम्भ कर देते है। कई बार पानी अचानक बढ जाता है और कई बार पथिक धोखा खा जाते है। कई ढोर-डगर मर जाते है, कई बार तो अच्छे-अच्छे तैराक और इसके किनारे पर कूदने वाले चरवाहे भी फँस जाते हैं।

कहते है—एक चरवाही एक बार सुहाँ के तट पर अपने ढोर-डगर चरा रही थी कि बाढ आ गई। सायँकाल कही बाढ का जोर कम हुआ। मुसाफिरो का एक परिवार जो सवेरे से रुका पडा था, बहुत तँग आ गया। किन्तु उनमे इतना साहस नही था कि पार जा सकें। उनके स्त्रियाँ थी, बच्चे थे, उनके साथ एक नव-विवाहित दम्पति था। चरवाही ने बडा समझाया, स्वयँ पानी मे जाकर उन्हे दिखाया, मुसाफिरों का फिर भी साहस न हुआ। उसने उनसे यह भी कहा कि पानी यूँही कभी चढ जाता है और कभी उतर जाता है, किन्तु वे बिल्कुल न माने। शाम होगई

१. उबले हुए गेहूँ।

थी—चरवाही के सारे ढोर-डगर घर पहुँच गए, किंतु उससे यह नही हो सकता था कि वह विपत्ति मे कैसे एक परिवार को छोड कर स्वयं चली जाय। आखिर उसने लहँगा उठाया, पार जाकर उन्हे गहराई का अनुमान बताया, कही पानी घुटनो तक था और कही कमर तक; मुसाफिर हैरान थे, कोई निर्णय न कर पाते। ज्यों-ज्यों समय गुजरता लडकी व्यग्र होती जाती। जब यात्रियो ने उसकी कोई बात न मानी, चरवाही एक-एक का हाथ पकड कर पार पहुँचाने के लिए तैयार हो गई। छोटे-छोटे बच्चो को वह साथ ले गई। यह देखने के लिए कि उनकी कोई वस्तु रह तो नही गई, चरवाही अकेली फिर आई, जरा-जरा अँधेरा हो चुका था। थकी-हारी चरवाही अपनी थकावट को अपनी चमेली के समान खिलती हुई हँसी मे छिपाने का प्रयत्न कर रही थी। पानी घुटनों से ऊपर कमर तक चढता गया और फिर कम होता गया। सहसा एक भँवर वाली जगह पर पहुँच कर उन चरवाही को जो, तेरह फेरे लगा चुकी थी, चक्कर-सा आया। वह फिसली और न जाने कहाँ खो गई। सामने खडे हुए परिवार ने कुहराम मचा दिया। एक बार आँखों से ओझल हो कर चरवाही दोबारा ऊपर न आई। गाँव से बडे-बडे तैराक आए। वे ढूँढ-ढूँढ कर थक गए। उन्होने सुहाँ का कोना-कोना छान मारा। उन्हें कही भी शबनमाँ न मिली। दूसरे दिन लगभग दो मील दूर सुहाँ के तट पर एक लडकी की लाश पडी हुई मिली। जैसे चुपके से वहाँ जाकर लेट गई हो। उसके चेहरे पर नाचती हुई हँसी वैसी-की-वैसी खिली हुई थी। मुसाफिरो और गाँव वालो ने मिलकर उसकी कब्र सुहाँ के तट पर बना दी। "नकडाली" के पास आज तक जो यात्री उस ओर जाता है वह एक पत्थर उस कब्र पर अवश्य रख जाता है। उसे 'बीबी' पाकदामन की कब्र कहते हैं—शबनमाँ को दफना कर यात्रियो के परिवार ने जिस प्रकार ईश्वर से प्रार्थना की, उसे देखते हुए सुहाँ काँप उठा। कब्र में जब मिट्टी डाली गई तो मद-मद फुहार पडने लगी। पुरवैया के शीतल झोंके आने लगे।

सुहाँ से निकलने वाले पथिक आज भी कहते है कि जब कभी बाढ आई होती है और भयानक वेला हो जाती है, तो उस समय कोई चरवाही आती है और सबको एक-एक करके पार ले जाती है। जहाँ-जहाँ वह पाँव रखती है, वहाँ-वहाँ पानी उतर-सा जाता है, चरवाही सबको किनारे से लगाकर स्वयँ कही अन्तर्ध्यान हो जाती है। वही चरवाही—जिसकी नाक के पास एक तिल है, जिसकी ठोडी के पास एक और तिल है।

सुहाँ मरी की पहाडियो मे से निकलता है। पहाडियों के तग दहाने मे से सिकुडा हुआ, सँभला हुआ और सिमटा हुआ, पथरीले और रेतीले मैदानो मे से होता हुआ पोठोहार के मैदान मे आकर सुस्ताने लगता है। यदि वह कभी ऊपर से अधिक तेजी से आए तो बडे गर्व के साथ गुजर जाता है। अपनी गति सँभालने का उसे अवकाश नही होता, इस प्रकार बहता हुआ अटक मे जा मिलता है।

सुहाँ की गहराइयो और थोडे पानी मे कही-कही मछलियाँ बहुत होती है, किन्तु लोग मछलियो को व्यापार के लिए नहीं पकड सकते। चोरी-छिपे कभी-कभी चरवाहे एक-दो मछलियाँ पगडी फैलाकर पकड ले तो और बात है। मरी की पहाडियो से निकलते ही सुहाँ की सारी मछलियाँ जमीदार के अधिकार मे आ जाती थी। कही-कही उसने मछलियो के जखीरे भी इकट्ठा कर रखे थे। जब कभी जमीदार का दिल चाहता तो वह शिकार खेलने आ जाता।

इलाके भर मे उस दिन चिडिया तक पँख न मार सकती, कोई जाट अपनी फसल पँछियो से बचाने के लिए "हो-हो हो-हो" न कर सकता। पोठोहारनो के गीतो के बोल उनके कण्ठो मे ही दब कर रह जाते। ढोर-डगर तेज न दौड पाते। सहमे-सहमे कुत्ते दुबक कर बैठे रहते। हवा मे सरकार के बाज और शिकरे उडते रहते। घनी झाडियों मे सरकार के घोडे, खाइयो और खँदको में सरकार के बिल्ली-कुत्ते और शिकारी-कुत्ते चक्कर काटते और पानी मे मछली का शिकार हो रहा होता। यदि बहुत-सी मछलियाँ फँस जाती, तो जमींदार हँसता

खेलता चला जाता और यदि मछलियाँ हाथ न लगती तो गाँववालो पर विपत्ति टूट पडती ।

जुम्माँ और रावेल अक्सर जमीदार के साथ शिकार के लिए आते। कभी-कभी शेरा भी साथ हो लेता । जहाने को जान-बूझकर पीछे छोड जाते । एक बार बसी मे फँसी हुई मछली को तडपता देखकर उसके हाथ से बँसी छुट गई थी, और एक बार उन्होने हिरणी का शिकार किया, जिसके पेट मे बच्चा था । गोली खाकर पहले जहाने की आँखों के सामने हिरणी ने दम तोडा और फिर उसके पेट का बच्चा ठँडा हुआ । जहाना उसे देख-देख के रोता जाता और उसकी आँखो से थिरते हुए आँसू थमने मे न आते ।

शबनमा की घटना के बाद जब जमीदार एक बार शिकार के लिए आया, तो लोगो की पचायत उसके पास आई । अभी उनके घाव हरे थे— सरकार से कहा गया कि दरिया पर एक पुल बना दिया जाय, ताकि सारे इलाके को आर-पार जाने की सुविधा हो सके । दूसरी बात जमीदार से यह कही गई कि जहाँ से दरिया पोठो-हार में दाखल होता है, वहाँ से नहरे निकाल ली जाँय । इस प्रकार एक तो दरिया का पानी कम हो जायगा, बाढ का भय मिट जायगा, और नहरो से खेतो को लाभ भी बहुत होगा ।

दोनो बाते उचित थी । जमीदार को ये बातें पसन्द आईं किन्तु जुम्मे ने बीच मे टाँग अडा दी । उसने जमीदार को अकेले में ले जाकर कहा—यह अवश्य किसी बाहरी आदमी की शरारत है । कही ऐसा न हो कि उन्हे आकर कोई उकसाता रहा हो, ताकि आपको इन बातो के लिए तैयार किया जाय । और यदि इसी प्रकार इन लोगो की माँगे पूरी की गईं तो कठिनाई का सामना करना होगा ।

जमीदार ने पचायत के लोगो को बुरी तरह फटकारा और शेरे को सकेत किया कि वह उनको जैसे बन पड़े सज़ा दे । जमीदार के खुशामदी उसके सकेत भली-भाँति समझते थे ।

सुहाँ उसी प्रकार निर्बाध बहता रहा। लोग उसके किनारे पर खरबूजे, ककड़ियाँ, खीरे बोते, और भी बहुत-सी सब्जियों की खेती करते, दरिया की इच्छा होती तो उन्हें पकने देता, वरना उन्हें पका हुआ होने पर भी उजाड़ कर चलता बनता। कई बार फस्लों की देख-भाल करने वाले जाटों के परिवारों के परिवार बहा कर साथ ले जाता। सत्तर—अस्सी मील दूर मरी में वर्षा होती, किंतु तबाही सुहाँ यहाँ आकर फैला देता। कई लोगों ने पानी निकालने के लिए चर्खियाँ बनाई हुई थी, जो आए दिन नई बनवानी पड़ती, अनाज-से भरी हुई बोरियों-की-बोरियाँ बह जाती।

लोग मन्नतें मान-मान कर, प्रार्थनाएँ कर-कर के, चढ़ावे चढ़ा-चढ़ा कर बाढ़ के दिन निकाल लेते, किंतु प्रतिवर्ष नए सिरे से यह विपत्ति टूट पड़ती। जिन दिनों सुहाँ चढ़ा हुआ होता, लोगों को अक्सर ऊपर से बहती हुई आने वाली लाशों को संभालना पड़ता। अपनी लाशों को ढूँडने के लिए आगे जाना पड़ता।

एक बार श्रावण-मास में जहाना जमींदार के साथ शिकार खेलने के लिए आया। शिकार खेलते-खेलते उसका घोड़ा अकेला कहीं निकल गया। एक ऊँचे टीले पर से जहाने ने नीचे देखा कि सुहाँ के किनारे पर एक लड़की लेटी हुई हैं, जहाने ने घोड़े को वहीं छोड़ दिया। धीरे-धीरे बड़ी कठिनता से नीचे आया। लड़की घास की शय्या पर वैसी-की-वैसी लेटी हुई थी। एक निहायत जवान और सुंदर पोठोहारन! जहाना दौड़ता-दौड़ता सहमा हुआ आगे बढ़ा। क्या देखता है कि वह एक लाश थी। चौंक कर पीछे हट गया। पसीने में नहाया हुआ दौड़ता-दौड़ता टीले पर चढ़ता गया, और ऊपर पहुँच कर उसने साँस ली। जब उसके साँस ठिकाने आये तो उसने सोचा कि कहीं वह लड़की सो न रही हो। उसने एक बार फिर टीले से नीचे देखा। लड़की वैसी की वैसी उसी अदा से लेटी हुई थी। जहाना घोड़े को बाँध कर फिर नीचे उतरा। उसने कई चक्कर काटे। कई बार फिसला और कठिनता से बचा। थका—हारा

जहाना जब नीचे पहुंचा तो उसने देखा कि किनारे पर कोई लडकी नही है ! घास की शय्या सूनी है—इस सोच पर कि वह दरिया की फैली हुई एक लाश थी, उसने अपने-आपको बडा धिक्कारा ! जहाना दु ख से इधर-उधर झाँकने लगा—इतनी जल्दी लडकी जा कहाँ सकती थी। सहसा उसकी दृष्टि दरिया की लहरो पर पडी। बिल्कुल वही चितकबरी चुनरिया गले मे लिपटी हुई पानी के ऊपर आती और फिर लहरो के नीचे समा जाती।

जहाना बेसुध होकर गिर पडा।

दूध के दाँत !

७

तख्तपडी के गाँव में सबसे बडी हवेली जमीदार की थी। हवेली के एक ओर अस्तबल थे और दूसरी ओर बाग। जमीदार के पश्चात् उसके कर्मचारियो की हवेलियाँ भी काफी खुली-फैली थी, किंतु अक्सर लोग भूखे थे, बिलखते रहते, चीथडे पहनते थे, आधे नगे और आधे ढँके थे, अत्याचारो से भयभीत थे। यह पिसे हुए, दुबके हुए, मरे हुए लोगो की बस्ती थी। यह लोग जी नही रहे थे बल्कि जैसे-तैसे जीवन के दिन पूरे कर रहे थे। लोगो के लिए जीवन मुसीबत बन गया था और वे भग-चरस आदि के सस्ते नशो के शिकार थे। स्त्रियाँ हर साल बच्चे जनती रहती।

पुरुषो की अपनी पत्नियाँ भी थी। दूसरों की माताओ, बहनो और पत्नियो पर भी पशुओ की भाँति मुँह मारते रहते। स्त्रियाँ जिन बातो से डरती और काँपती थी, वही बाते बार-बार उनके साथ हो जाया करती थी। अपने चलन पर, अपनी अभिलाषा पर, अपने स्वप्न पर किसी की पकड दृढ़ नही थी। पुरुष और स्त्रियाँ सोचते कुछ और, उनसे हो जाता कुछ और, अच्छे रूपरग की कोई शक्ल ढँकी–छिपी न रह सकती। ऐसा कोई स्थान नही था जहाँ कोई छिप सकता; कोई स्थान ऐसा नही था जहाँ कोई अपने को सुरक्षित अनुभव कर सकता। सात पर्दों में छिपे हुए लोग नगे जान पडते। किसी की कोई बात ऐसी नही थी जो उसका पडोसी अथवा उसके पडोसी-का-पड़ोसी या उसका ज़मीदार नहीं जानता था। लोग टोलियों में बैठ कर पुराने समय की

बातें किया करते। पोठोहार में आर्य-जाति सर्वप्रथम आबाद हुई, भारत के वेदादि धर्मग्रथ यही लिखे गए, यहाँ तक्षशिला का भारत भर में सबसे प्रसिद्ध विद्यालय स्थापित हुआ।

चट्टानो मे से पत्थर निकाल-निकाल कर शिल्पियो ने वस्तु-कला को इस प्रदेश मे उन्नत किया। पत्थरो की शिलाएँ और उनकी स्लेटे बना कर उन पर पुस्तके लिखी गई। पोठोहारी-भाषा मे "अच्छना" "गच्छ-ना" जैसे शब्द सीधे सस्कृत-भाषा के बचे-खुचे मालूम होते है, किंतु ये सब बाते व्यर्थ थी जिन पर किसी को विश्वास नही होता था, उनके बडो ने उन्हे ये बाते बताई थी। आपस मे बैठकर ये लोग भी कभी-कभी उन बातो को दुहरा लिया करते। किसी की दुर्बलता की यदि कोई चर्चा छेडता तो हँस कर टाल दिया करते, सुनी-अनसुनी कर देते। ऐसी दुर्बलताएँ तो प्रत्येक मे थी, सारे-का-सारा प्रदेश और सारे-का-सारा गॉव छाज और छलनी के समान था, कोई किसी को ताना नही दे सकता था। किसी के चोट लगती, चोट लगने की आवाज़ होती, चोट सहने की तिलमिलाहट होती, तो फिर चारो ओर स्तब्धता फैल जाती। कोई उसकी छानबीन न करता, कोई पूछताछ की दोबारा हिम्मत न करता। अपनी पत्नी का सतीत्व लुटते देखते तो पुरुष आँख बँद कर लेते, अपने पुरुषो के अपमान पर स्त्रियाँ सँतोष के घूँट पी जाती।

प्रतिवर्ष बच्चे टिड्डी दल के समान जन्म लेते और उनमे से प्रति-वर्ष आधे मर जाते। आखिर माताओ के इतना दूध कहाँ से आता? घर,घर, गली-गली, गॉव-गॉव भूख, गँदगी और रोग फैले हुए थे।

एक जमीदार था, जमीदार के चार गुडे कर्मचारी थे—शेरा जहाना, जुम्मा और रावेल। और उनके पश्चात् जमीदार का बेटा -नव्वाब था, जवान, जैसे साँड किसी ने छोड रखा हो। गली-गली में सूँघता फिरता, चूहो की भाँति कुतरता और काटता।

मस्जिदो, गुरुद्वारो और मदिरो मे सन्नाटा छाया रहता, उनमें

कोई भी न जाता । जैसे ईश्वर-स्मरण किसी को न आता हो, अल्ला को उन लोगो ने इस प्रकार भुला रखा था, कि वह भी अपनी प्रजा को भूल चुका था ।

"तख्तपडी"—वैसे तो नाम का गाँव था किंतु शहर जितना बडा एक कस्बा था । जमीदार और मालदारो की हवेलियाँ छोड कर सब-के-सब घरो के लिए एक ही कुआँ था जिस पर सदा भीड लगी रहती । सर्दियो मे रो-पीट कर यह कुआँ काम चला देता, किंतु गर्मियों मे सदैव इसकी कमर टूट जाती और दम तोड देता । लोग झुंडो-के-झुंड चश्मो की ओर जाते । लगभग डेढ मील दूर एक और कुआँ था, वहाँ से पानी लाते । लोग प्यासे बैठे रहते, तेल ऐसा गर्म पानी पीते, चश्मो का खौलता हुआ पानी पीते, लेकिन किसी की समझ मे यह बात न आती कि एक और कुआँ भी खोदा जा सकता है ।

कडकती चिलचिलाती गर्मी मे भागभरी का लडका जो सात वर्ष का हो चुका था, एक दोपहर को मर गया । उसे गर्दन-तोड बुखार हो गया था, पति-पत्नी ने कई जोड-तोड किये, किंतु बच्चे के माथे पर जन्मजात त्रिशूल था । भागभरी जानती थी कि वह बच नही सकता, आखिर वह मर के रहा । भागभरी की आँखो से एक भी आँसू न टपका और जब उसे दफनाने लगे, भागभरी का पति कब्र पर चक्कर खाकर गिर पडा । अडोस-पड़ोस वालों ने उसे धैर्य दिया, अभी तो उसका एक और लडका था ।

"ओ मेरे शेर ऐसे बेटे !" बहादुर अपने लडके के लिए विलाप कर रहा था और फूट-फूट कर रो रहा था । चिल्ला-चिल्ला कर उसका गला रुँध गया, उसने सिर के बाल नोच लिये, कभी-कभी अपने-आप उससे बातें करने लगता ।

"बहादुर ! अभी तो ईश्वर की दया से तेरा एक और लड़का भी है !" लोग उसे समझा रहे थे किंतु बहादुर को शाँति न मिलती ।

"भागभरी, तू ही इसे समझा !" भागभरी की सहेलियाँ उसे आ-

आकर कहती ।

भागभरी दिल-ही-दिल मे सोचती कि किस मुँह से वह उसे धैर्य बँधाए। वह उससे क्या कहे ? सोचते-सोचते इसका दिल बैठने लगा।

एक दिन लोगो ने देखा कि बहादुर नाखूनो से अपने बच्चे की क़ब्र खोद रहा था—"उसने मुझे कब्र मे से अभी आवाज़ दी है।" वह यह कहता और किसी की बात न सुनता। आखिर बडे दिलासो और मिन्नतो के पश्चात वह घर आया।

गर्मी का ताव भागभरी के दूसरे बच्चे को भी लग गया। प्रतिदिन वह दुर्बल होता गया, दुर्बल होता गया। भागभरी का जी न चाहता कि वह बहादुर से उसके दवा-दारू के लिए कुछ कहे। गली मे धरेक की छाया-तले अकेली बैठी बच्चे की देखभाल करती रहती। बच्चे को पेचिश थी, पानी के अतिरिक्त उसे कुछ और न पचता। भागभरी उसे दिनभर लिये बैठी रहती और ईश्वर के आगे हाथ फैलाए रहती। अब जब कि वह आ गया था, ईश्वर करे उसे मौत न आए! वह था भी तो बहुत गोरा चिट्टा! मोटी-मोटी उसकी आखें थी, भरा हुआ शरीर था। लोग भागभरी को छेडते—"अरी तू तो किसी का लडका छीन लाई है!" और भागभरी के हृदय में एक खलबली-सी मची रहती। जो कोई भी उसके बच्चे को देखता वह उसकी बातों पर अवाक् रह जाता। बार-बार यही वह कहता कि वह कोई सूरमा अथवा सरदार बन कर रहेगा। माँ ये बाते सुनती तो उसे बच्चे से भय लगता। समय से पहले उसने बैठना सीखा, समय से पहले उसने खडा होना सीखा, समय से पहले उसने चलना आरभ किया, समय से पहले वह बाते करने लग गया था, और अब सयानो के समान कुछ इस प्रकार मीन-मेख निकालता कि भागवरी काँप उठती। जब से बीमार पडा था, वह अपने पिता को बहुत याद करता और जब हठ करता तो भागभरी के आँसू न रुकते। "क्या करे उन्होने काम पर भी तो जाना ठहरा वरना पेट कैसे भरे ?"

एक दिन वह प्रातःकाल इस प्रकार का हठ कर रहा था कि

जमीदार घोडे पर सवार उधर आ निकला। भागभरी उठ कर घरेक के पीछे छिप गई। घोडो और कुत्तो की आवाज सुन कर उसे अपना बच्चा तक भूल गया और जब वे दूर निकल गए तो भागभरी ने उसे कहानी सुनानी आरभ कर दी—एक था राजा, और न जाने क्या-क्या कुछ······

दूसरे दिन जहाने की पत्नी फज्जो भागभरी के घर आई। भागभरी हैरान थी कि यह किधर आ गई। कितनी देर तक फज्जो बैठी हुई बच्चे की दशा पूछती रही, बच्चे से तोतली-तोतली बाते करती रही और बच्चे की ओर से हर बात को तडाख-पडाख उत्तर पाकर हैरान रह जाती रही।

"अरी तेरा बच्चा किस पर है ?" भागभरी से बार-बार पूछती।

और भागभरी कभी हँस पडती कभी कोई अन्य बात छेड देती।

अगले दिन बहादुर को ढूँढता हुआ जहाना स्वय आया। बहादुर घर मे नही था। जाते समय वह बच्चे की हथेली पर पाँच रुपये रख गया और कह गया कि जब बहादुर घर पहुँचे तो वह उसकी हवेली की ओर आ जाय।

जहाने की पत्नी और जहाने के ऊपर-तले घर मे आने से भागभरी के पैरो-तले से जमीन निकल गई। उसके बच्चे को अब आराम आ रहा था किन्तु अब वह दिनभर स्वयं चिंता मे डूबी रहती। न कुछ खाती न कुछ पीती। बच्चे को चूम-चूम कर चाट-चाट कर उसका हृदय न भरता। जहाने ने बहादुर को जमीदार के बागीचे में नौकर हो जाने के लिए कहा। उसने उसे वहाँ रहने के लिए एक कोठी भी देने का लालच दिया। बहादुर स्वीकृति दे आया। भागभरी ने सुनते ही अस्वीकार कर दिया। बहादुर ने लाख तर्क लडाए किन्तु उसने एक न सुनी।

फिर जहाने ने तह किया कि जहाँ बहादुर नौकर था, वहाँ से उसे जवाब दिलवा दिया। और जहाँ भी बहादुर जाता उसे कोई काम न मिलता। एक दिन के लिए उसे यदि कोई रख भी लेता तो अगले दिन

निकाल दिया जाता। बहादुर तग आ गया। पहले तो उसने अपनी पत्नी को कुछ न बताया। आखिर थक-हार कर घर बैठ गया।

बेकार बहादुर धरेक के पेड-तले से उठ कर बेरी-तले जा बैठता बेरी तले उसे घबराहट-सी अनुभव होती, वहाँ से उठ कर बडे कमरे मे जा लेटता। सारा दिन मेहनत-मजदूरी करने वाले के लिए यह बहुत बडा दण्ड था कि उससे काम छीन लिया जाय। उसके पट्ठे ऐंठते, उसकी भुजाएँ जैसे उसे ललकारती, उसकी नस नस जैसे किसी वस्तु की कामना करती, किसी-न-किसी वस्तु को बनाने या बिगाडने के लिए व्यग्र रहती। बहादुर ने घर का छोटा-मोटा काम करना आरभ कर दिया, किन्तु उसकी तसल्ली न होती। बैठे-बैठे उसे यूँही ध्यान-सा आ गया और उसने दालान मे लगा हुआ पेड काट दिया और निरतर दो दिनो तक उसकी जडे खोद कर निकालता रहा—फिर बेकार हो गया। अकेला बैठा बहादुर न जाने क्या क्या कुछ सोचता रहता। उस का बहुत जी चाहता कि कोई उसे थोडा-बहुत काम ही दे दे। मुँह अँधेरे उठता और अडोसियो-पडोसियो को काम पर जाते देखकर बहादुर कसमसाने लगता। अभी काफी सबेरा होता कि ढोर-डगरो के गले मे पडी हुई घटियाँ बजनी आरभ हो जाती और हल चलाने वाले खेतो की ओर चल पडते। मुहल्ला, मकान और दीवारे उसे काट खाने को दौडते।

इतने दिन घर बैठे-बैठे बहादुर की पूँजी भी समाप्त होने लगी। उसने जो कुछ इकठ्ठा कर रखा था धीरे-धीरे कम होने लगा। बहादुर अपनी पत्नी से कभी नाराज नही हुआ था। आजकल वह बात-बात पर उससे उलझ पडता। उसकी समझ मे न आता कि भागभरी आखिर उसे जहाने के यहाँ नौकरी क्यो नही करने देती थी। वे बात-बात पर एक दूसरे को काट खाने को दौडते।

बहादुर के घर कितने दिनो से एक समय कुछ पकता, दूसरे समय कुछ न पकता। और अब दोनो समय कुछ पकना बद हो गया—पति-

पत्नी तो भूखे सो रहते किंतु बच्चे का पेट भरना तो आवश्यक था। भागभरी बच्चे को बिलखता हुआ न देख सकती। अडोसियो-पडोसियो और गली-मुहल्लो वालियो से भी वे माँग माँग कर तग आ चुके थे। लोगो ने आखिर अपने हाथ खीच लिये।

आज चौथा दिन था कि भागभरी और जहाने के मुँह में खील तक उड कर न गई थी। सबेरे से वच्चा हठ कर रहा था और रो-रो कर बुरा हाल कर चुका था। तग आकर भागभरी ने उसे एक तमाचा भी जड दिया था। बच्चा चिल्ला रहा था कि जमीदार फिर उधर से निकला। उसने उनके दालान की ओर एक दृष्टि फेकी और बहादुर को सकेत से बुला कर अपने साथ ले गया।

गाँव के बाहर एक पुरानी हवेली थी। मरम्मतें हो रही थी। जमीदार ने बहादुर को वहाँ काम पर लगा दिया। शाम को जब वह घर लौटा तो उसने भागभरी को उस बारे मे कुछ न बताया। भागभरी ने उससे कुछ पूछा।

भागभरी ने अपने बच्चे का अभी तक कोई नाम नही रखा था। सब उसे काका काका कह कर पुकारा करते। एक दिन काके ने भागभरी से पूछा कि बहादुर किस काम पर जाया करता था।

"इमारतें बनाता है-हवेलियाँ बनाता है!" उसकी माँ ने उत्तर दिया। काका चुप हो गया, सोचने लगा।

"तू कौन-सा काम करेगा बेटा?" भागभरी ने ममता-भरे स्वर मे उससे पूछा

"माँ···मैं उसकी हवेलियाँ गिराया करूँगा!" काके ने मुँह-तोड़ उत्तर दिया।

भुरा !



८

सुहाँ की दसिं दक्षिण मे भूलो का जगल था और बाई ओर एक 'भुरे' का बीहड था। मीलो तक आदमी और आबादी के चिह्न दिखाई नही देते थे। ग्रीष्म-काल मे इस जगल के चट्टयल-मैदान पर चिलचिलाती धूप पडती थी। शीत-काल मे मणले की शीतल हवाएं नसो मे रुधिर जमा देती थी।

जगल मे खाइयाँ थी, खदके थी, टीले थे, गार थे, और उनके बीच मे नदी बहती थी, जिस पर मुर्गाबियाँ पक्तियाँ बाँध कर मँडराती और फिर इस जगल मे विलीन हो जाती। नदी 'भुरे' से लगभग आध फर्लांग दूर गहराई मे बहती थी, और यह सारी-की-सारी ढलवान कटीले लबे पत्तों वाली भाडियो से अटी रहती। नदी के किनारो पर बेंतो के समान झुकी-झुकी शाखाओ वाले पौधे थे। उड-उड कर जैसे नदी पर पानी पीते रहते। नदी का पानी नीरव और स्तब्ध यो जान पडता, जैसे उसे इस हरियावल मे जड दिया गया हो। जब कोई मेढक बोलता या फिर कोई पत्ता टूट कर गिरता, तो वह उस पानी की सतह पर छोटी-छोटी लहरे पैदा करता। या फिर साँभ-सबेरे जगल के जानवर यहाँ पानी पीने आते, खरगोश किनारो पर बैठ कर अपने मुँह धोते, हिरण पानी मे घुस कर एक-दूसरे के साथ अपने शरीर रगडते। और उसी प्रकार लोमडियाँ, गीदड और भेडिये भी किया करते। नदी के शीतल गोद में कछुए थे, उसमे मछलियाँ थी। मछलियाँ न बहुत बड़ी होती थी न बहुत छोटी। छोटी-सी नदी थी, इसलिए दम्यनि

---

१. एक जंगल

डीलडौल की मछलियाँ इसमे होती। मछेरे या उन्हे पकड ले जाते थे या बाढ के कारण वह बह जाया करती थी। फूल जैसी हलकी मुर्गाबियाँ पानी की लहरो पर जैसे पवन के झोंको से इधर-उधर फिसलती रहती। किनारो की झाडियो और खाइयो मे छिपे हुए शिकारी अपनी बदूक ताने बैठे रहते। बदूक चलती तो बेहद शोर मचता, पख फडफडाते तथा सरिता जैसे काँप उठती। फिर भूरे रग के पतले और लंबे कुत्त दौड पडते और पानी मे से शिकार इकट्टा कर लाते। निरीह मुर्गाबियाँ वहाँ से उठती और कही दूसरी जगह जा बैठती।

नदी-पार 'भुरे' का जँगल था। चप्पे-चप्पे पर पथरीली-धरती जैसे उचक-उचक कर झाँक रही होती। चारो ओर ककर बिखरे रहते, टीलो पर से तेज-तेज गिरते हुए ककरो की फिसलन शिकारियो को बहुत तग करती। कई लोग उन पर से फिसल कर हाथ-पाँव तुड़बा लेते। कई बार शिकारी गुच्छमगुच्छा हो कर 'गेद की तरह' लुढकते हुए झाडियो मे जा अटकते।

शिकार अक्सर खाइयो की ढलवानो मे मिलता, नुकीली-कटीली और घनी झाडियो मे छिपा हुआ होता। तीतर, बटेर और खरगोश यहाँ से निकलते और हिरणों की टोलियाँ उछलती-कूदती बाहर आती और नौ-दो ग्यारह हो जाती। नए-नए शिकारियो को बेहद कठिनाई का सामना करना पडता। कई बार तो जंगल के चतुर-जानवर बडे-से-बडे शिकारी को खूब नाच नचाते।

जगल मे हर प्रकार के शिकार का अपना समय होता था। खरगोश साँझ-सबेरे निकलते। उस समय अभी भोर होने ही लगती। कई बार खरगोश यू सिर निकालते जैसे धरती मे कोई चश्मा फूट पडा हो, या जैसे श्रावण की भीगी शाम को कीडो से आकाश अट जाता है। वे शिकारियो के कदमो मे उछल-उछल पडते। कोई दाई ओर, कोई बाई ओर, कोई आगे और कोई पीछे—सामने की एक झाडी से दूसरी झाड़ी में जा रहे होते, नदी की ओर दौड रहे होते, किनारों पर चढ़

रहे होते, नीचे जा रहे होते, काले-भूरे और चितकबरे खरगोश! बदूक पकडे हुए शिकारी बौखला-सा जाता, जगख मे खरगोश का शिकार वही लोग कर सकते जो छलाँगे मारती हुई वस्तु का लक्ष्य बाँध सके।

हिरण दोपहर को निकलते। हिरण और हिरणी तथा कई बार उनका परिवार उनके साथ होता। कई बार उनके साथ अडोसी-पडोसी भी होते, कई बार यो जान पडता कि हिरणो की सारी बिरादरी इकट्ठी होकर बाहर निकल आई है। उनके आगे उनका सरदार होता, उसके पीछे बाकी हिरण धीरे-धीरे चलते। कुछ समय के लिए कान खडे करके सतोष कर लेते कि कही भय की आशका तो नही है, फिर सतुष्ट होकर घूमने-फिरने लगते। बडे-बडे हिरण कई बार पेडों के तनो से अपने शरीर खुजलाते, उछल-उछल कर उन पेडो के पत्ते तोडते, और कई बार उनके तने पर अपनी पतली टाँगे रख कर टहनियो पर चढने का व्यर्थ-प्रयास करते। जिनका पेट भरा होता वे खेल कर रहे होते, हिरणो की माताएँ कही बच्चो को खेलना-कूदना सिखा रही होती; ऐसे समय मे शिकारी जितना समीप प्रतीक्षा मे बैठा हुआ हो उसे उतना ही आराम रहता, किन्तु कई बार तो हिरण आदमी की गध सूँघ लेते है। हिरण फिर उस ओर कदम नही रखते, जहाँ कोई छिप कर बैठा होता।

मुर्गाबियाँ अक्सर साँझ की वेला मे नदी पर आकर बैठती, पंक्तियो-की-पँक्तियाँ, झुण्डो-के-झुण्ड। जहाँ एक की इच्छा होती वही सब चक्कर काट कर पानी की सतह पर फूलो के समान बैठ जाती, चोच धोती, पंखो पर जल के छीटे डालती, किन्तु कई बार जल्दबाज शिकारी बेचारी मुर्गाबियो को इतना भी अवकाश न देते। मुर्गाबी बैठी भी मारी जा सकती है किन्तु उडती हुई अधिक काबू मे आ सकती है, यदि किसी को ढग आता हो?

तीतरो और बटेरो के शिकार का एक और ही ढँग था। जहाँ

कही सदेह हो, जहाँ कही तीतर उड कर गया हो, पँख की जहाँ से आवाज आए, वहाँ सिखाए हुए कुत्ते को छोड दिया जाता, ताकि उस झाडी मे गडबड मचाकर शिकार को वहाँ से निकाले और इस प्रकार तीतरो और बटेरो को भी उडा-उडा मारा जाता ।

"सरकार, आपने तो कहा था कि वर्षा होगी !" रावेल ने माथे पर से पसीना पोछते हुए जमींदार से कहा । रावेल एक हिरण के पीछे भागा था, किन्तु थक-हार कर लौट आया ।

"और आज तो तीसरा दिन है ?" जमीदार बबूल के सूखे पेड तले खडा था ।

रावेल के याद दिलाने पर जमीदार ने आकाश की ओर देखा और फिर दूर क्षितिज पर दृष्टि डाली ।

"मै कोई झूठ नही बोला, मेह पडेगा और जरूर पडेगा !" जमीदार ने दृढता से कहा ।

लेकिन अभी तक रावेल को वर्षा की कोई सभावना दिखाई नही दे रही थी । धूप वैसी-की-वैसी थी, गर्मी वैसी-की-वैसी थी, हर घडी बाद पानी पीने की आवश्यकता होती, दौड-दौड कर पेट दुखने लगता ।

बबूल के पेड तले खडे जमीदार ने एक फाख्ता मारी थी, जो अब उसके पैरो मे पडी हुई थी । "फाख्ताएँ तो सरकार आपके क़दमो में खुद ही आकर गिर पडती है," रावेल ने धीरे से कहा ।

दूर से शेरे की सीटी की आवाज़ आई । यह सीटी उसने अगुलियों से जीभ उठाकर ज़ोर से बजाई थी । जमीदार और रावेल ने उस ओर ताकना आरभ कर दिया और फिर रावेल दौड़ कर उधर चला गया ।

कुछ समय यूँही बेकार खडे रह कर जमीदर ने सामने पडी हुई फाख्ता की ओर देखा । जमीदार सोचने लगा—यह भी किसी की लडकी अथवा बहन होगी, किसी बच्चे की माँ होगी । इसका बच्चा

शायद घर मे चुगने के लिए इस की राह देख रहा होगा, इसके समय पर न आने से शोर मचा रहा होगा, चिल्ला रहा होगा और फिर उसे बहादुर की गली मे से निकलते हुए एक बच्चे के रोने की आवाज़ की याद आ गई। उसे धरेक-तले चारपाई पर पडा हुआ एक गोरा-चिट्टा गोल-गोल मोटी-मोटी भूरी आँखो वाला। जमीदार की अपनी आँखे भी भूरी थी, भूरी आँखे शेर की होती है, शेर जँगल का राजा होता हैं, जँगल मे लेकिन कोई शेर नही था, एकाध भेडिया शायद हो, और यदि मेरे यहाँ अकेले खडे-खडे कोई भेडिया आ जाय, तो भरी हुई बन्दूक तो उसने पकडी हुई थी, किन्तु अकेली बन्दूक काफी नही थी। वह फाख्ता मर चुकी थी, इन्सान का क्या है, साँस आया न आया, कोई फाख्ता को बन्दूक से मार सकता है और किसी व्यक्ति को भेडिया आकर दबोच लेता है। जुम्मा, जहाना, शेरा और रावेल आखिर कहाँ चले गये थे ? जुम्मा न हो तो कई काम रुक जाँय, जुम्मा बहुत अच्छा शिकारी था। जहाना तो शायद पिछले जहान मे कोई ब्राह्मण था, एक बार एक घायल मैना को देख कर रोने लगा, जमीदार के किसी भी गाँव में शायद ही कोई ब्राह्मण हो। इस इलाके मे यदि ब्राह्मण कभी थे तो बहुत थोडे, सिक्ख उनसे कुछ अधिक थे, सिक्खो की दुकाने थी। साहूकारा भी करते थे। मुसलमान हल चलाते, खेती-बाडी करते और सब शौक जमीदार के थे, एक व्यक्ति का अधिकार। उसके बाद उसकी लडकी इन गाँवों पर हुकूमत करेगी। नव्वाब को तो वह अपनी ओर से अलग कर चुका था। रेशमाँ शासन करेगी, किसी की पत्नी बनेगी, उसका पति उसे साथ नही ले जा सकेगा, रेशमाँ क्यो किसी की पत्नी बनेगी ? रेशमाँ के बच्चा होगा, फूल ऐसा मुस्कराता मोटी-मोटी आँखो वाला, भूरे रंग की आँखो वाला। बच्चा पेड-तले सो रहा था। उसके पास चारपाई पर उसकी माँ बैठी हुई थी जो घोडे की टाप सुन कर पेड़ के पीछे छिप गई थी। बच्चा जब कभी रोता है तो माँ-बाप की याद

करता हूँ।

कबूतरों की एक पक्ति पख फडफडाती बबूल के पेड के पास आ गई, ज़मीदार ने तत्काल बन्दूक तान कर दाग दी। कबूतर नीचे आ गिरे, और फिर ज़मीदार ने गले मे पडी हुई सीटी बजाई। जहाँ कही शिकारी खाइयो मे छिपे बैठे थे, वे सीटी की आवाज सुनकर अपना-अपना शिकार उठाते दौडते हुए आए।

"आपकी वर्षा तो अभी तक नही हुई ?" रावेल ने ज़मीदार को फिर याद दिलाया।

जमीदार ने फिर आकाश की ओर देखा—और फिर अधिक विश्वास के साथ कहा कि वर्षा होके रहेगी और इस बार उसने अपने अनुमान का प्रमाण भी दिया—सामने पहाडियो की ओर आँधी आई हुई थी, पछी उड-उड कर अपने बसेरो की ओर जा रहे थे, जभी तो उसने दो कबूतर मार गिराए थे। फिर सबने मिल कर जमीदार के निशाने की प्रशसा आरभ कर दी।

उन्होंने कुल तीन हिरण, सात खरगोश और बीस मुर्गाबियाँ मारी थी। एक गीदड बहुत मचल रहा था, जुम्मा झल्ला उठा, आखिर तग आकर उसने गीदड़ को भी ढेर कर दिया।

"वह देख! वह देख रावेल, आँधी चढ़ी जा रही है!" दूर—आकाश का रग बदल चुका था। ज़मीदार का विचार था कि पहले आँधी आयगी और फिर मेह बरसेगा। गर्मियो मे सदैव पोठोहार मे पहले आँधी आती है और फिर मेह पडता है।

साँझ हो रही थी, खेत के मज़दूरों को बुलवाया गया, शिकार को उन्होने बाँधा, घोडों पर पडे हुए झोलो मे सभाला और उन्हें चलता किया। स्वयं चलने से पहले उन्होंने सोचा कि वे पाँचों-के-पाँच ज़रा एक-एक घूँट पी ले, बबूल के पेड़ तले बैठकर शेरे ने बोतल का काग उडाया।

"अब मेरा क्या दोष रावेल, देखो न आँधी को क्या हो गया ?"

सामने पहाड—पीछे की रगत फैल कर हलकी पडती जा रही थी और यह रगत जितनी फैलती उतनी कम गहरी होती जाती।

फिर वे शराब पीने लगे। एक-एक घूँट के बाद दो-दो घूँट और फिर तीन-तीन घूँटो के बाद बोतल समाप्त हो गई। शराब का न तो कोई रग था और न कोई स्वाद, बस, जैसे किसी मादकता का रस निकाला गया हो, सबको एक मस्ती-सी एक लहर-सी आई। हवा अधिक तेज़ हो गई।

"देखा! कितनी शीतल पवन चलने लगी है?" ज़मीदार ने रावेल को फिर याद दिलाया—"और अब भी यदि वर्षा न हो तो जाय भाड मे। नदी पार माणले की ओर मूसलाधार वर्षा हुई होगी!"

शेरे ने एक बोतल और खोल ली थी, अब सभी ज़मीदार की हाँ-मे-हाँ मिला रहे थे, किंतु सबकी नजर बोतल पर लगी थी। पीते-पीते रात हो गई, शेरे ने तीसरी बोतल भी खोल दी और बता दिया कि उसके पास वह अतिम बोतल थी। तीसरी बोतल भी उन्होने समाप्त कर दी और रात अब बहुत अँधेरी हो चुकी थी। फिर वे अपने-अपने घर जाने को उठे।

गीदडो ने चारो ओर 'हुआँ-हुआँ' का शोर मचा रखा था, जैसे उनकी सेनाएँ उधर से इधर भाग रही हो! पत्थरो की खड़खडाहट भी काफी गूज रही थी। यदि गीदड चुप हो जाते तो जँगली कीडो का शोर अधिक स्पष्ट हो जाता, और सुहाँ की गूँज भी बडी भयानक थी। 'जराही' के समीप पानी के छोटे-छोटे पत्थरो पर से निकलने की मधुर-ध्वनि भी उन आवाजो मे सम्मिलित थी। पेड यो जान पड़ते थे जैसे पिशाच खडे हो, और जब शराब की तीन बोतले पीकर कोई घोडे पर चढ़ते तो यो जान पडता है जैसे पेड भी उसके साथ चल पडे हो। जहाना बार-बार अपना घोडा घोडो के बीच कर लेता।

कभी-कभी कोई गीदड उनसे थोड़ी-सी दूरी पर चीखने लगता। जैसे उन्हें ललकार रहा हो। और कभी-कभी कोई बिछुडा हुआ पक्षी

उनके सिरो पर से सरसराता हुआ गुजर जाता। जुगनू इधर-उधर झुंडों मे मँडरा रहे थे। जहाने का प्रस्ताव था कि आठ-दस जुगुनुओ को इकट्ठा किया जाय तो काफी रोशनी हो सकती है। जुम्मा कहता यदि इन्हे इकट्ठा किया जाय तो उनमे रोशनी नही रहेगी। शेरा नशे मे बदमस्त था, रावेल जुम्मे और जहाने मे सुलह करवाने की कोशिश कर रहा था। और जमीदार सोच रहा था—जब कोई बच्चा रोता है तो माँ उसे दूध पिलाती है, और पिता उसे क्या देता है? एक मोती किसी सराफ से गुम हो गया और किसी पथिक को सौभाग्यवश मिल गया, पथिक को उस मोती के मूल्य का क्या ज्ञान? जब कोई रोए तो उसे प्यार करना चाहिए, चूम-चाटकर उसे छाती से लगा लेना चाहिये, आँसू यूँही व्यर्थ नही बहने देने चाहिये। जब मै स्वय ऊँची आवाज मे रोने लगूँ तो फिर सम्भवत मुझे किसी का रोना सुनाई न दे। और यह भी हो सकता है कि दूसरा रोना बन्द कर दे। अधिक रोना तो ईश्वर को भी अच्छा नही लगता।

"अबे ओ ससुरे जहाने! तू रो क्यो रहा है?" सहसा जमींदार ने नशे मे चूर हुई आवाज मे उससे पूछा।

"नही सरकार, यह वारिश की बूँद मुँह पर पड़ रही है!" रावेल ने भी मदहोशी के स्वर मे जवाब दिया।

घोडे अपनी चाल से गाँव की ओर चलते रहे, चलते रहे।

तेली मोहल्ला !

६

तेली मोहल्ले के सभी लोग तेली कहलाते, किन्तु इसके अतिरिक्त एक-एक नाम और भी था—जैसे राजो भाखडी, लखन माऊचाला, दित्ता लेफाँ वाला, धन्ना सिन्ना, मीरु डन्ना, मानूँ कलगा, दीना गगडा, शरफूबरडा सरबर मट्टू आदि। प्रत्येक छोटे-बडे का कोई नाम रखा हुआ था, और लोगो की मिली-जुली सूझबूझ ऐसा नाम रखती जिसमे उनका सारा चलन प्रगट हो जाता, उसके चरित्र का चित्र खिच जाता।

तेली मोहल्ले में घर-घर कोल्हू थे। साँझ-सबेरे और दोपहर को हर समय बैल-कोल्हू चलते रहते। बैलो के गलो में पडी हुई घँटियाँ बजती रहती, जिस घर मे ये घटियाँ अधिक बजती वह घर अधिक सम्पन्न समझा जाता। उस घर की तेलिन के केश कम खुश्क होते, गली-मुहल्ले मे गुजरते समय उसके सिर का आँचल बार-बार फिसलता, कोल्हू के दिये का काजल उसकी आँखों मे सबसे अधिक गहरा होता। उसके पति के पट्ठो मे मालिश के कारण तेल रचा होता।

तेलन अक्सर साँवले रँग की होती, किन्तु शीशम के पेड के समान दृढ, न उन्हे घुन लगता न उनकी आयु ढरती, जैसा उनका यौवन होता वैसा ही उनका मँजा हुआ और तरोताजा बुढापा होता। तेलने अक्सर लडकियाँ जनती। उनकी बाहर रहने वाली सहेलियाँ कहा करती कि तेलियो के मन में हमेशा कोई-न-कोई स्त्री रहती, इसीलिए इनके यहाँ

लडकियाँ उत्पन्न होती है।

किसी युग मे लडके का पैदा होना तेलियो के यहाँ बहुत बुरा समझा जाता था। एक नौजवान तेलिन कहती थी कि वह फफरो के एक लडके के साथ भाग के ही रहेगी। उसे बहुत रोका गया किन्तु वह बाज न आई, माँ-बाप और पडौसियो ने उसे बहुत समझाया कि अपने से ऊँची जाति वाले लडके के साथ यदि ऐसा कर लिया जाय तो कोई हर्ज की बात नही, किन्तु फफरो की जाति तो बडी कमीनी है। यदि वह उस लडके के साथ भाग गई तो सारी बिरादरी की नाक कट जायगी, किन्तु उस लडकी ने एक न मानी और मुँह काला करके रही। उसके पिता ने भी आव देखा न ताव, सिर पर कफन बाध कर निकल पडा। ढूँढते-ढूँढते लगभग दो महीने हो गए उसे केवल इतना पता लगा कि लडका अमुक स्थान पर है। जाते ही उसने लडकी के दो टुकडे-टुकडे कर दिये और वे टुकडे बोरी मे डाल कर घर ले आया। इन दिनों जितना तेल तेली ने निकाला, उसमे उस "बदजात" लडकी के माँस-मज्जा का रस भी शामिल था।

लेकिन आजकल तेलिनो की बहुत चलती थी, जो उनके जी मे आता करती। तेली उन्हे रोक न सकते, कोल्हू चलाते-चलाते तेली अपनी औरतो के गुलाम हो कर रह गए थे। तेलिने बनी-ठनी रहती, तेली मैले-कुचैले चीथडो मे लिपटे रहते, बैलो को गालियाँ देते।

कोल्हू वाले कमरो की छते अक्सर नीची होती। एक छोटी-सी खिडकी गली की ओर खुलती। एक नीचा दरवाजा दालान की ओर होता, जिसमे से बैल भीतर-बाहर आ-जा सकते। खिडकी से पट खोल कर तेली तेल बेचते, खली या सौदा करते, और यदि किसी ने कोल्हू के कमरे के धुधलके में आना होता तो वह उसी मार्ग से भीतर आ जाता।

फजला के बाप को जब खेती-बाड़ी की उमग उठी तो उसने हल

बनवाया। बैलो की एक जोडी खरीदी और दिन भर खेत पर रहता। दोपहर को उसकी पत्नी छाछ के साथ भोजन लेकर उसके पास चली जाती और रानी बिटिया घर मे अकेली कोल्हू का धधा किया करती। उन्ही दिनो मौले के साथ उसकी जान-पहचान हुई, कभी वह तेल लेने आता था कभी वह खली खरीदने आता था, वह एक सुन्दर नवयुवक था। एक बार उसने अपना हाथ जो आगे बढाया तो फजला को यूँ लगा जैसे उसने कगन पहना हुआ हो—वह काँप-सी गई।

राजपूतो का लडका मौला हर दूसरे-तीसरे दिन खिडकी मे आकर झाँकने लगता। फजला दोपहर को खिडकी के पट खोल के रखती। कुछ दिन यू ही होता रहा, यू ही चलता रहा। एक दिन जैसे आप-ही-आप मौले का सिर खिडकी के भीतर आ गया और फिर जैसे आप-ही-आप उसका धड भीतर आता गया। फिर उसकी एक टाँग भीतर आई, फिर उसकी दूसरी टाँग, और फिर कोल्हू वाले ठडे कमरे मे खडे-खडे वह पसीना-पसीना हो गया।

मौले की माँ तेलिन थी, मौला बिल्कुल अपनी माँ पर गया था। उसे विश्वास था कि उसका राजपूत-पिता कुढ कर, जल-भुन कर आखिर चुप हो जायगा।

फजला जब रात को माँ के साथ एकात मे हुई तो उसके आँसू न रुके, उसका पिता बाहर तकिये की ओर गया हुआ था, वह रोती जाय, रोती जाय, आखिर उसने माँ को सारी बात बता दी और माँ ने उसे सीने से लगा लिया। उसे चूमा-चाटा और समझाने लगी—"इन बडे आदमियो के लडको का विश्वास नही किया करते!"

किन्तु जब फजलाँ ने हाथ जोडे तो वह बोली—"अच्छा, जैसी तेरी इच्छा!"

माँ ने वचन दे दिया।

और जब किसी तेलिन की माँ न मानती तो लडकी देखते-देखते कही खिसक जाती। राजपूतो के लडको के साथ तेलिने हसी-खुशी

भागने पर तैयार हो जाती और उनके लिए दर्जनो बच्चे जन देती।

जब नज़ीरा पर यौवन टूटा तो उसकी माँ बाहर जाते हुए दरवाजे के आगे एक रेखा खीच जाती। नजीरा हैरान थी कि लडके उधर से आते-इधर गुजर जाते, इधर से आते उधर गुजर जाते, कोई उसकी ओर आँख उठा कर न देखता। लेकिन जब उसकी माँ घर आती तो लोग उनके दालान मे आ घुसते, हँस-हँस कर उसकी माँ के साथ बाते करते और चोरी-छिपे नज़ीरा को घूरते रहते। उसकी माँ पूरे दो वर्ष तक यह रेखा खीचती रही। और पहले ही दिन जब वह यह रेखा खीचना भूल गई तो एक घटे के बाद घर लौट कर उसने देखा कि नज़ीरा वहाँ नही थी। उसने सिर और छाती पीट कर अपनी दुर्दशा कर ली,उसके पिता ने पोठोहार का चप्पा-चप्पा छान मारा किन्तु नजीरां कही न मिली।

एक बार मोचियो के एक लडके पर पेम का भूत सवार हुआ। काम-काज छोड कर तेली मोहल्ले के चक्कर काटने लगा। लडका अच्छे रूपरग का था, लडकियो को उसके आने-जाने पर कोई आपत्ति नही थी। आठ-दस दिन और बीत गए और उनमे से एक उसके साथ भाग जाने के लिए भी तैयार हो गई। तेलिने थी भी तो बे-शुमार। गक्खड़ राजपूत और तेली चार-चार तेलिने ब्याहने के बाद भी उन्हे समाप्त नही कर सकते थे। और तेलिनें तो अभी और उत्पन्न हो रही थी, जवान तेलिनो को मोची और मिरासी भी भले लगते थे, किन्तु तेली यह सहन नही कर सकते थे। जब उन्हे पता चला तो वे मार्ग रोक कर बैठ गए, मोचियो के लडके को पकड कर कोल्हू के साथ जकड दिया और दो दिन तक उससे कोल्हू चलवाते रहे। तीसरे दिन जब पुरुष इधर-उधर हुए तो तेलिनों ने मिलकर एक सलाह की, मोची के लडके को जो भी देखती वह उसके विरुद्ध कुछ भी न कह सकती।

"यदि तुमसे कोई लडकी उसके साथ जाने को सहमत नही, तो

मै स्वय उसके साथ जाने को तैयार हूँ," एक अधेड-आयु की चौधरानी बोली और सब हँस पडे ।

उस दिन साँझ को जब पुरुष बाहर तकिये की ओर गए, तो स्त्रियो ने मिलकर दोनो घरो की खिडकियो के पट तोड दिये, मोची के लडके को एक लडकी देकर भगा दिया, और दूसरे दिन दु ख से हाथ मल कर बातें करने लगी कि लडकी और लडका खिडकियाँ तोड कर भाग गए।

हर पुरुष के पीछे आठ तेलिनें थी। जो तेल खाती, तेल मलती, उनके अग-अग मे तेल रचा हुआ था। लडकियाँ गिरोहो मे बाहर निकलती, शाम को कोठो की मुँडेरो पर बैठ कर ऊधम मचाती, पुरुषो से ऐसी दिल्लगी करती, लडको पर हँसती जैसे गाँव मे उन्ही का शासन हो।

जुम्मा जाति का तेली था। कई वर्ष हुए उसने यह काम और इस मोहल्ले मे रहना छोड कर जमीदार की नौकरी कर ली थी, और अब वह जमीदार के खास कर्मचारियो मे गिना जाता था ।

कहते है—यौवनकाल मे जुम्मा बहुत सुन्दर युवक था। वह लबे-लबे बाल रखता, उसका रग गोरा था, उसका शरीर इतना गठीला था कि उस पर से दृष्टि फिसलती। जिधर से गुजर जाता तेलिनो का फिर दिनभर काम मे जी न लगता। जहाँ चार लडकियाँ सिर जोड कर बैठती, वहाँ जुम्मे की ही चर्चा होती। प्रत्येक नौजवान तेलिन के स्वप्नो मे जुम्मा होता, नौजवान तेलिन के गीतो मे जुम्मा होता। जुम्मे को एक बार ज्वर चढा तो लडकियाँ चुपके-चुपके रोती और मिलकर उसके लिए दुआएँ मागती। अपनी-अपनी जगह हर लडकी जुम्मे पर जान दे रही होती, उसकी प्रत्येक दृष्टि और प्रत्येक हँसी को प्रत्येक लड़की अपने लिए समझती और छलक-छलक पडती ।

किन्तु जुम्मा किसी के हत्थे न चढा, उसकी मित्रता राजपूतों के लड़को से थी। उसका अधिक समय गक्खडो की गलियो मे गुजरता। एक दिन पांच-सात अल्हड जवान लडकियो ने सलाह की, और जब

दोपहर को जुम्मा उनकी ड्योढी के आगे से निकल रहा था, तो वे उसे घेर कर, बलपूर्वक भीतर खीच कर ले आई और ऊपर से उन्होने दरवाजे को सकल लगा दी । जुम्मे ने बडे हाथ-पॉव मारे, क्रोधित भी हुआ, किन्तु दो लडकियो ने उसके मुँह पर कपडा बाँध दिया और शेष लडकियो ने जी भर कर उसे छेडा, उसे तग किया । उसे राजपूत-लडकियो के ताने दिये, उसे बार-बार गर्वीला कह कर लज्जित किया । एक उठी और उसने उसके सँवारे हुए केशो को बुरी तरह उलझा दिया, दूसरी आई उसने उसके गालो को चुटकियाँ भरके उन्हे जोर से खीचा, उसके गाल लाल-सुर्ख हो गये, और फिर दोनो ने आप-ही-आप रोना आरम्भ कर दिया—कुछ लडकियाँ उन दोनो पर हँसती, कुछ लडकियाँ जुम्मे पर हँसती और कुछ लडकियाँ चक्कर मे थी, उनकी समझ मे कुछ न आता कि वे क्या करे और क्या न करे । आखिर एक ने कघी लेकर उसके बाल सुलझाने आरम्भ किये, दूसरी उसके गले मे बाँहे डाल कर उसके पास बैठ गई, एक और उसके दूसरी ओर आ बैठी, और फिर लडकियो ने जुम्मे के मुँह पर बँधा हुआ कपडा खोल दिया । एक ने नेवाडी पलग पर चादर बिछा कर उसे उस पर बिठा दिया और सब मिलकर उसके सामने गाने लगी, गाते-गाते उन्होने नाचना आरम्भ कर दिया, नाचते-नाचते वे लोटपोट हो रही थी, जुम्मा हक्का-बक्का बैठा रहा, उसकी समझ मे नही आ रहा था कि वह क्या करे और क्या न करे ।

एक और लडकी थी नूरी । वह एक अमीर तेली की बेटी थी, केवल वही आज तक जुम्मे को नजरो मे नही लाई थी । वह सौंदर्य मे जुम्मे से बढ-चढ कर थी, कई बार दोनो की आँखें चार हुई और दोनो मूक-निश्चिन्त खडे रहे, किसी का हृदय किसी के लिए न पिघला ।

वे एक दूसरे की रूप की कहानियाँ सुन लेते और सुनी-अनसुनी कर देते, सप्ताह, मास और वर्ष व्यतीत हो गए । आखिर नूरी को यह शिकायत रहने लगी कि जुम्मा तो राजपूतों और गक्खडों के यहाँ झख मार

आता है। नूरी एक अल्हड युवती थी, वह आखिर कहाँ जाय ? वह जुम्मे की इस स्वतन्त्रता पर कुडती रहती। वह सोचती कि जुम्मा अपने मुहल्ले में रहे, अपनी बिरादरी मे उठे-बैठे, और फिर वह यदि उसकी परवाह न करे, तो वह उसकी जीत समझेगी और अपनी हार मान लेगी।

कुछ समय के बाद नूरी का क्रोध बढने लगा, हर घडी उस पर क्रोध का भूत सवार रहता, हर घडी जुम्मा जैसे उसके विचारो मे समाया हुआ हो। नूरी अपने को घर के कामो मे लगाए रहती। जितना वह जुम्मे को भुलाने की कोशिश करती वह उसे उतना ही याद आता। कई बार तग आकर उसके आँखो मे आँसू भर आते, कितने-कितने दिन नूरी से खाया-पिया न जाता, मैले-कुचैले वस्त्रो मे पडी रहती। एक बार साँझ को द्वार की चौखट पर वह सिर डाले खडी थी कि जुम्मा उधर से निकला, दोनो ने एक दूसरे की ओर देखा—जुम्मा उपेक्षा से आँखो से ओझल हो गया, इसी प्रकार एक दिन और यूँही हुआ, वह अकेली छत की मुँडेर पर बैठी थी।

इस प्रकार कुछ दिन और बीत गए। एक दिन नूरी को पता लगा कि जुम्मा घर मे बैठा हुआ है। उसके घर के और लोग बाहर गए हुए थे। नूरी ने अपने बाल सँवारे, मिस्सी मली, दाँत निखारे, होंठो पर ददासा मला, रेशमी जोडा पहना, सिर पर मलमल का डुपट्टा लिया और चुपके से अपने घर के पिछवाडे से निकल कर जुम्मे के घर में जा घुसी।

जुम्मा मोढे पर बैठा गुलेल बना रहा था। नूरी ने जाते ही रबड उसके हाथो से छीन लिया और उसे दोनो कधों से पकड कर उसकी आँखो मे अपनी आँखे डाल दी— 'तू बस यही चाहता था ?" उसकी आँखे जैसे उससे कह रही थी—"तू बस यही तो चाहता था कि मै हार मान कर तेरे पास आऊं, मै तुझ पर कुर्बान जाऊँ—तुझसे प्यार करूँ, मै तझसे आकर कहूँ कि तेरी याद मुझे दिन-रात रुलाती है ? खाना-

पीना, सोना-पहनना मुझे भूल गया है। तू पुरुष है, सारी तेलिनें तुझ पर जान देती है, तू जाकर राजपूतों के साथ मित्रता गाँठता है।" फिर नूरी ने जोर-जोर से उसे कधो से झिझोडा—"मैंने कहा, चलके देखूं तो सही कितना सुन्दर है?" अब नूरी ने बोलना आरम्भ किया—"तेरे मिजाज का ही पता नही लगता—तेली होकर तू गक्खडो की गलियों में झख मारता फिरता है? क्या मुझे तूने अपनी बिरादरी से बाहर जाते देखा है? यहाँ लाख रजवाडे अपना सिर फोड कर जा चुके है।"

क्रोध से नूरी का मुँह लाल हो गया, और कुछ समय तक वह उसे यूँही कधो में पकडे हुए आँखें फाड-फाड कर देखती रही।

आखिर एक झटके के साथ नूरी ने उसके कधे छोड दिये और चुपचाप ज्यो-की-त्यो वहाँ से चली आई, जुम्मा हैरान होकर उसकी ओर देखता रहा, देखता रहा।

उस दिन के बाद जुम्मे का कही दिल न लगता, पागलो के समान घूमता रहता। आखिर केवल रोटी-कपडे पर उसे जमींदार के अस्त-बल में सिर छिपाने को स्थान मिल गया। जुम्मा हर घडी अपने काम में लगा रहता, सरकार उसपर अत्यन्त प्रसन्न थे। सरकार की बेगमें उससे बहुत प्रसन्न थी, जुम्मा उन्नति करता हुआ सरकार के विशेष कर्मचारियो मे से एक हो गया।

उस दिन से जुम्मा जहाँ तक हो सकता, तेली मोहल्ले में न जाता। अपना घर, माता-पिता, जुम्मे ने सब कुछ छोड दिया।

उस दिन से नूरी अपने काम के समय काम करती, खाने के समय खाती, सोने के समय सोती, खेलने के समय खेलती, हँसती और ऊधम मचाए रहती।

तेली मुहल्ले की चहल-पहल वैसी-की-वैसी बनी रही।

तिल चावली !

१०

रेशमा तेरह वर्ष की हो चुकी थी ।

कुछ समय से जमीदार ने एक नौजवान-विधवा पर दया करके उसे रेशमा के लिए दासी रख लिया था। नेका सैयदो की लडकी थी । अत्यत सुंदर और कोमलांगी । वह रेशमा से लगभग दस वर्ष बडी थी। किन्तु उसके साथ उठती-बैठती, खेलती-हँसती और खाती-पीती, बिल्कुल रेशमा जैसी बन जाती । रेशमा, रेशमा की धाय और नेका, यह एक छोटा-सा ससार था । जमीदार को रेशमा का किसी और के साथ मेलजोल पसद नही था । जबसे रेशमा ने होश सभाला था, नव्वाब और उसकी पत्नी से भी बहुत कम मिला करती । शेष हवेली के नौकर-चाकर रेशमा के चौबारे की ओर बिल्कुल आ ही नही सकते थे ।

गरमी के दिनो मे एक दोपहर को जमीदार की दृष्टि नीचे पडी तो उसने देखा—नेका एक थाल मे भीगे हुए कच्चे चावल बाट रही थी । हवेली की प्रत्येक स्त्री को मुट्ठी भर चावल दिये जाती और स्त्रियाँ आगे से मुसकरा कर उसे आशीष देती ।

चावल लेकर स्त्रियाँ चावल फाँकती, रस चूस कर फिर एक-दूसरी पर फूँकती । उन्होंने सारा आँगन दूधिया श्वेत कर दिया । इतने में मालिन मोतिये से झोली भर लाई । दालान मे कुछ स्त्रियों ने मिल कर फूलो की एक चादर बनाई, हार पिरोए, गजरे गूँथे और रेशमा की धाय के हाथो चौबारे मे भिजवा दिये । फिर वे ढोलक लेकर बैठ गईं और दोपहर भर गाती रही ।

शाम को रेशमा की धाय जमीदार के पास गई—क्षणभर के लिए रेशमा का ढोलक-वालियो के पास आना अत्यन्त आवश्यक था।

"नेका आज यह चावल कैसे बाँट रही है ?" जमीदार ने दोपहर की गुत्थी सुलझाने के लिए पूछा।

"इसे तिल-चावली कहते है, यह मेरी रेशमा की तिल-चावली है !" शेष सब बातें न बताते हुए भी बूढी स्त्री ने अपनी भगिमाओ से सब-कुछ बता दिया।

कुछ समय उपरात रेशमा नीचे उतरी, ढोलक और जोर से बजाई गई। स्त्रियाँ उच्च-स्वर मे गायी।

आखिर धूप जला कर उसकी धूनी रेशमा के सिर पर सात बार घुमाई गई और कुछ स्त्रियो ने बारी-बारी उसका माथा चूमा। फिर उसे ऊपर भेज दिया गया।

रेशमा सारा दिन व्यग्र-सी रही, उसे अपना-आप जैसे पराया-पराया अनुभव होता। किसी वस्तु को छिपाने के लिए उसका दिल चाहता किन्तु वह आप-ही-आप जाहिर हो जाती। उसका हृदय विकल होता, वह चाहती कि उसकी धाय चली जाए, नेका आँख से ओझल हो जाय। अकेली अपने कमरे के अधकार मे वह पडी रहे, पडी रहे।

सबेरे जब उसकी आँख खुली तो रेशमा का उठने को जी न चाहा, वह लेटी रही, लेटी रही। फिर उसने रोना आरभ कर दिया, आज रेशमा को माँ की आवश्यकता अनुभव हो रही थी। रोए जाती और माँ को आवाजें दिये जाती, उसकी धाय और नेका दौडती हुई आईं। धाय ने उसे गले से लगा लिया, चूमा-चाटा और धीरज बँधाया, फिर दोनो मिल कर कितनी देर तक उसका अग-अग दबाती रही। धाय को नीचे किसी काम भेज कर नेका ने रेशमा को सारी बात समझाई और उसे अपनी जिम्मेदारी से सूचित किया।

अगली चाँदनी रात थी। आधी रात गए तक रेशमा फूलों से लदी रही, मोतिये की सोधी-सोधी सुगधि में जैसे वह मदमस्त हुई जा

रही थी। फूलो की कोमलता वह छू-छू कर अनुभव करती।

भुजाओ पर और बालो मे गजरो को उसने टाँका हुआ था। वह फूलो की चादर अपने अक मे भर लेने का प्रयास करती, कभी उसे नीचे बिछाती और कभी ऊपर ओढ लेती।

सारा दिन रेशमा का दिल चाहता कि वह लेटी रहे और नेका उसे कहानियाँ सुनाती रहे। आजकल उसे राजकुमारो की कहानियाँ बहुत भाती थी। शाह बहराम, जिसे परियाँ उठा कर ले गई थी, फरहाद जिसने पहाड खोद-खोद कर नहर निकाली थी, बार-बार वह पूछती कि रांझा हीर के पलग पर कैसे चुपके से आकर लेट गया था, और फिर जब क्रोध मे लाल-पीली हीर फुकारती आई तो—राझे ने उठ कर कहा—"वाह सजनी" और हीर हसती हुई उसपर मेहरबान हो गई। या फिर रानी सु दराँ ने 'पूरण भगत' को मोतियो के थाल की भीख कैसे दी थी ? रेशमा को ये किस्से बडे अच्छे लगते थे, मिर्जे का पेड-तले बैठ कर सो जाने के विषय मे जब वह सोचती तो उसकी हँसी निकल जाती। नेका को ये सब किस्से कण्ठस्थ थे और वह दिन भर इकतारे की झकार मे गाती रहती, गाती रहती।

रेशमा अब दिन-प्रति-दिन कुछ से कुछ हुई जा रही थी, अपने कमरे मे रखी हुई वस्तुओ को क्रम से बदलती। उसे अपने शैशवकाल की वस्तुएँ अनावश्यक प्रतीत होती, वह दूधिया चादरे बिछाती, फर्श धुलवाती, उनपर नया लेप करवाती। जब बेकार होती तो फूलो से खेलने लग जाती, नए-नए पौधे मगवाती, रगबिरगे बीज इकट्ठा करती, फूलो के गमले दालान मे रखवाती।

उसे साँझ-सबेरे अपना शरीर बढता हुआ दिखाई देता, उसे वस्त्र अपने शरीर पर तग अनुभव होते, सिकुडे-सिमटे रहते। उसके हाथ जब उसके केशो से टकरा जाते तो उसे काली घटाओ और कुछ इसी प्रकार के बोल वाले गीत याद आ जाते। वह धीरे-धीरे बोलती—धीरे-धीरे चलती। अत्यन्त कोमलता से मुसकराती। उसकी आँखो से एक

शीतलता-सी, एक मादकता-सी टपकती। उसके ललाट से एक आभा-सी फूटती। वह नखशिख तक एक नशे में रहती।

रेशमा का आँचल उसके सिर पर न ठहरता। उसके बदन पर उसकी कमीज सटी-सटी-सी रहती। रेशमा अत्यत विकल हो जाती।

अपनी धाय से उसे लाज आती, उससे दूर-दूर रहती। धाय आज-कल प्राय उसके खाने-पकाने और पीने-पिलाने आदि मे लगी रहती। नेका उसके समीप होती जा रही थी, उसके अन्तर मे समा रही थी। पलग पर लेटे-लेटे वे दोनो कभी-कभी सारा-सारा दिन प्यारी सखियो की भाति खुसर-फुसर करती रहती। नेका से रेशमा ने उसके कँवारेपने की कहानी सुनी। फिर उसके विवाह की गाथा सुनी, रेशमा जैसे एक नए ससार में बसने लगी।

फिर भी रेशमा का कभी-कभी जी चाहता कि उसे अकेली छोड दिया जाय और खडी होकर वह बिना किसी कारण के आए हुए आँसू पोछ ले और उससे कोई यह न पूछे कि उसकी आँखें लाल क्यो हो रही थी।

शाम को दूर—बहुत दूर—फस्लो मे ऊँचे स्वरों मे गाए जाते हुए गीत वह कान लगा कर सुनती और कई बार उसका अग-अग, बद-बद काँप उठता।

"तिल चावली"—"तिल चावली"—बार-बार ये बोल जमीदार के कानो मे गूँज उठते। रेशमा बडी हो रही थी, जमीदार सोचता कि वह उसका विवाह कैसे करेगा, कैसे रेशमा की बरात आयगी, और अपनी लडकी का हाथ वह किसके हाथ में देगा। रेशमा के चले जाने के बाद जमीदार को अपने जीवन का एक भाग खाली-खाली जान पडता और रेशमा का चौबारा उसे खाने को दौड़ता।

जिस प्रकार जगल मे शेरनी हर जानवर को खाती, मारती, घायल करती, नोचती, झझोरती और ईर्ष्यालु होकर, अपने शिशु का मन बहलाती है, अपने कोख से निकले हुए माँस के लोथडे के लिए जैसे उसके भीतर

एक स्वर्ग-सा बस जाता है, बिल्कुल उसी प्रकार एक हिसक और जलील जीवन बिता कर जमीदार जब घर लौटता, सामने रेशमा की खिडकी देख कर उसे अपना-आप मैला और गदा लगता। वह बार-बार अपने को धोता, बार-बार कपडे बदलता। उसके अन्तर की कालिमा रेशमा की मधुर-मधुर बाते ही धो सकती, कई बार वह फूट-फूट कर रो पडता। रेशमा की आँखो मे भी आँसू आ जाते। बच्चे को खेलाने के लिए जमीदार बच्चे की माँ की बात छेड देता, उसकी जी भर कर प्रशसा करता, प्रशसा करते समय वह थकता नही था, किन्तु जमीदार जितनी रेशमा की माँ की प्रशँसा करता उतना ही वह अपने-आपको कोसता कि किस प्रकार यातनाए दे दे कर उसने उसे मार डाला था। जितना समय भी वह जीवित रही, उसका व्यवहार उसके साथ कसाइयो का-सा रहा। और जब वह मर रही थी तो उसने रेशमा को चूमकर जमीदार के हवाले किया और रुकते हुए साँस के साथ जमीदार की ओर अतिम बार देखा। जैसे उसकी आखे कह रही हो कि मैंने तेरे सारे दोष क्षमा कर दिये, तू मेरी ओर स बिल्कुल निर्दोश है, लेकिन यह मेरी धरोहर तेरे हवाले है। इसके दिल पर कभी कोई चोट न लगने देगा। अपनी यह धरोहर मे समय आने पर तुझसे लौटा लूँगी। और यदि तूने यह धरोहर खो दी तो तेरी बुरी दुर्दशा होगी—और फिर रेशमा की माँ ने अपनी आँखे बद कर ली।

उस समय रेशमा छोटी-सी थी, बिल्ली के बच्चे के समान। उसे धायो ने पाला-पोसा, जमीदार ने उसे प्राणो से अधिक प्रिय समझा उसकी खुराक, उसके रहन-सहन और उसके सोने-जागने का स्वय ध्यान रखता तथा कभी उपेक्षा न होने देता।

उस दिन शाम को जमीदार से मदिरापान न हो सका। उसके चारो-के-चारो गुडे कर्मचारी हैरान थे, वह बार-बार गिलास अपने होठो तक ले जाता किन्तु एक घूट तक उसके कठ से नीचे न उतरा। एक थाल मे भीगे हुए चावल डाले—उन चावलो को बाँटती हुई एक स्त्री का चित्र उसकी आँखों के सामने घूमने लगता, फिर एक दूसरी पर स्त्रियो का

चावल बिखेरना, फिर हारो का पिरोया जाना, फिर ढोलक का बजना फिर रेशमा का एक फूल के समान एक दालान मे आकर बैठना—यह सारे-का-सारा दृश्य जमीदार को एक आनन्द मे भर रहा था।

जुआ खेलने के लिए भी ज़मीदार सहमत न हुआ। बाहर सैर को जाने के लिए भी उसका जी न चाहा, अच्छे-से-अच्छे मजाक पर भी उसे हँसी न आई, आखिर एक-एक करके उसके गुंडे खिसक गए।

पलग पर अकेला लेटा हुआ जमीदार जैसे चिता मे निमग्न था—उसकी रेशमा चमेली की एक कली थी, दिन को यह गीत भी स्त्रियो ने गाया था। बहादुर की गली में धरेक वाले दालान मे मोतिया कितना खिला हुआ था। पिछली बार जब वह भेस बदल कर उधर से निकला, भागभरी का बालक "सिपाही-सिपाही" खेल रहा था, और आप थानेदार बना हुआ था। यदि कही उसके पीछे सिपाही बने हुए बालक चोर-चोर, कह कर भागते, तो उसे कम-से-कम क्या दण्ड दिया जाता, भागभरी के बच्चे के कधे दृढ थे। उसका डीलडौल कितना सुदृढ था, अपनी आयु के बालको में सरदार जान पडता था। रेशमा दिन भर नेका के साथ रहती थी, नेका नमाज पढने वाले सैयदों की लडकी! पति के मरने पर उसने विवाह न किया—यह शरीर अब किसी दूसरे को नही दिया जायगा! उसने कहा था।

रेशमा की धाय अब बडी आयु की हो चुकी थी, कभी कुछ और कभी कुछ, उसे कोई-न-कोई रोग सदैव लगा रहता। कही मर ही न जाय—जमीदार ने असख्य स्त्रियों को मरते हुए देखा था, लोग कई प्रकार की मौत मरते है।

और इस प्रकार सोचते-सोचते उसकी आँख लग गई, अभी रात कोई अधिक नही बीती थी।

स्वप्न मे ज़मीदार ने देखा—रेशमा की माँ अपनी कब्र में से निकल कर एक कली के समान फूट पड़ी है। अभी उसका यौवन अछूता है, कामिनी है, और वे दोनो जैसे कही दूर जा रहे थे, जहाँ

शराब की नदियाँ बहती हैं। जहाँ मखमली घास की सेज बिछी हुई है। मार्ग मे ज़मीदार को जहाना मिल जाता है और उसके घोडे की बाग थाम लेता है।

पसीने-पसीने होकर ज़मीदार की आँख खुल गई, सारी रात करवट बदलता रहा और उसके बाद उसे नींद न आई।

सबेरा होते ही उसने रेशमा को बुलवाया—"यहाँ तो चारो ओर सुगधि-ही-सुगधि है!" उसने आते ही पहली बात यही कही, वास्तव मे सुगधि उसे अपने आप से आ रही थी। जमीदार ने बच्ची को समझाया, फिर उसने सोचा, शायद सच ही कहती हो, क्योकि वह रात भर फूलो मे बसा रहा था।

"आज मै आपको अपने हाथ से बना हुआ पुलाव खिलाऊँगी, मुझे नेका ने पुलाव बनाना सिखलाया है।" रेशमा ने जाते हुए जमीदार से कहा।

"चावलो का पुलाव!" जमीदार की बाँछे खिल गईं और उसने रेशमा का माथा चूम लिया।

पुल-पार

११

पुल-पार एक जोगी आया हुआ था, 'जसपाला' के गाँव मे। गाँव के बाहर की ओर लगभग दो फर्लांग पर एक नदी थी, इस नदी पर एक टूटा-फूटा पुल था, पुलपार कदराएँ थी, इन कदराओ मे उतरे हुए जोगी की चर्चा सारे गाँव मे फैल चुकी थी।

जोगी के कान छिदे हुए थे, जिनमे छोटी-छोटी बालियाँ थी। उसने सारा सिर घुटवा रखा था, किन्तु उसने दाढी खूब बढाई हुई थी। गेरुए वस्त्र पहने हुए एक माला सदैव उसके हाथ मे होती। उसकी आँखे अक्सर मुँदी-मुँदी-सी रहती। कभी बात करता कभी न करता, लोग प्रतीक्षा करते-करते उठ कर चले आते। उसका चेहरा अंगार के समान दहक रहा था, उसके दर्शन करके हिंदू, सिक्ख, मुसलमान सभी कृतकृत्य हो जाते। चिलचिलाती दोपहर मे कभी-कभी वह धूनी सुलगा कर बैठ जाता और आग के अलाव के पास निश्चल पड़ा रहता।

वह बहुत कम खाता और नमक अथवा चीनी उसमे भी न डालने देता। एक दिन उसने बराबर पच्चीस दिन तक निराहार साधना की, हर घडी दिन-रात कदरा मे बैठा हुआ माला जपता रहता। मुँह अँधेरे नित्यकर्म से अवकाश पाने के लिए बाहर निकलता, फिर भी कोई उसके सामने नही आ सकता था। उसके लिए दूध आदि कदरा के बाहर एक बरतन मे रख दिया जाता। किसी दिन तो वह अपना खाना बर्तन से उठाकर ले जाता और किसी दिन ज्यों-का-त्यों वही पड़ा रहता।

इन दिनो लोगो को कई बार कदरा के भीतर से ढोलक और चिमटो की आवाज आई। बातें करके और ऊँचे-ऊँचे हँसने की आवाज आई। लोग कहते कि भीतर देवता उतर कर जोगी के साथ वार्तालाप करते थे और उसके साथ खेलते थे।

पच्चीस दिन के बाद जब जोगी बाहर आया, जितने भी लोग उसकी प्रतीक्षा मे थे—सबके सब काप-से गए। उसके मस्तक पर एक अवर्णनीय आभा जगमगा रही थी, उसके अग-अग से भीनी-भीनी सुगधि फूट रही थी।

सदावर्त लगा दिए गए, असख्य-लोग जोगी के दर्शनार्थ आए। जोगी का चमत्कार दूर-दूर तक फैल गया। साँझ-सबेरे, दिन-रात लोग कदरा की ओर जाते दिखलाई देते, वर्षो की बाँझ स्त्रियाँ सतान के लिए जाती, रोगी अपनी रोग-निर्वृत्ति के लिए माथे रगडते। ग्रामीण स्त्रियाँ अपनी साधारण-सी कामनाएँ लेकर चल पडती, पुरुष बडे-बडे मुकद्दमे जीतने और शत्रु-नाश के लिए जोगी के आसीस लेने जाते। लोगो के दावो से कदराएं भर गई, दर्शनार्थी वे वस्तुएँ ले लेकर जाते, किंतु श्रद्धालुओ की श्रद्धा और चढावा समाप्त होने मे ही न आता।

कदरा की निचली-धरती मे एक बागीचा बनना आरभ हो गया, ऊपर एक तालाब बना, चारो ओर चहल-पहल रहने लगी। कुछ समय बाद श्रद्धालुओ की संख्या कम होने लगी। लोग कहते थे कि मार्ग मे जो नदी आती थी वहाँ भूतप्रेत आ गए थे। और कदरा की ओर जाते हुए लोगो को रोकते थे। ज्यो-ज्यो यह समाचार फैलता त्यो-त्यों लोगो का आवागमन कम होता जाता। कई स्त्रियाँ, जो अकेली-दुकेली, समय-कुसमय उधर से गुजरती उन पर भूत-प्रेत टूटने लगते। कई पुरुषो पर चुडैल ने आक्रमण कर दिया, एक-दो स्त्रियाँ तो चुडैल के आतक से सारा दिन नदी मे मूर्छित पडी रही, एक की गोदी मे बच्चा था, जिसने दम तोड दिया।

आतक इतना बढ गया कि गाँव से बारी-बारी एक व्यक्ति जोगी के

लिए साँझ-सबेरे खाना लेकर जाता। अक्सर लोग शिकायत करते कि भूत आकर जोर से तमाचा मारता है। एक शाम जो लडका दूध लेकर गया, वह फूट-फूट कर रोए और लौटने का नाम न ले, कह रहा था कि भूत ने मुझे तमाचा मारना चाहा कि वह दौड पडा और दौडता-दौडता टीले पर चढ गया।

जोगी ने उसे बहुत समझाया, किन्तु उसने एक न मानी। आखिर जोगी ने उसकी दाई हथेली पर कालिख लगा दी और कहा कि जब भूत उसके समीप आए तो वह कालिख उसके मुँह पर मल दे, फिर वह उसे कुछ नही कहेगा।

जरा-जरा अँधेरा हो चला था। डरता, झिझकता और काँपता लडका कंदरा से नीचे उतर आया। थोहर, हरमल और बेरो की झाडियो मे जो पत्ता भी हिलता तो वह चौक उठता। पानी मे से सहसा एक मेढक टर्राने लगा, अभी मेढक ने आवाज ही दी थी कि लडके के पाँव लडखडा गए और वह कठिनता से गिरते-गिरते बचा। फिर पानी के चलने का स्वर यो सुनाई देता जैसे कही चाँदमारी हो रही हो, किड-किड फिर किड, जैसे गोलियाँ चल रही हो। नदी-पार का प्रत्येक पेड उसे भूत या पिशाच दिखाई देता, प्रत्येक पत्थर और प्रत्येक शिला उसे यो मालूम होती जैस कोई लेटा हुआ हो, कोई बैठा हुआ हो, कोई उड रहा हो। दूर से एक-एक अग उसे अलग-अलग मालूम होता, किन्तु ज्यों-ज्यो वह समीप आता जाता उसे प्रत्येक अग यो जान पडता जैसे झड रहा हो, और बिल्कुल पास पहुँच कर वह वस्तु एक पत्थर-सा होकर रह जाती।

जोगी ने जान-बूझ कर लडके को पुल पर से जाने की आज्ञा नही दी थी। पुराने पुल की दशा बिल्कुल बिगडी हुई थी और जोगी को भय था कि पुल मे पडी हुई दराड़ों मे से कही लड़का नीचे न गिर जाय।

पानी की एक छोटी-सी धारा को उलांघते हुए लडका उसे पार

कर गया। सामने की चढाई पर कदम रखते समय उसका साँस तेज होता जाता, कई स्थानो पर उसने ठोकरे खाई, कई स्थानों पर उसके पाँव लडखडाए, कई स्थानो पर उसे अपने-आप पर सयम न रहा और वह हवा मे हिचकोले खाने लगा।

आखिर वह बडी कठिनाई से चढ कर ऊपर पहुँचा। अभी उसने दो-चार कदम ही उठाए होगे कि उसे ऐसा प्रतीत हुआ जैसे भूत सहसा आकर उसके आगे खडा हो गया हो, पलक झपकते जैसे लडके की धमनियो से सारा रुधिर खीच लिया गया हो, उसके शरीर से पसीना बूँद-बूँद बन कर बहने लगा। उसकी आँखें फटी-की-फटी रह गई। मुँह खुले-का-खुला रह गया। उसके रोगटे खडे हो गए।

खडे-खडे लडके को सहसा अपनी भुजा की काली रेखा की याद आयी। हाथ पर मली हुई कालिख, जिसके विषय मे जोगी ने कहा था कि वह उसे भूत के मुँह पर मल दे, फिर भूत वहाँ के दौड जायगा। उसने भुजा उठाने का प्रयास किया, किन्तु वह भुजा जैसे नि:शक्त हो गई हो। वह अपनी भुजा हिला न सका, उसने और साहस किया किन्तु यह सब प्रयत्न भी व्यर्थ गया। एक बार और उसने जोर लगाया किन्तु भुजा फिर भी न हिली।

अधकार और फैल रहा था, अमावस की काली और गूंगी रात थी। गाँव से दूर—बीहड वन मे पेडो के झुण्ड के पास नदी का तट झिलमिला रहा था, और एक अकेला लडका, जिसके सामने पिशाच चुपचाप आकर खडा हो गया था।

लडके ने देखा कि पिशाच ऊँचा उठ कर उसे दबोचने लगा है, उसके मुँह से एक करुण चीत्कार निकल गया। न जाने कैसे उसकी भुजा हिली और भूत के मुँह पर जोर से तमाचा मार कर, कालिख मल कर वह दौड पडा। कालिख लगते ही भूत जैसे वहाँ से अतर्ध्यान हो गया। लडके के सामने का स्थान खाली था।

हाँपता हुआ अवाक्—हैरान लडका दौडता हुआ बाजार में से

होकर और घर पहुँचा। बाजार वालो ने उसे आवाजे दी, उस पर हँसे किन्तु लडके ने किसी की कोई बात न सुनी। हाँपते-हाँपते घर के दालान मे पहुँच कर उसने साँस लिया।

उसकी बहन ने उसकी ओर देखा तो हँसने लगी, उसकी माँ ने उसे देखा तो वह भी हँसी, विपत्ति का जैसे किसी को पता ही नही था। हँस-हँस कर सब के पेट मे बल पड गए, अडोस-पडोस की स्त्रियाँ एकत्रित हो गई, सब हँसती जॉय—सब हँसती जॉय। रात और अधिक स्तब्ध हो गई।

थक-हार कर आखिर झुभलाया हुआ लडका बडे कमरे के भीतर चला गया। सामने दीवार पर एक छोटा-सा दर्पण लटका हुआ था, लैप की रोशनी मे उसकी दृष्टि सहसा दर्पण पर जा पडी। क्या देखता है, उसके मुँह पर एक ओर कालिख लगी हुई है, बिल्कुल वही कालिख जिसे वह पिशाच के मुँह पर मल कर आया था। देखते ही वह साथ के पालने पर धडाम से गिर पडा और चीख मार कर बेसुध हो गया।

सारी रात उस पर भाड-फूँक होती रही, जादू-टोना होता रहा। भूत इस प्रकार कभी किसी को नही चिपटा था और भूत की ऐसी छाया न कभी किसी ने देखी थी और न सुनी थी।

अगले दिन यह समाचार कँदरा में जोगी को भी मिला और वह पहली बार गाँव मे स्वय आया, जोगी के साथ गाँव के पाँच-सात व्यक्ति भी थे।

मार्ग में आते हुए एक स्थान पर पशुओ के रेवड के पास से जब वे गुजरे, तो एक गाय बिदक गई। जोगी और उसके साथ के पाँच-सात व्यक्ति गर्दोगुबार मे अट गए और डरे हुए पशु भगदड मे इधर-उधर भागने लगे।

गिरते-गिरते एक ग्रामीण की दृष्टि जोगी पर पडी और उसने उस भगदड मे देखा कि जोगी की लबी दाढ़ी नीचे गिर पडी थी, और

जोगी के स्थान पर जमीदार का पिट्ठू शेरा उसे दिखाई दिया। जब गर्दोगुवार छट गया, जोगी की दाढी फिर वैसी-की-वैसी हो गई।

ग्रामीण अवाक्—स्तभित हो गया था। दूसरे दिन उससे रहा न गया और उसने अपने पडोसी से बात की। उसके पडोसी ने अपने एक मित्र से यह बात कही, बात उडती-उडती तकिये तक पहुँच गई। तकिये की बातचीत मे कोई यह कहता कि यह आवाज तो विल्कुल वही थी, किन्तु जोगी के कई श्रद्धालु कहते कि उस पर सदेह करने का प्रश्न ही पैदा नही होता।

आखिर लडको की एक टोली 'तख्तपडी' गई और वहाँ उनको ज्ञात हुआ कि शेरा कई दिनो से बाहर गया हुआ था। गाँव लौटते ही उन्होने चुपके से जोगी की देखभाल आरभ कर दी। जोगी और भूत-प्रेतो के सारे भय उन्होने दिल से दूर कर दिये। वे नदी मे बैठे इस ताक मे रहते कि जोगी की वास्तविकता का पता चल जाय।

दो दिनो के बाद उन्होने देखा कि रात को दो घुडसवार कँदरा मे आए। वे सब कितनी देर तक भीतर घुसे रहे। सबेरा होने से कुछ समय पहले घुडसवार लौट गए, बिल्कुल इसी प्रकार दूसरे तीसरे दिन जोगी के पास कोई-न-कोई अवश्य आता।

एक दिन उन्होने देखा जमीदार स्वय आया और वे भय के मारे वहाँ से भाग गए।

गाँव मे कानाफूसी होने लगी। जिन्हें पूर्ण विश्वास था वे अपनी खाना पहुँचाने की बारी टाल देते।

कुछ दिन के बाद 'कल्लर' का एक घासी इस गाँव मे आया। सारी बात सुन कर उसने बताया कि पिछले साल उनके गाँव मे भी विल्कुल वैसा ही एक जोगी आया था। कहता था कि मुझे जितने रुपये दो, मै उन्हे दुगने कर दूँगा। आरभ मे जो कोई व्यक्ति पाँच रुपए दे, दूसरे दिन उसे दस लौटा दिये जाँय, जो कोई दस दे तो उसे बीस मिल जाँय, यह देख कर लोग जोगी पर टूट पडे। जोगी पैसे

लिये जाय, शाम को द्वार बद करके वह बैठे, तो उसके कमरे मे जैसे रुपयो की वर्षा हो रही थी, रुपए आकाश से गिरते थे ।

लोगो ने पैसे-गहने अभिप्राय यह कि जो कुछ भी उनके पास था, बेच कर जोगी के हवाले कर दिया । जो लोग उससे दुगने रुपए ले, वे फिर उसे दे दे ताकि वे भी दुगने हो जॉय । बहुतो ने तो अपनी जायदाद बेच दी । इस प्रकार एक सबेरे को जब वे उठे, तो जोगी गायब हो गया था । वह सारे गॉव को लूट कर कँगाल कर गया था ।

यह कहानी सुन कर लोगो का और सदेह बढता गया, लोग और विकल हुए, जोगी की चर्चा अधिक तेज हुई ।

लगभग दो दिन के बाद पता चला कि कँदरा खाली पडी थी । जो व्यक्ति जोगी के लिए भोजन लेकर गया, ज्यो-का-त्यो लौट आया ।

कोंपल फूटी !

१२

जिधर-जिधर नव्वाब घूमता, रज्जो की दृष्टि भी सूर्यमुखी के फूल की भाँति घूम जाती। छत की दीवार पर से वह अपने पति को देखती जाती, देखती जाती, जब तक कि वह दृष्टि से ओझल न हो जाता, वह फूट-फूट कर रोने लगती। सारा दिन उसका दिल विकल रहता, शाम को अथवा रात को जब तक वह घर न लौट आता, उसकी दृष्टि देहली पर जमी रहती। मुड-मुड कर छत की मुँडेर की ओर देखती, खिडकियाँ खोल-खोल कर एडियो के बल हो-हो कर देखती रहती। कई बार दो-दो तीन-तीन दिन नव्वाब बताए बिना घर से बाहर रहता। रातो को तो अक्सर बाहर रहता, किन्तु रज्जो का यह स्वभाव न बना कि वह उसके बिना जी सके। एक बार नव्वाब पूरे चार दिन गायब रहा, उसकी पत्नी ने न कुछ खाया न कुछ पिया और सूख कर काँटा हो गई।

वह 'जी-जी' कह कर नव्वाब को बुलाती, उसे देख-देख कर जैसे उसका जी भरता। अपने हाथो से उसे नहलाती, कपडे पहनाती कितनी देर तक उसके पाँव दबाती रहती। उसके माथे, सिर, और तलुवो मे तेल झिसती रहती। प्रति दिन जब वह बाहर जाता उसे आगे से पानी लेकर मिलती, जब घर लौटता उसकी नजर उतारती। रात को सोते समय धूप जलाती। जितनी देर उसका पति घर मे रहता उसे एक चाव-सा रहता प्रतिक्षण, प्रतिपल वह उसे बहलाती रहती।

नव्वाब की उसे कोई बात और कोई आदत बुरी नही लगती थी,

घर मे बैठ कर वह मदिरापान करता, रज्जो उसे स्वय मद्यपात्र भर कर देती। उसके मित्र सब बैठे होते, वह खिडकी के छेद मे से सारा समय नव्वाब को पीते और मदहोश होते देखती रहती। जैसे स्वय नशा-सा चढ रहा हो! नव्वाब जो बात कहता वह हाँ-में-हाँ मिलाती, उसके मित्र सारी रात घर मे कोलाहल मचाए रहते, गदी-गदी बाते करते, मोटी-मोटी गालियाँ बकते, अजीब-अजीब हरकते करते, किन्तु रज्जो की भवो पर बल न पडता। नव्वाब नशे मे छोटी-सी बात पर टुनक उठता, गाली दे देता, रुष्ट होने लगता, किन्तु रज्जो बस आगे से हँस देती।

एक दिन ये लोग आधी रात गए तक रगरलिया मनाते और खाते-पीते रहे। नव्वाब रज्जो को बार-बार यही कहे जाता कि वह जाकर सो रहे—आखिर वह ऊपर अपने कमरे मे चली गई। लगभग दो घटे के बाद जैसे वह खिची हुई अपने आप सोई-सोई नीचे आई। उसने छेद से कान लगा कर सुना तो उसे भीतर घुघरूओ की झकार सुनाई दी। वह बैठी रही, सारी रात उसने झिलमिल-झिलमिल करते वस्त्र भी देखे। उसने खिल-खिलाती हँसी भी सुनी, रुपयो की झकार भी उसके कानो मे पडी। जब सवेरे सभा समाप्त हुई, सब चले गए, नव्वाब लडखडाता हुआ दरवाजा खोलकर बडे कमरे मे आया। दरवाजे की चौखट से ठोकर खाकर वह मुँह के बल गिरने ही वाला था कि रज्जो ने जैसे उसे अपनी भुजाओ मे उठा लिया और फिर उसके सिर की मालिश करने लगी।

अगले दिन, और फिर उससे अगले दिन—

उसने किसी अवसर पर एक बार भी शिकायत न की। नव्वाब को पहले की तरह प्यार करती, उसकी सेवा करती, उस पर बलि-बलि जाती यदि कभी किसी को अच्छा कपडा पहने देखती तो रज्जो का जी चाहता कि वह अपने पति के लिए वैसे ही वस्त्र ढूँढ लाए। उसकी लुगियो मे वह चुन-चुन कर सिलवटे डालती, उसके वस्त्र सभाल-सभाल कर रखती, किसी का अच्छा बाज देखती तो कहती कि वह नव्वाब का हो

जाय । किसी के कुत्ते की प्रशसा सुनती तो उसका जी चाहता कि वह उसके पति का हो जाय । किसी के घोडे को देखती तो सोचती कि उसका नव्वाब उस पर चढा हुआ कैसा फबेगा ?

नव्वाब का कोई काम नौकर न कर सकते । रज्जो अपने हाथो से उसका खाना पकाती, उसके कमरे की सफाई करती, गर्मियो मे सारी-सारी रात उसके सिरहाने बैठी पखा करती रहती, उसके इर्दगिर्द पानी छिड-कती रहती, सुगन्धियाँ छिडकती रहती ।

नव्वाब एक बार बीमार पड गया । रज्जो को खाना-पीना और सोना भूल गया । आठो घडी उसके समीप बैठी दवाए मगवाती रहती, नमाज पडती रहती, अपने दोष क्षमा करवाती रहती, रो-रो के आखिर उसने अपने पति को स्वस्थ कर लिया ।

रमजान के मास मे पूरे रोजे रखती । नव्वाब उस पर हँसता। सारा-सारा दिन उससे खाने को वस्तुए वनवाता रहता, उसके सामने खाता रहता, रज्जो फिर भी अपने व्रत पर डटी रहती । उसने सुन रखा था कि हिन्दुओ मे व्रत अपने पति की दीर्घायु के लिए रखे जाते है, रज्जो वह व्रत भी रखती, और किसी को पता न चलने देती ।

कभी-कभी रज्जो का जी चाहता कि वह नव्वाब से कहे कि वह सारा दिन घर मे उसके पास बैठ कर गुजारे । किन्तु जब अपने-आप बाहर जाने को उद्यत होता तो रज्जो चुप हो जाती । उसकी इच्छा को अपनी इच्छा समझती, अपनी कामनाएँ उसपर बिल्कुल प्रगट न करती ।

नव्वाब के शराब पी-पी कर ऐठे हुए पट्ठ, निचुडे हुए होठो और चट्टान के समान सख्त शरीर को जब कभी रज्जो देखती तो उसे कड-कडा कर टूटी हुई चारपाई याद हो आती । सिलवटे डालते हुए उसे बटा हुआ दुपट्टा याद आ जाता, वह उस समय अनुभव करती कि चक्की मे किस प्रकार मैदा दला जाता है, फिर उसे कैसे गूँधा जाता है, फिर उसे कैसे मल-मल कर सूक्ष्म किया जाता है ।

रज्जो ने स्वप्न मे देखा कि उसके हाथ मे एक अनमोल लट्टू आया और सहसा गिर कर चकनाचूर हो गया। कितनी देर से वह एक रस्सा बट रही थी, बटे जा रही थी, रस्सा इतना मोटा हो जाता है कि उसके हाथ मे नही आता। रज्जो उसे और बल देती तथा बटती है, किन्तु रस्सा बीच मे से दो टुकडे हो जाता है और सारे बल जैसे फिर बँट जाते हैं। एक बार उसने फिर देखा कि "चीरपड" लुढक पडे हैं और उनके भेड-बकरियो के झुड-के-झुड गिरे और कुचले जा रहे हैं।

लेटे-लेटे कई बार रज्जो के हाथ-पाँव स्वयमेव मुड जाते, उनमे बल पड जाते, और जब जागती तो सदैव उसके अग सोए हुए होते। हिलाने से हिल न पाते, कितनी-कितनी देर वह उन अगो को हिलाती-मलती रहती और दबाती रहती।

नव्वाब जितना हट्टा-कट्टा और जवान था, रज्जो उतनी ही दुबली हल्की और सुकोमल थी। कोंपलो के समान खिली-खिली और फूल-पत्तियो के समान कोमलागी थी। मोतियो के दानो की भाति उसके दाँत मिस्सी के पश्चात् झिलमिलाने लगते और देखे न जाते। उसका गोरा-गोरा रग था, गुलाबी-गुलाबी कपोल थे, और लबे-लबे उसके बाल बहुत नीचे तक गिरे पडते। उसकी आखे गोल और काली थी। उसकी नाक बडी तीखी और सुरूप थी। नाक के नीचे अधरो के ऊपर एक अत्यन्त प्रिय तिल था। रज्जो की माँ 'स्यालों' मे से थी। लोग कहते, रज्जो बिल्कुल अपनी माँ पर थी, उसके रग-ढग माँ के-से थे, एक को छिपा लो और दूसरी को दिखा दो, कोई अतर नही पडता। जब उसकी माँ ब्याही हुई पोठोहार मे आई थी, तो अब उसे 'हीर सलेटी' पुकारा करते थे।

पतले-दुबले और सिकुडे-सिमटे नौकर रज्जो को घर मे और भी पतले-दुबले दिखाई देते। रज्जो उन्हे देखकर प्रसन्न न होती, काश, उसके सारे नौकर पहलवान होते। उसकी धाय जिसने बचपन से, उसे पाला-पोसा था, अब बूढी हो चुकी थी। उसके मरियलपन से किड-किड़ करते

उसके पंजर से उसका हृदय अत्यंत विकल होने लगता, आखिर रज्जो ने एक दिन उकता कर उसे जवाब दे दिया।

एक दिन आधी रात को नशे में चूर लडखडाता हुआ नव्वाब घर पहुँचा। उसके वस्त्र कीचड और धूल से अटे पडे थे, उसके बिखरे और उलझे हुए बाल एक अजीब भयानक रूप से उड रहे थे। उसका निचला होठ सूजा हुआ और लटका हुआ था। उसकी आँखे लाल-सुर्ख हो रही थी जैसे पपोटो मे से फडक कर बाहर आ जायगी। रज्जो ने उसके भीतर दाखिल होते ही उसे सँभाल लिया, पलग पर लेटने से पूर्व नव्वाब ने रज्जो को कलाई से पकड लिया और उसे भयानक-दृष्टि से घूरा— "टूट जायगी" बडी कठिनता से बोलते हुए उसने कलाई को झटके के साथ छोड दिया और पलग पर गिर पडा।

सारी रात रज्जो सो न सकी, पलग पर पडे-पडे उसकी आँखें खुली रही, उसका अग-प्रत्यग कहता—काश, वह उसे झिझोडता, भगोडता पीटता। "ऐ मेरे भोले साजन"—रज्जो सोचती यह मेरा नख-शिख किसके लिए है। यह उसका रग, यह उसका रूप ,यह उसका यौवन— "ओ मेरे पगले साजन" और रात समाप्त होने मे ही न आती।

कभी नव्वाब जब दोपहर को घर मे ही होता, रज्जो अपनी सहेली के एक बच्चे को बुलवा कर उससे दुलार करती रहती। उसे नहलाती, उसकी आँखो मे सुरमा लगाती, वस्त्र बदलती। मुड-मुड कर नव्वाब को हँसता हुआ, ठुमकता हुआ, स्वर पहचानता हुआ, होठों से चुसर-चुसर करता हुआ, अत्यत प्यारा शिशु उसे दिखा-दिखा कर प्रसन्न होती रहती। नव्वाब के साथ अकेली बैठी वह कई छोटे-छोटे कपडे सीती रहती। स्वैटर, जुराबे और इस प्रकार की कई छोटी-मोटी वस्तुएँ बुनती-बनाती रहती। घटियो वाला एक अत्यत सुंदर पालना उसने बनाया और उसे अपने पलग के साथ बिछा लिया। यूँही इधर से उधर जाती हुई नव्वाब के काम करती हुई वह उस खाली पालने को हिला आती और उसके घुँघरू कितनी देर तक बजते रहते। कई बार जब नवाब ने शीघ्रता मे

बाहर जाना होता और वह उसके बटन के लिए सुई ढूँढ रही होती, तो पालने को धीरे से अवश्य हिला जाती। पालने के घुँघरुओ की झन्कार रज्जो को जैसे बार-बार किसी वस्तु की स्मृति दिला जाती, किसी अभाव से उसे सूचित करती, उसे अपने जीवन की एक शून्यता की अनुभूति होती, एक मधुर-सी वेदना उसके अन्तस्तल मे फैल जाती, एक विकलता-सी, एक प्रतीक्षा-सी उसे रहती।

"ओ भागवान! मैंने बहुत देखा है तेरे खुदा को, कभी उसे आराम न भी करने दिया कर!"

एक दिन रज्जो तस्वीह पकडे वज़ीफा पढ रही थी कि ऊपर से नव्वाब शराब पिये आ पहुँचा—उसने तस्वीह को दाने-दाने कर दिया। रज्जो के नमाज वाले स्थान पर कई बार जानबूझ कर नव्वाब बैठता और उसे चिढाने के लिए शराब पीता। कभी-कभी रज्जो को पकड कर बलपूर्वक उसके मुँह मे शराब उडेल देता। एकाध घूँट पिला भी देता, उसकी नमाज के समय उसे जान बूझ कर किसी-न-किसी काम मे लगा देता और ज्यो-त्यो उसकी नमाज बिगाड देता।

पहले तो रज्जो वर्ष मे छ-छ मास मायके रहा करती। किन्तु गत दो वर्षो मे वह नव्वाब के यहाँ से बिल्कुल न गई। कही यदि जाती तो दो या चार दिनो के लिए मिल कर लौट आती। नव्वाब ने कई बार उसे सकेतो से महीना आध महीना मायके ही मे रहने के लिए कहा किन्तु रज्जो को घर बनाने की चाह घेरे हुए थी।

यह सोचती—उसकी सहेली, जिसका एक नन्हा-सा बच्चा था, कभी बेकार नही रही, कभी अकेली नही हुई। बच्चे के छोटे-छोटे काम दिन-रात निकलते ही रहते थे, बच्चे के साथ बाते करती हुई माँ बच्चे के पिता से बाते कर लेती है, बच्चे के ईश्वर से बाते कर लेती है।

और यू सोचती-सोचती जैसे वह तडप उठती। अपनी तस्वीह लेकर बैठ जाती, और उसकी आँखो से आँसुओ की नदियाँ बहने लगती, बहे जाती। रज्जो सोचती—"यदि ईश्वर है तो कहाँ है और किस कीमत पर अपने बदो की कामना पूर्ण किया करता है।'

एक घोर अंधेरी रात

१३

एक घोर अंधेरी रात ! हाथ-को-हाथ सुझाई नही देता था। आँखें फटी-फटी दर्द करने लगती, जैसे चारो ओर अँधेरे की दीवारों-पर-दीवारें चढी हों। ज्यो-ज्यो रात गुजरती, अंधेरा गहरा होता चला जाता, अन्धकार प्रत्येक वस्तु को अपने भीतर समेट रहा था। कंधो पर इसको बोझ अनुभव होता, हृदय पर आतक-सा छा जाता। एक तो अँधेरा तिलपट की तरह काला था, दूसरे आकाश पर बादल उमड आए थे। घटाटोप अन्धकार धीरे-धीरे नीचे उतर रहा था, पानी के साथ लदी हुए बादलो की छाया शीतल थी। जाती हुई सर्दी फिर लौट आई थी; माणले और उससे ऊपर की पहाडियो से ठडी-ठडी हवा चल रही थी। ज्यो-ज्यों रात लम्बी होती, त्यो-त्यो अंधेरा भी गहरा होता जाता, ज्यो-ज्यो बादल समीप आते, त्यो-त्यो माणले की हवा तेज होती जाती।

कुछ समय बाद बादल गर्जने लगे, अत्यन्त भयानक गडगडाहट ! यदि एक कोने मे धीमी पडती तो दूसरे कोने से ऊँची होने लगती। बिजली बार-बार कोंदती, जैसे तडप-तडप कर टूट गिरने को बेताब हो रही हो। पेडों में पवन की फुंकार, पेडो के टूटने की आवाज, पत्तो का कोलाहल एक कँपकँपी-सी छोड रहा था। कभी दरवाज़ों मे से सिसकियों की आवाज आती, कभी पेडो में से आहो के स्वर निकलते, कभी अत्यन्त भयानक सीटियाँ बज उठती।

जहाने की पत्नी फज्जो की जरा-सी आँख लगती, जहाना सोया-सोया शोर मचाकर उसे जगा देता। यह उसे आवाजे ही देती रहती कि वह फिर करवट बदलकर सो जाता। शाम से ही फज्जो देख रही थी कि जहाना बहुत विकल था, बार-बार करवट बदलता। कभी कम्बल ओढ लेता, कभी उतार देता, टाँगे जोर-ज़ोर से उठाकर मारता।

'यदि नव्वाबजादे को चण्डाल-चौकडी की सगति एक दिन न मिले तो उसकी रात ही नही कटती।' फज्जो सोचती थी, दो-चार दिन जो जहाना जमीदार से न मिले, और मिलकर बेहूदगियाँ न करे तो जहाना विकल रहने लगता था। जरा-ज़रा सी बात पर झुँझलाने लगता था, इसलिये रात भी विकलता मे कटती थी।

अगली बार जब जहाना सोया-सोया बड़बडाया तो फज्जो की आँख फिर खुल गई। उसे बडा क्रोध आया—"जा भाड़ मे" यह कहते हुए उसने अपनी चारपाई दूर खींच ली, हवा और तेज हो गई थी, बादल गरज रहे थे, बिजली चमक रही थी, मुँह-सिर लपेटकर वह लेट गई।

सोते-सोते फज्जो ने सोचा कि पिछली बार भी जब उसने पुलाव पकाया था, जहाना रात भर तंग रहा था। बस, खाए जाता था, खाए जाता था। फिर उसने सोचा कि चारपाई की अदवायन भी तो बहुत ढीली थी, नीद नही आ रही होगी बेचारे को। हर रोज फज्जो सोचती कि वह अदवायन कस देगी, किन्तु इस घर के बखेडो से उसे अवकाश ही न मिलता। उसका दिल एक और बात भी कहता कि जहाना जमीदार का बिगाडा हुआ है—' पिये बिना यदि दो दिन कट जाँय, तो···"
······सोचती-सोचती फज्जो सो गई।

लगभग आधी रात होगी कि सोते-सोते फज्जो को ऐसा अनुभव हुआ जैसे बाहर ड्योढी की सकल किसी ने खोली हो। उसने सोचा कि शायद तेज हवा के कारण यह खडखडाहट हुई है, और वह लेटी रही, किन्तु उसके बाद उसकी आँख न लगी।

'उठकर अपना सन्देह मिटा ही लूँ'—फज्जो ने कम्बल में से मुँह

निकाला। अपने बालो को पीछे की ओर फेककर उसने द्वार की ओर झाँका—क्या देखती है कि द्वार खुला पडा है। घबरा के फज्जो उठी और उसके आश्चर्य की कोई सीमा न रही, जब उसने देखा कि जहाने की चारपाई खाली पडी है।

एकदम फज्जो को क्रोध आया, उल्टे पॉव उसी दशा मे फुकारती हुई वह बाहर चल पडी। अँधेरा गहरा रहा था, बादल गरज रहे थे, बिजली चमक-चमककर पागल हो रही थी, पानी की मोटी-मोटी बूँदे तेज हवा के कारण ज़ोर-ज़ोर से मुँह पर लगती।

पत्थरो से ठोकर खाती, दीवारो से रगड खाती क्रोध मे जलती-भुनती फज्जो गली से बाहर आ गई। आँखे फाड-फाड के फज्जो ने चारो ओर देखा। सहसा बिजली फिर कोदी और उसने देखा कि कधे पर एक फावड़ा रखे, दूसरे हाथ मे बेलचा पकडे जहाना नदी की ओर जा रहा था। फज्जो जानती थी कि नदी मे बाढ आई हुई थी, यह विचार आते ही वह दौड़ पडी।

फिसलती, गिरती, कभी-कभी आवाजे देती फज्जो दौडती-दौड़ती गई। जब वह नदी के किनारे पहुँची, तो उसने देखा—जहाना रस्सियो के पुल पर चढ गया है। दिल पर हाथ रखे हैरान फज्जो निश्चल खडी थी, रस्सियों के उस पुल पर कठिनाई से एक व्यक्ति के चढ़ने का स्थान था, और यदि पॉव तनिक भी लड़खड़ाए तो आदमी नीचे गिर पडता था। उस पुल को कोई मुसीबत के वक्त मे ही उपयोग करता था। नदी यदि कई दिनों तक चढी रहे और डाक अथवा कोई दूसरी आवश्यक वस्तु पहुँचानी होती, तब भी कोई चतुर व्यक्ति ही इतना साहस करता।

जहाने के बाल उसके माथे के आगे-पीछे बुरी तरह से बिखरे पडे थ, उसका गिरेबान भी खुला था। उसकी गले की कमीज़ एक ओर लटकी हुई थी। लगोट छोड़कर उसका शेष सारा धड नंगा था, पैरो से नगा था। एक कन्धे पर उसने फावडा वैसे-का-वैसा पकडा हुआ था, उसके

दूसरे हाथ में बेलचा था, बेलचा धीरे-धीरे नीचे खिसकता जा रहा था।

फज्जो 'या अल्ला, या अल्ला' कहती खडी रही, वह अपने स्थान से न हिली न कुछ बोली—कही जहाना चौक न पडे। जहाना बे-झिझक चला जा रहा था, उसका प्रत्येक पग आगे बढता जा रहा था। पुल उसके प्रत्येक पग पर झूले की भाँति झूलने लगता। जहाना तो भी तीर के समान सीधा जा रहा था।

नदी मे कितने ही दिनो से बाढ़ आ रही थी। इस बार वर्षा जरा देर से आरम्भ हुई थी—पानी की गूँज, लहरो के थपेडे, ऊपर से काले बादल, बिजली—जहाना फिर भी एक जोश मे, एक दानव जैसे जोश मे पुल पार किये जा रहा था।

ज्यो-ज्यो जहाना नदी के बीच में पहुंचता जा रहा था, त्यो-त्यो फज्जो की 'या अल्ला, या अल्ला' की पुकार ऊँची होती जा रही थी। ज्यो-ज्यो वह नदी के बीच पहुँचता जाता, त्यो-त्यो पुल अधिक काँपता और पंखे के समान डोलता। बीच मे से पुल पानी की सतह से एक फुट ऊँचा था, फज्जो सोचती कि यदि एक लहर आई तो वह; सिर के बल पानी मे जा गिरेगा, यह सोचकर उसने कानो पर हाथ रख लिये और उसने ऊँची आवाज में ईश्वर को स्मरण करना आरम्भ कर दिया।

जहाना वैसे-का-वैसा चला जा रहा था, चला जा रहा था। सामने किनारे के पास जब वह पहुँचा, तो आँधी के बगूले ने पुल को समूल झिझोड डाला। पानी की लहरे पुल के बीच मे से जैसे सहसा गुजर गईं। जहाना तब भी होश मे था और चौकन्ना था। उसने अन्तिम-पग उठाया और वह दूसरे किनारे पर पहुँच गया।

फज्जो ने अभी तक यह नही सोचा था कि वह जा कहाँ रहा है। पार किनारे पर पहुँचकर जहाना दौड़ पड़ा और मुँह से भी उसने कुछ बोलना आरम्भ कर दिया, किन्तु आँधी और पानी के शोर मे फज्जो को कुछ भी सुनाई न दिया।

जहाना दौड़ता गया, दौड़ता गया। पार का टीला चढ़ गया और फिर आंखो से ओझल हो गया। फज्जो विस्मित-सी वहाँ पसीने-पसीने

खडी रही, खडी रही । उसे तत्काल चक्कर-सा आया, उसकी आँखो-तले अंधेरा छा गया और एक पटखनी-सी खाकर वह भी दौडकर पुल पर चढ गई । इससे पूर्व कि उसे कुछ पता चलता, वह उस पार पहुँच चुकी थी ।

सलवार के पाँयचे एक हाथ से पकडे फज्जो दौडती गई, दौडती गई । बिजली की चमक मे उसने जहाने को ढूंढ लिया, वह एक टूटी-फूटी पुरानी हवेली की ओर जा रहा था । जब फज्जो उसके पास पहुँची, जहाना खँडहरो मे खडा था ।

'आज मै उन्हे निकाल के छोडूँगा' जहाना ऊँची आवाज में चीख रहा था, उसकी आँखो की लाल पुतलियाँ जैसे फुदक कर बाहर आने को कर रही हो ! उसके चेहरे पर एक दृढ धारणा की छाप थी जिससे आतक फूट रहा था । उसके पट्ठे जैसे रौदे हुए थे, अकडे हुए थे, फज्जो ने आगे बढकर उसे पकड लिया—"आज मै उन्हे निकाल के छोडूँगा !" वह ऊँची आवाज में चीखने लगा, वह फज्जो के हाथ से अपनी बाँह छुडाने का प्रयत्न कर रहा था ।

आधी अधिक तेज होती जा रही थी, जर्जर और पुरानी हवेली के खडहरो मे से आँधी एक भयानक आवाज देती हुई गुजरती । जब जहाना ऊँची आवाज मे चीखा तो खँडहरो के एक कोने मे खडखडाहट हुई और खुजली का मारा एक मरियल-सा कुत्ता पूँछ हिलाता उनकी ओर आया, और फज्जो की सलवार सूँघने लगा । फज्जो ने क्रोध मे उसे परे हटा दिया और वह मरियल कुत्ता चौककर पीछे गिर पड़ा । वही पड़ा-पडा वह च्याऊं-च्याऊँ करने लगा, और फिर उसी कोलाहल मे एक उल्लू किसी कोने मे से आया तथा जोर-जोर से पंख फड़फडाता अन्धकार मे विलीन हो गया । फज्जो हैरान-सी उसे देख रही थी कि छोटे-छोटे पक्षियों की पक्ति कोनों और नुक्कड़ो से उड़कर शून्य मे शोर मचाती आवारा घूमने लगी । फज्जो जोर-जोर से जहाने को झिझोड रही था कि उसे होश आ जाय, वह उसे पहचान ले, किन्तु जहाना वैसे-

का-वैसा ही रहा, जैसे नशे मे डूबा हुआ हो !

'आज इन्हे निकाल के छोड़ूँगा ।' जहाना ऊँची आवाज मे चीखता जाता, और जब वह चुप हो जाता तो घूर-घूर कर खँडहरो की ओर देखने लगता।

फज्जो ने उसे पकडे रखा, पकडे रखा । आखिर वह आप-ही-आप बहकने लगा और उसने एक लम्बी कहानी छेड दी।

जहाने ने बताया कि उस हवेली के खँडहरो के एक कोने मे पूरा एक परिवार दफन था । परसराम, उनकी पत्नी, उनकी जवान लडकी और दो छोटे बालक, सब-के-सब जमीदार के आदेश से जीवित चुनवा दिए गए थे और अभी तक वह पुरानी दीवार वैसी-की-वैसी ही खड़ी थी।

परसराम एक दुकानदार था। नमक, साबुन आटा-दाल रखता और शाम को उसकी पत्नी पकौडे तलने बैठ जाती। कभी-कभी उनके पास कोई-न-कोई सब्जी भी होती और इस प्रकार बेचारे आजीविका चलाते। उसके तीन बच्चे थे, एक बच्चा उसकी पत्नी के पेट मे था।

एक दिन शाम को परसराम की पत्नी बाहर गली मे दुकान लगा-कर बैठी हुई थी। उसके पास उसकी जवान लडकी भी थी ; गली में सामने उसका बच्चा खेल रहा था कि जमीदार अकेला घोडे पर सवार उधर से निकला। परसराम के छोटे बच्चे ने गुल्ली-डंडा खेलते हुए एक टोरा जो मारा, गुल्ली जमीदार के घोडे के नथुनो पर जा लगी। घोडा सहसा बिदका और फिसलने ही वाला था कि जमीदार ने उसे सभाल लिया।

घोडे की घबराहट और उसके सवार की विकलता देखकर बच्चे तत्काल खिलखिला कर हँस पडे। जमीदार ने जलती हुई आँखो से उन्हे देखा और उन्हे कुचलने के लिए उसने घोडे के एडी लगादी। बच्चे दौड़ते हुए दुकानो मे आ गए। इधर माँ-बेटी सहमी हुई यह कौतुक देख रही थी, दौडकर उन्होने भीतर से द्वार बन्द कर लिया।

दूसरे दिन जमीदार ने आदेश दिया कि दोनो बच्चे धरती मे गाड़ के कुत्तो से फडवाए जॉय, किन्तु परसराम और उनका परिवार रातो-रात गॉव छोडकर जा चुके थे। क्रोधित होकर जमीदार ने चारों ओर अपने आदमी भेज दिए और शाम से पहले-पहले सारा परिवार पकडा हुआ वापिस लाया गया।

जमीदार ने बाहर की इस वीरान हवेली मे उन्हे दीवार मे चुन देने का आदेश दे दिया। उस समय उन्हे यहाँ लाया गया और जहाने ने दीवार स्वय उठाई थी, एक-एक पत्थर उसने स्वय लगाया था। बच्चो की गिडगिडाहट, जवान लड़की की दिल दहला देने वाली आहो और माता-पिता की प्रार्थनाओं ने जहाने के हृदय पर कोई प्रभाव न डाला। एक मशीन की भॉति जहाना पत्थर लगाता रहा, लगाता रहा, आखिर सारे परिवार की आवाज आनी बन्द हो गई।

जहाना कह रहा था—उस दिन के बाद वह कभी विश्राम न ले सका। प्रतिदिन रात को परसराम और उसका परिवार उसे झिझोड़ता, उसके बच्चे उसकी आँखे नोचते, उसके बाल खीचते। परसराम की जवान लडकी जलती हुई आँखो से उसकी ओर देखती—उसकी एक-एक दृष्टि मे सौ-सौ धिक्कार होते। परसराम और उसकी पत्नी पटाख-पटाख उसे पलंग से नीचे गिराते, उसकी गर्दन दबोचते, उसे उल्टा लटका-लटका कर पीटने लगते, अपना कुर्ता उठा-उठाकर जहाना फज्जो को पीठ दिखाता कि उस पर उन्होने खराशे डाल दी थी, उनकी आत्माए भटक रही थी। हिन्दू परिवार को जलाना अनिवार्य था और उस रात उन्होने उसे आकर कहा था कि जहाना उन्हे चिता बनाकर नियमानुसार जला दे, वरना वे उसे आग लगाकर भस्म कर देंगे।

जहाना सारा समय बेहोशी में, एक पागलपन के आवेश मे बाते करता रहा। मूसलाधार वर्षा होने लगी थी। जहाने ने फज्जो की पकड से निकल कर उस टूटी पुरानी दीवार पर फावडा चलाना आरम्भ कर दिथा, बादल गरज रहे थे। बिजली की एक-एक चमक जलाकर राख

कर देने वाली थी। आँधी-वर्षा की बौछार को अधिक भयानक बना रही थी। रात अभी तक घोर अन्धेरी थी, जहाना उस कोने को खोदता जा रहा था, खोदता जा रहा था—"आज इन बेचारो का दाह-सस्कार करूँगा, आज इन बेचारो का मैं दाह-सँस्कार करके छोडूंगा!" साथ-ही-साथ वह ऊँची आवाज मे चीखता जाता। बादलो की गरज, बिजली की चमक, वर्षा का शोर और आँधी का तूफान, इन सबका उस पर कोई प्रभाव नही हो रहा था।

एक अपरिमित-शक्ति के साथ जहाना फावड़ा चला रहा था और साँस रोके उसकी पत्नी ठगी-सी वर्षा मे भीगी हुई आँखे फाड़-फाडकर उसे देख रही थी।

अत्याचार !



१४

तख्तपडी की नदी आजकल बिल्कुल एक जोहड़ बनी हुई थी। इन दिनो मे न वर्षा होती थी, न बाढ आती थी। कही दो चट्टानो के बीच किसी गहरी तलहटी मे पानी खडा हो जाता और निखर-निखरकर स्रोत के समान दिखाई देता। कई बार इन स्थानो पर सोते भी फूट पडते, इस प्रकार गर्मियो में उन दिनो का पानी अत्यन्त शीतल होता और सर्दियो में कोसा-सा; सभी नहाने के लिए यहाँ आते। स्त्रियो के नहाने का स्थान अलग और पुरुषो के नहाने का स्थान अलग था।

प्रायः इन दिनो कछुए और मछलियाँ भी होती, सयय-कुसमय कोई नीचे उतरता तो देखता कि कछुए बाहर निकलकर किनारो पर बैठे धूप सेक रहे है। लोग मछलियो को पकड लेते थे, इसलिए कभी कोई बडी मछली दिखाई नही देती थी; लोग कछुओ और केकड़ो से डरते थे। हालाकि अभी तक किसी के सुनने मे नही आया था कि कछुओ और केकड़ो ने किसी को दुःख पहुँचाया हो। लोगो का विचार था कि केकडा आकर मुँह मारता है और लोहूलुहान कर देता है; कछुए टाँग से पकडकर पानी के भीतर ही खीच ले जाते है। एक-दो लड़के जोहड मे डूब मरे थे, सबका यही विचार था कि कछुए उन्हे पकड़कर गहराई मे ले गए थे।

एक ऊँचा टीला उतरकर नदी मे जाना पडता था। मार्ग मे कई खाइयाँ थी, पेड थे, झाडियाँ थी; और जहाँ तक सम्भव हो पाता कोई स्त्री उधर अकेली न जाती। लडकियो की टोलियो-की-टोलियाँ दोनो समय कितनी-कितनी देर तक नीचे उतरकर ऊधम मचाए रहती; कई बार मिलकर खेलने लगती, कई बार पत्थरो पर बैठकर किसी की चर्चा छेड देती। यदि नहाने लगती, तो गर्मियो मे पानी के भीतर से बाहर निकलने को उनका जी न चाहता। एक-दूसरे को गोते देती, एक-दूसरे पर पानी के छीटे मारती, जो बाहर निकलती, उन्हे मिट्टी मल देती, और जब तक थक-हार न जाती, तब तक घर न लौटती।

किन्तु दोपहर को यह जोहड बिल्कुल सुनसान होता। कई बार सूर्य ढलने तक वहाँ कोई न जाता। कभी-कभी निर्धन किसानो की स्त्रियाँ ऐसे समय वस्त्र धोने के लिए एक-दो पत्थर सँभालकर बैठी होती, उनके वस्त्र धोने की आवाज ऊपर खेतो मे काम करते हुए किसानो के कानो तक पहुँचती।

एक जाट गुलाब ने एक बार अपनी नवविवाहिता पत्नी को नदी पर कपडे धोने के लिए भेज दिया। अभी दोपहर ढली नही थी, लडकी का भय लगता था—'ओ भागवान! तू नीचे चली जा, मै यहाँ हल चलाता हूँ और तेरे कपडे धोने की थापी की आवाज सुनता रहूँगा।' गुलाब ने पत्नी को समझाया कि यदि उसकी थापी की आवाज बन्द हो जायगी तो वह नीचे नदी पर पहुँच जायगा। उसके कपडे फटकारने की आवाज उसके पति को सुनाई देती रही और शाम हो गई। आखिर वह थक-हारकर नीचे गया। ज्यो-ज्यो वह नदी की ओर जाता, कपडों के फटकारने की आवाज जैसे धीमी होती जाती। क्या देखता है, वहाँ उसकी पत्नी कही भी नहीं थी और कपडे भी ग़ायब थे। हक्का-बक्का गुलाब यह सोच रहा था कि उसके पास के जोहड से कपडे पटकने की आवाज आई—वह चट्टानो पर चढकर ऊपर गया, आवाज धीमी पड गई। फिर आवाज आनी बन्द हो गई, विस्मित और पसीने-पसीने

गुलाब यह सोच रहा था कि कपडे पटकने की आवाज फिर पहले जोहड से आनी आरम्भ हो गई। गुलाब फिर उधर लौटा, जब वह चट्टान से नीचे उतरा, आवाज आनी फिर बन्द हो गई। न कपडे थे न कपडे धोने वाली, यह देखकर भागता हुआ किसान ऊपर फस्लो मे आ गया।

सब यही कहते कि वह कितना मूर्ख है जो उसने नवविवाहिता लडकी को अकेली नदी पर भेज दिया। अभी तो उसके हाथ-पाँवो की मेहदी भी मैली नही हुई था।

फिर लोग कहते कि वह लडकी थोडे समय के बाद आम का पौधा बनकर नदी के पास उग आई। वहाँ, जहाँ से उसे गुलाब के खेत दिखाई देते थे। सारा-सारा दिन और सारी-सारी रात यह पौधा गुलाब के खेतो की ओर देखता रहता। अब भी उस आम के पौधे के समीप से निकलते हुए लोग एक अत्यन्त करुणापूर्ण-स्वर मे किसी लडकी को गाता हुआ सुना करते थे .

मेरे आम न तोड !
मेरी डाली न मरोड !!

यह एक लम्बा गीत था—कि "मै एक नवविवाहिता दुल्हिन हूँ। मेरा पति मेरे कपडे धोने की आवाज सुन रहा है !"

उस पत्थर पर अकेली भागभरी को वस्त्र धोते समय सहसा यह कहानी स्मरण हो आई थी। दोपहर ढल रही थी, कितनी देर वह "मेरे आम न तोड, मेरी डाली न मरोड" वाला गीत गाती रही, गाती रही। स्वयमेव यह गीत गाते हुए उसकी आवाज ऊँची हो जाती और सामने की दीवार से टकरा-टकराकर लौट आती। गुंबद की-सी उस आवाज से भागभरी को यह अनुभव होता जैसे नदी पर चहल-पहल बढ गई हो !

भागभरी ने पहले अपने पति बहादुर के वस्त्र धोए, फिर अपने लड़के फर्मान की सलवार उठाई। अब तो फर्मान और बहादुर के वस्त्रों

में कोई अधिक अन्तर नही रहा था। फर्मान जवान हो गया था, धीरे-धीरे फर्मान की सलवार भी भारी हो गई थी—फर्मान कितना गोरा था, बिल्ली की-सी उसकी आँखे कितनी प्यारी थी, उसका शरीर जैसे अत्यन्त सुकोमल हो। जब वह धूल में दौडता-भागता घर का काम-काज करता, तो यो जान पडता जैसे मैला-मैला हो रहा हो। यदि खेलता तो सबका अगुआ होता, यदि गली मे से गुजरता तो सब उसे सरदार समझते। आयु मे उससे पाँच-सात वर्ष बडे लडके भी उसकी बुद्धि की प्रशसा करते थे। फर्मान के खेल भी अलग थे—लडको को लाइन मे सीधा खडा कर देता, उनके हाथो मे सीटियाँ दे देता, और फिर आदेश देकर उन्हे क्रम से आगे-पीछे चलाता। उसके छः साथी सब-के-सब लडके उसका कहा मानते, मिलकर बैठते, मिलकर खाते, बाहर फस्लो मे मिलकर जाते। उपवनो मे आँख बचाकर घुस जाते और उन्हें जो कुछ मिलता, तोडते और खाते रहते। एक बार जमीदार के बाग पर भी जा टूटे थे; जब माली ने फर्मान को पकड लिया, वह उसे उल्टे डाँट पिलाकर चला गया। फर्मान कहता कि वे फस्ले और बागीचा उसके अपने थे, क्योंकि किसानो के परिश्रम ने ही उन्हे बनाया था—और माली हक्का-बक्का मुँह बाए उसकी ओर देखता रहा।

भागभरी के भीतर की ममता यूँही सोचती जा रही थी, सोचती जा रही थी कि सहसा उसके हाथ से कपड़े धोने की थापी फिसली; और वह क्या देखती है कि सामने किनारे पर खडा नव्वाब मुसकरा रहा है। भागभरी ने तत्काल पास पड़ा हुआ दुपट्टा अपने कन्धों पर ओढ लिया, वह पसीने-पसीने हो चुकी थी। आँखें झुकाए हुए वह यह नही जानती थी कि क्या करे और क्या न करे। जैसे वह बेसुध हो गई हो, उसमें शान्ति न रही हो, वह क्षण-भर के लिए यूँही बैठी रही। फिर उसने सहसा अनुभव किया कि उसकी नग्नता अभी तक ढँक नही पाई थी। वह छलाँग लगाकर पानी के भीतर चली गई, जोहड के बीच पहुँचकर उसका सारा धड पानी में डूब गया, उसका मुँह केवल बाहर था।

नव्वाब अभी तक सामने खडा उसे घूर-घूरकर देख रहा था, उसके अग-अग मे भरी हुई शरारत मुसकरा रही थी। भागभरी जोहड के बीच पहुंचकर एक शेरनी की भाति बिफरी और दहाडने लगी। नव्वाब वैसे-का-वैसा हँसता रहा, वह धीरे-धीरे जोहड के किनारे तक आ गया, और उसने भागभरी के पहनने के कपडे उठा लिये।

यह देखकर भागभरी बौखला गई, फिर उसने नव्वाब की अनुनय-विनय की, उसे समझाती रही। कभी मिन्नत करती कभी उसकी समझ-बूझ को धिक्कारती, नव्वाब निर्लज्ज था, ससार-भर का गुण्डा था और उसने उसकी एक न मानी।

भागभरी ने निदान तग आकर कहा कि वह उसके सामने वहीं डूबकर मर जायगी। नव्वाब और ऊँची आवाज मे हँसा, यह देखकर भागभरी ने प्रयत्न किया कि वह अपने-आपको डुबा दे, किन्तु पानी था कि उसे बार-बार ऊपर की ओर उछालता था। पानी से भीगा-भीगा उसका सिर जब फिर ऊपर आया, नव्वाब और जोर से हँसा।

कोई उधर नही आ रहा था, वैसे उस समय कभी-कभी जोहड पर मोहल्लो-के-मोहल्ले टूट पडते थे। दिन ढलता जा रहा था, नदी के तट पर आम का पौधा चुपचाप खडा था; और उसके पीछे किसी के पैरो की आवाज सुनाई नही दे रही थी।

"देख, कितनी देर हो गई है", भागभरी ने फिर अनुनय-विनय की—"मेरा अग-अग पानी मे ठिठुर रहा है और जमता जा रहा है। मै कहती हूँ कि क्या तुझे किसी को जवाब नही देना ? तुझ पर ईश्वर का कोप टूटे—वह इतना अत्याचार कभी नही सह सकता।"

किन्तु नव्वाब अपने हठ पर अडा हुआ था, अपनी बेईमानी पर डटा हुआ था, मुसकराता रहा, मुसकराता रहा। उसके पॉव लडखड़ा रहे थे, लाल-सुर्ख उसकी आँखे मदिरा के कारण चढी हुई थी। फिर भी वह अपनी जेब मे से बोतल निकालकर थोडी-थोडी देर के पश्चात् घूंट भर लेता। उसने एक-दो बार बोलने का प्रयत्न भी किया, किन्तु

यह जान पडता था जैसे वह बोल ही नही सकता था, उसकी जिह्वा जैसे तालू के साथ चिमट गई थी।

भागभरी को ऐसा अनुभव होने लगा, जैसे वह एक धक्का देकर उसे पानी मे गिरा देगी। आखिर उसने उससे कहा कि केवल एक कमीज़ वह उसे लौटा दे, उसे पहनकर वह बाहर आ जायगी — "मै कमीज़ पहनकर भाग नही जाऊँगी, तू मेरा स्त्री होने का विचार कर, मुझे केवल एक कपड़ा दे दे!"

किन्तु नव्वाब जैसे उसकी बात सुन ही नही रहा था, पत्थर के समान वैसे-का-वैसा स्थिर खडा था।

भागभरी ने अपने पति के बिखरे हुए कपडो की ओर व्यर्थ ही देखा। भागभरी ने अपने जवान लडके के कपडो की ओर ताका—उन कपडो को पहनने वाला सरदार बेटा अपने साथियों को आदेश दे रहा होगा।

भागभरी को ऐसे लगा, जैसे उसका सारा शरीर जम गया हो। क्षण-भर यदि वह और पानी की ठंडक मे रही तो वह पानी से निकल नहीं सकेगी।

भागभरी ने तग आकर फिर झुँझलाना आरम्भ कर दिया, उसे बाप-दादा की सौगन्ध दी, किन्तु नव्वाब जैसे मिट्टी का बना हुआ था कि उस पर कोई प्रभाव नही पडता था, कोई बात उसे न पिघलाती। एक अत्यन्त भयावने ढँग से वह अपने दात पीसता, अपनी आँखें चमकाता और भागभरी की ओर मूर्खो की भाँति घूरता।

"तेरा सर्वनाश हो, मै तेरी माँ की जगह हूँ!"

यह वाक्य भागभरी के होठो में दबा हुआ था कि नदी के दूसरे किनारे दीवार-ऐसे टीले पर से एकाएक एक भेड गिरी, फिर एक और, फिर एक और, और पलक झपकते सारे-का-सारा रेवड़ नीचे आ रहा, जैसे भूकम्प आ जाता है, जैसे ससार समाप्त होने लगता है, नदी के पानी में उथल-पुथल मच गई।

भागभरी को पता न चला और कपडे फैककर, नव्वाब नौ-दो-ग्यारह हो गया।

विस्मित और अवाक्, किनारे पर खडी भागभरी भेड-बकरियो से भरपूर जोहड की ओर देख रही थी। कुछ मर चुकी थी और कुछ मर रही थी—दीवार-से टीले पर खडा एक बुली कुत्ता घूर-घूरकर नीचे की ओर देख रहा था। उसकी जिह्वा बाहर निकली हुई थी, उसके मुँह से झाग बह रही थी, बिल्कुल नव्वाब के मुँह से निकले हुई शराब की बूँदो के समान, जिन्हे वह जिह्वा फेरकर कभी-कभी चाटता था।

हाँपती हुई भागभरी चुपके से चट्टान पर चढ गई। आम के पौधे तले से निकलते समय उसे आवाज आई 'ये तेरी माँ की जगह है, तेरी माँ की जगह है!" और यह आवाज उसके कानो मे गूँजती रही, गूँजती रही, जब तक वह दूर निकल गई।

सफेद-पत्थर



१५

हवेली की मुंडेर पर एक चील बैठी थी। जब सबेरे बहादुर काम पर पहुँचा, तो पहले उसने नीचे से, और फिर उसने ऊपर चढकर उसे उडा दिया।

जहाँ भी बहादुर काम किया करता, वहाँ समय से आध घटा पहले पहुँचा करता. अवकाश के समय के बाद तक ठहरता, अपना काम जी लगाकर, जान तोडकर किया करता। कभी किसी को शिकायत का अवसर न देता, अपने साथ के श्रमिको से अधिक सम्बन्ध नही रखता था। बहुत कम बातें करता; जैसे घर मे चुपचाप पड़ा रहता, ऐसे ही काम करते समय अपनी धन में सलग्न रहता। बहादुर का काम सदैव साफ़-सुथरा होता, जहाँ दो मज़दूर लगते, वहाँ वह अकेला उतना ही काम कर देता! फिर भी बहादुर के साथ के मजदूर, शिल्पी, बढई, सफेदी और टीप करने वाले मिस्त्री बन गए। किन्तु बहादुर ईंटे, चूना, गारा ढोने वाला मजदूर ही रहा। बहादुर अधिक लोभ नही किया करता था, उसका और उसके परिवार का पेट भर जाता था, और इससे अधिक की उसे आवश्यकता भी नही थी, न वह किसी की बुराई में न भलाई में।

जहाने ने कई बार उसे फिर समझाया कि वह जमीदार के अस्तबल

मे अथवा बाग मे काम करे, उसकी पत्नी भी उस काम में उसका हाथ बॅटा सकती है और वे दोनो ज़मीदार की हवेली मे आ रहें। बहादुर को तो इसमें कोई आपत्ति नही थी, किन्तु उसकी पत्नी नही मानती थी; और वह सदैव टालमटोल कर जाता तथा अब जब से उसका लडका जवान हुआ था, वह बात-बात मे ज़मीदार के गुंडो के साथ मज़ाक किया करता था। उसके पिट्ठुओ और चाटुकारो पर नाक-भौ चढाया करता था। जब ज़मीदार की किसी हवेली के निकट से निकलता, तो वह अपने साथियो से कहा करता कि वे सारी हवेलियाँ उनकी अपनी थी। ऊँची-ऊँची हवेलियाँ, मीलो तक फैले हुए उपवन, जमीदार और उसके चाटुकारो की घोडियाँ खेल-खेल मे वह इन सबको अपने साथियो मे बाँटता रहता, जैसे किसी ने कोई स्वप्न देखा हो। इस प्रकार की नई-नई बाते उसे सूझती और उसके साथी दग रह जाते। वह कहता कि उन हवेलियो को गिराकर वह समतल कर देगा, और उसके साथियो की समझ मे यह बात न आती।

बहादुर आज काम पर पहले से अधिक सबेरे आ गया था। चील उडा कर वह कुछ समय मुंडेर के पास खडा रहा कि चील फिर न आकर वहाँ बैठ जाय। बहादुर किसी चील को कोठे पर बैठा हुआ नही देख सकता था—"यह नामुराद सदा उजाड और वीराना माँगती है!" फिर बहादुर ने सोचा कि उस हवेली को तो ये लोग ढा रहे है, इससे अधिक उजाड़ और क्या हो सकता था।

कोठे पर खडे-खडे बहादुर की दृष्टि बाहर की ओर पोठोहार की धरती पर पडी, जैसे उसकी आँखों में मादकता भर गई हो। उसका सिर झुक गया—फ़सलो मे कुत्ते दौड रहे थे, सलवारें उड रही थी, लहँगे सरसरा रहे थे, हाथ उठते थे, ऊँची आवाज़े आती थी, गीतो के बोल गूँजते रहते थे। हरे-भरे लहलहाते खेत—कभी ये सब खाइयों में छिप जाते और कभी टीलो पर चढे दृष्टिगोचर होते। कही पत्थर-ही-पत्थर थे, पत्थरों के पास कही बरसाती नाला ठाठे मार रहा था, कही

रहट चल रहा था, ख-ख टिक्-टिक् ! जहाँ दूर दिखाई देता हुआ धुँधला आसमान चट्टानो से मिल रहा था, वहाँ झाडियाँ-ही-झाडियाँ थी, चारो ओर बेरो से अटी हुई बरियाँ थी। भेड बकरियो के रेवड-के-रेवड झाडियो पर टूटे पडते थे, और उन रेवड़ो के साथ चरवाहे बेरियो को नोच-नोचकर खाते, झोलियाँ भर-भरकर फसलो में काम करती हुई पोठोहारनो में बाँटते। मंद-मद शीतल समीर बह रहा था, जिसमे एक मादकता भी, सुगधि थी। गाय-भैसो के झुण्डो-के-झुण्ड गाँवो से निकल कर चारो ओर से आ रहे थे। बैलो की गरसा मे पडी हुई घटियाँ, कुत्तो, के सकेत समझती हुई गौएँ, भैसो की पीठो पर बैठे हुए चरवाहे, ठुमक-ठुमक अपनी चाल चलते हरियाली की ओर एक गहरी तलहटी मे चलते जा रहे थे। कभी-कभी हवा का एक ऐसा झोका आता, जिससे सारी-की-सारी घाटी जैसे हिल जाती। तिलियरो की पक्तियो-की-पक्तियाँ एक खेत से उडकर दूसरे खेत पर जा बैठती, फाख्ताओ के जोडे एक दूसरे के साथ सट कर चोच-मे-चोच डालते, पखो-से-पख मिलाते, प्रतिपल प्रेम के उदक से केलि कर रहे होते। कबूतरो की टोलियाँ ऊपर आकाश से नीचे उतरती, नहाते हुए, धुले हुए, दूध ऐसे श्वेत, काले, सलेटी रग के, चितकबरे, रगबिरगे कबूतर, फिसलते हुए पेडो और मुँडेरों पर आ ढिकते। और जब गगन-मंडल पर तेज़ी के साथ मुर्गाबियाँ गुज़रती तो एक फुँकार की ध्वनि उठती और बस—बटेर जितने एक खेत से दूसरे खेत मे छिप-छिपकर बैठते, उतने अधिक फँसते, और उनके ढेरों-के-ढेर बाज़ारों मे आकर बिकते।

सोचते-सोचते बहादुर अपने विचारों मे डूब-सा रहा था कि उसे नीचे हवेली के दालान में चहल-पहल बढती हुई अनुभव हुई···और बहादुर नीचे आ गया।

इतने बडे भवन को आजकल गिराने का काम हो रहा था, उसकी जीर्ण-शीर्ण दीवारे गिराई जाती, उसके स्तम्भ तोढे जाते, देर से खडी हुई उनकी छते नीचे बिछा दी जाती।

कई श्रमिक इस काम पर लगे हुए थे, हवेली भी कोई छोटी नहीं थी। प्रत्येक टोली ने उसका एक-एक भाग सँभाला हुआ था। फावडे, बेलचे, प्रत्येक टोली के पास अपने थे। बहादुर तथा पाँच अन्य मज़दूर एक हिस्से मे काम कर रहे थे, जो दूसरो से कुछ दूरी पर थे।

बहादुर जब कभी काम में जुटता अपनी जान लडा देता। पसीने-पसीने हो जाता, एक क्षण के लिए आराम न करता। उसके साथी कभी पानी पीने के लिए, कभी हुक्के के कश लगाने के लिए, कभी नमाज़ के बहाने, कभी यह कहकर "ज़रा सी देर के लिए साँस ले लें" खिसक जाते। बहादुर सभी काम करता—टोकरी भरता, बेलचा चलाता, फावडा चलाता, गेनती से कठोर-से-कठोरतम धरती को उधेड देता। वैसे भी बहादुर जीवन मे कठिन-से-कठिन काम किया करता था, किन्तु काम के समय किसी दूसरे का व्यर्थ गीत गाना अथवा हँसी-ठठ्ठा करना उसे एक आँख न भाता था, स्वयमेव काम किये जाता।

उसके साथ के मज़दूर अक्सर उसे जमीदार का सच्चा हितषी कहा करते थे। जितना अधिक वह काम करता, उतना अधिक उसके साथ ठठ्ठा किया जाता। किसी-किसी दिन तो बहादुर अकेला इतना काम करता जितना अन्य सब मिलकर करते। बहादुर के पट्ठो मे इतनी शक्ति नही थी जितनी काम करने की चाह थी; फिर भी वह बिना किसी की सहायता के दीवारे गिरा देता और स्तम्भों को धूलिसात् कर देता, किसी भवन को गिराने के सबसे कठिनतम कार्य यही थे।

काम अभी कठिनता से आरम्भ हुआ था कि बहादुर ने क्या देखा कि जहाना उधर आ निकला है। जहाना जो कुछ बहादुर से कहा करता था, उसमे उसे कोई आपत्ति नहीं थी, पर उसकी समझ मे नही आता था—उसकी पत्नी क्यो अपने हठ पर अड़ी हुई थी कि ज़मीदार की हवेली में जाकर नही रहेगी; उसके घर का कोई काम नही करेगी। अब भागभरी का लड़का भी जवान हो गया था, और वह जमीदार के सम्बन्ध मे कुछ दूसरी तरह की ही बाते किया करता था।

जहाना कितनी देर तक बहादुर और उसके साथियो को काम करते देखता रहा, और बहादुर के काम की विशेष प्रशसा करता रहा। एक गति से चलता हुआ बहादुर का फावडा जहाँ-जहाँ पड़ता, वहाँ-वहाँ बालिश्त भर गहरा गढा बन जाता। उसका फावडा कभी व्यर्थ की चोट न लगाता, उसका बेलचा अत्यंत सुचारु ढग से समेटता-लपेटता और साफ करता जाता।

जब बहादुर ने आज एक बार फिर इन्कार कर दिया, जहाने को उस पर दया आई। उसने दर्द भरी नजर से उसे देखा, और फिर हवेली के दूसरे भागो मे काम करते हुए मजदूरो की ओर चला गया। लगभग आध-पौन घटे बाद वह लौट आया—बहादुर वैसे-का-वैसा, सलग्नता से अपने काम पर जुटा हुआ था। जहाने ने बहादुर को कुएँ से एक ठडे पानी का डोल लाने के लिए भेजा, और जब वह आँखो से ओझल हो गया, उसने उसके साथ के दूसरे मजदूरो को इकट्ठा किया और कितनी देर उनके साथ खुसर-फुसर करता रहा। आखिर सारे-का-सारा टोला एक छत के नीचे जा खडा हुआ और जहाना हाथो से सकेत कर-कर के समझाता रहा।

बहादुर पानी लेकर आ गया। जहाने ने उसके हाथों से शीतल जल पिया और उसे प्रसन्न चित्त से जैसे आशीष दी—"बहादुर तू जीता रहे! और ईश्वर तुझे लडके दे!"

और जहाना फिर चला गया।

बाहर अपने काम में व्यस्त और फावड़ा चलाते-चलाते बहादुर बार-बार सोचता कि जहाना इतना बुरा आदमी तो नही था, जितना उसकी पत्नी उसे समझती थी। और वह विस्मित था—भागभरी क्यो यूँ अपने हठ पर डटी हुई थी, और इतने वर्ष बीत गए थे।

बहादुर ने आकाश की ओर देखा और अनुभव किया—आकाश कितना पुराना है! फिर उसे अपनी आयु का विचार आया। बहादुर ने सोचा कि वह बूढ़ा हो रहा था। यदि उसका वह लड़का जीवित होता

जिसके मस्तक पर त्रिशूल था तो वह संभवतः अधिक बूढा लगता। अभी बहादुर के बूढा होने का कोई समय नहीं था, भागभरी उसकी पत्नी उसके घर में थी, और फिर उसकी पत्नी का लडका ! बहादुर कैसे मर सकता था ?

हे कटीले* बबूल ! तेरी छाया शीतल है
राहगीर तेरी छाया तले बैठ जाते है
और महफिल लग जाती है !

दूर खेतो मे कोई गीत गा रहा था, गाए जा रहा था। बहादुर लाख प्रयत्न करता, किन्तु बार-बार उसका ध्यान उस गीत की ओर खिच जाता।

बहादुर हैरान था—कोई तनिक-सा ऊँचा बोलता अथवा कोई रूखी आवाज देता तो बार-बार उसका हृदय बैठ जाता। शरीफे ने पत्थर पर गेनती चलाते हुए साँस जरा जोर से लिया तो बहादुर चौंककर बडी कठिनता से गिरते-गिरते सभला। आज बार-बार उसे पसीना आता और बार-बार माथे पर अँगुली फेरकर पानी की धार गिराता।

जभी उसके साथियो ने परामर्श दिया कि एक ही बार किनारो को उखेडकर छत गिरा दी जाय। किन्तु यह बात बहादुर को न जची—"न जाने आज मै क्यों सबेरे-सदेरे थक गया हूँ !" उसने आखिर अपने एक साथी से कहा और वह उत्तर में केवल ँस दिया।

कुछ समय बाद आज बहादुर को पहली बार सामने एक पेड तले बैठकर सुस्ताता देखकर उसके अन्य साथियो ने उसे छेडना आरम्भ कर बहादुर उठकर अपने काम मे जुट गया।

"बहादुर यार पानी पियेगा ?" उसके एक साथी ने पानी का कटोरा समाप्त करते हुए उससे पूछा—फिर उसने उसे स्मरण कराया कि पोठोहार का-सा शीतल ‹. ‾ड़ी और नही मिलता।

इतने समय मे बहादुर के देखते-देखते उसके साथी श्रमिकों ने किनारे उखेडने आरम्भ कर दिये। बहादुर मे शक्ति नही थी, गेनती कहीं

चलाता किन्तु वह पडती कही। आखिर तग आकर वह पीछे हट गया। बबूल के पेड़ तले उसकी आँख लग गई और वह लेट गया। सोते-सोते बहादुर ने स्वप्न मे देखा कि उसका धड टुकडे-टुकडे हुआ पड़ा है, और वह ताडवृक्ष की गोद से उन्हे जोड़ रहा है। जिस टुकडे को बहादुर हाथ लगाता, वही टुकडा कहता है कि पहले दूसरे को जोड ले। और इस प्रकार कोई टुकडा उसके हाथ नहीं आता। फिर बहादुर ने देखा कि कोई पथिक उसके टुकड़ो पर आकर दूध गिराता है, और सारे-के-सारे टुकड़े स्वयमेव मे जुड जाते है।

पसीने मे तर बहादुर सहमा हुआ उठा। उसके साथी उसे आवाजें दे-देकर थक गए थे। बहादुर को अपने आप पर अत्यन्त क्रोध आया और वह एक आवेश मे उठकर काम पर जुट गया। उसके जिम्मे एक खम्भे को सँभाले रहना था, ताकि अन्य लोग किनारे खोद लें।

ज्यो-ज्यो किनारे खिसकते, छत चिरचिराने लगती, किन्तु बहादुर अँधाधुँद खम्भे को पकडे स्तभवत् खडा रहा। प्रतिक्षण प्रत्येक चोट पर खम्भे का बोझ बढता जा रहा था और बहादुर के चेहरे पर रगे जैसे उभर-उभर कर बाहर आ रही थी। उसके माथे का, सिर का, कंधो का पसीना बह-बह कर उसके गुल्फो तक जा रहा था। उसके ऊपर के दाँत निचले होठ मे खुल रहे थे, उसकी आँखे व्यग्र हो उठी थी, जैसे इस भावावेश से निकलकर बाहर आ जॉयगी।

"अबे ओ बहादुर! इस खम्भे को पकड़े रहना!" उसे बार-बार ये आवाज आती और उसके साथी उसे यह विश्वास दिलाते कि वे स्वय अभी तक अहाते में खडे किनारे उधेड रहे थे। बहादुर बोझ-तले बिल्कुल झुक गया था, वह जानता नही था कौन कहाँ है? कौनसी आवाज़ किधर से आ रही है?

बहादुर ने खम्भा संभाले रखा, सभाले रहा! उसके साथी 'शाबास शेरा" कहते हुए फावडे-पर-फावडा और गेनती-पर-गेनती चला रहे थे।

जैसे कोई सोया हुआ जाग पडता है, बहादुर को भी ध्यान आया कि उसने आखिर खम्भा पकड़ा ही क्यो था ? वह उसे छोड दे तो क्या बनेगा ? इतने मे एक अत्यंत क्षीण-सी चिरचिराहट हुई और छत नीचे गिर पडी ।

एक कोलाहल उठा, एक कुहराम-सा मच गया । गर्दोगुबार मे खड़े बहादुर के साथियो को यह निर्णय करने मे कोई देर न लगी कि बहादुर छत के नीचे आकर बिन आई मर गया है । इससे पहले कि लोग वहाँ पहुँचते, सब यह जानते थे कि उसे क्या कुछ कहना है ।

गर्दोगुबार उठ-उठकर, ऊँचा हो-होकर नीचे बैठ गया ।

त्रिंजन ![1]



१६

फूलां, साह्बो, सलेटी, सतभराई और आयशा त्रिंजन की रौनक थी। इनके अतिरिक्त लड़कियो के झुरमुट-के-झुरमुट इस दालान मे आते, सारा दिन एक मेला-सा लगा रहता। लडकियाँ काम करती, खेलती, खाती; और जब थक जाती तो दूसरो की चर्चा ले बैठती। बातो से बातें निकलती, जैसे अंटी के साथ अटी जोड दी जाती है। गली, मोहल्ले और प्रदेश की कोई ऐसी बात न होती जो उन तक न पहुंचती, और फिर मिलकर ये स्त्रियाँ राई का पहाड बना देती।

आयशा सबसे अधिक सुन्दर थी सतभराई उससे कम, सलेटी फिर उससे कम, और शेष सब पोठोहारने थी, गोरी-चिट्टी, कोमल-कोमल, सावली और सलोनी; किन्तु एक प्रकार का आकर्षण सब मे था। लम्बी-लम्बी गर्दनें, पतली-पतली कमरे, गोल-गोल सुडौल अङ्ग, बात-बात पर दोहरी हो-हो जाती। उनके रग-बिरंगे दुपट्टे, उनकी कसी हुई कमीजे, उनकी चमक-चमक पड़ती दूध ऐसी श्वेत सलवारें, उनकी तिल्लेदार जूतियाँ, उनकी चोटियाँ एक से एक बढकर प्यारी थी।

गीत उन पोठोहारनो के जीवन थे, खेलती और अपने-आप गाती रहती। कई बार चिलचिलाती धूप में ढोलक लेकर बैठ जातीं। न ढोलक के चमडे फटते न उनके गले बैठते। पोठोहारनों के गीत गभीर-स्नेह, उमडते-चढ़ते प्यार, सिसकती स्मृतियो मे और कभी-कभी आँसुओ का

---

१ स्त्रियों का एक स्थान पर बैठकर चर्खा कातना।

अटूट लड़ियाँ होते थे। सास का अत्याचार, ससुर का बुढापा, देवर का यौवन, पति की नौकरी, भाई की वीरता, माँ का राज, सावन की झडी, जाडे की न समाप्त होने वाली रातें, आम के पेडो का बौर, निम्बुओं का पकना, चर्खे की संगीत-ध्वनि, दालान की सनसनाहट, कई ऐसे विषय थे जो इन गीतों मे पाए जाते थे। और कोई ऐसा हृदय नही था जो इन गीतो को अपने से सम्बन्धित न कर लेता हो। और कई बार निजी मामलों के ये इतने समीप पहुँच जाती कि चटाख-पटाख प्रश्नोत्तर आरम्भ हो जाते। एक-एक बोल में दबी हुई भावनाए उभार लेती ; कभी-कभी दूर कही दिल की गंभीरताओ मे छिपे हुए छाले फूट पड़ते। ढोलक की स्वरयुक्त लय, त्रिंजन का विशाल-एकान्त, धरेक की सघन छाया, जवान पोठोहारनो को मदमस्त कर देती। गीत इन लडकियो को घुट्टी मे मिले होते और स्वयमेव इनके कोष मे इन गीतो की वृद्धि होती रहती। इस प्रकार लोकगीत त्रिंजन के साथ-साथ चलते रहते।

और कही-कही अहाते में अथवा अकेली बेरी की शाखाओ में छिपी हुई सहेलियाँ, परस्पर किसी राँझे की काल्पनिक बातें, स्वप्न ऐसी उखड क्रम और तेजी के साथ सुनाती रहती। फूला सदैव ऐसी जोडियो को जाकर छेडती—"क्यो झूठ बोलती हो ! कुछ तो विचार किया करो—कही आकाश न सिर पर गिर पडे !" किन्तु आकाश धरती पर कभी नही गिरा था। लडकियाँ नित-नई एक कहानी नए ढंग से छेड देती और उन किस्सो के सहारे वे धरती-आकाश में घूमती रहती। किसी का राँझा रूठ जाता, किसी का साजन प्रसन्न हो जाता, किसी को गाने की कामना होती, कोई रगदार चूड़े के लिए तडप रही होती, कोई कव्वो के हाथ सन्देश भेजती, कोई चिडियो को बार-बार चुगा डालती।

"उधर साँझ होती है और इधर मेरा दिल डूबने लगता है !" कोई जली हुई आवाज से लंबे-लंबे साँस लेकर कहती—"रात को सोते मे

मेरा धड पलग पर पड़ा रहता है और मै स्वय नदियो पर घूमती रहती हूँ, खाइयो मे ढूँडती रहती हूँ, टीलो पर चढ-चढ कर देखती रहती हूँ।" न उसके पाँव मे काँटे चुभते और न पानी उसे बहा ले जाता, न पत्थर उसे घायल करते। बिरादरी का, अपने पडोस का भय उसे खाए जा रहा था, उसे यह भय न जागते छोड़ता और न रात को उसे विश्राम लेने देता। उसे ऐसा अनुभव होता जैसे कुत्ते उसके पीछे भाग रहे हो, और जब कुत्ते उसके समीप पहुँचते तो वे सब-के-सब आदमी बन जाते, जिनके हाथो मे लम्बी-लम्बी लाठियाँ और छुरे पकडे होते। कभी उसे ऐसे जान पडता कि वह एक पेड तले सोई पडी है, पास ही उसका प्रियतम लेटा हुआ पत्थर बन गया है और क्षितिज तक धूल बढती जा रही है, बढे जा रही है, घोडो की टापो की ध्वनि और ऊँची होती जा रही है, उनके घोडे फाख्ताओ का जोड़ा बनकर पेड मे छिप जाते है। एक बार उसे ऐसा अनुभव हुआ जैसे चारो ओर रुधिर-ही-रुधिर छिटका हुआ है और हर जगह अड़ोस-पडोस के लोग बत्तीसी भीच-भीचकर देख रहे है। रता की सरिता म जहाँ कही सीधी भी वह दृष्टि डालती तो अपने चेहरे के स्थान पर बिरादरी के लोग उसे कोसते दिखाई देते।

कही—नई-नवेली दुल्हिने और कँवारी लड़कियाँ बडी-बूढी स्त्रियो से पाठ सीखती—कैसे सास की बाते अनसुनी की जाती है, कैसे प्रियतम को बहलाया जाता है, कैसे मायके सन्देश भेजे जाते है, भाई को बुलाया जाता है, पडोसियो से मेलजोल के गुर, सम्बन्धियो से निबटने के टोटके, महँदी कब लगाई जाती है, कब उतारी जाती है, कैसे उतारी जाती है, कैसे बुखार चढता है, कैसे बुखार उतरता है, कौनसा जादू-टोना करने से दालान मे सन्तान खेलती है, कौनसा मत्र पढने से यौवन इठलाता है, रग खिलता है—और न जाने क्या-क्या।

खेलते समय एक मुसीबत-सी आती। शोर होता, किसी को कोई खेल अच्छा लगता और किसी को कोई। कई बार अलग-अलग टोलियाँ

बनाई जाती, जो 'अड्डीतरप्पा' न खेल सकती वे 'गिट्टे' खेलती। खेलती-खेलती एक-दूसरी की सास को जी भर कर गालियाँ देती, उनकी छोटी-छोटी दुर्बलताओ की खिल्ली उड़ाती। कई बार कोई चचल लड़की नाटक रचाती—कोई किसी की सास बन जाती और कोई उसकी बहू, और फिर वे ऐसे भेद खोलती कि सारे त्रिजन के हँस-हँस कर पेट मे बल पड़ जाते, पसलियाँ दुखने लगती।

न जाने कहाँ से सलेटी के पास सदैव सारे प्रदेश की समूची डायरी होती, चुपके से वह कोई नई बात छेड देती, और फिर प्रत्येक अपनी ओर से कुछ-न-कुछ और बढा देती—और इस प्रकार कहानी बन जाती। सलेटी ने शेरे की पत्नी को जहाने के घर जाते हुए देखा था, जहाने की पत्नी इन दिनो मायके गई हुई थी। सत्तो ने जहाने को एक दिन मुँह-अन्धेरे शरे के घर से निकलते देखा था। फूलाँ सोचती—एक दिन जहाना पेड़-तले खड़ा था, और जब वह नदी पर से होकर आया ता, उसन दखा–शेर की पत्नी तेज-तेज आह भरती नीचे जा रही थी। फिर कई यह कहने लगती कि जहाना सुन्दर था, कई यह कहती कि शेरे की पत्नी सुन्दर थी। कई स्त्रियो को शेरे पर दया आती और कई शेरे को गालियाँ देती हुई कहती कि वह पहले तीन पत्नियो को खा चुका था। कई स्त्रियाँ जहाने की पत्नी के विषय में सोचती—कई स्त्रियाँ सोचती कि उसे इस बात से क्या आकर्षण था, नारी को केवल बच्चे चाहिएँ, बच्चे मिल जाँय तो उसका पति जहाँ चाहे झख मारता रहे, फिर कोई परवा नही होती। और त्रिजन की नई रगरूट स्त्रियाँ दग रह जाती कि ये बाते क्योकर होती थी। कोई स्त्री दूसरो के पुरुष की ओर कैसे आँख उठाकर देख सकती है। उस समय उस पर बिजली क्यो नही गिर पडती, धरती क्यो नही फट जाती, भूकम्प क्यो नही आ जाता, ससार वैसे-का-वैसा क्यो रहता है ? अधिक भावुक स्त्रियाँ काँप उठती, उनको पसीना आ जाता ; घर जाकर अपने पतियो के हाथो को अनुभव करती, उनके अधिक समीप हो-होकर बैठती, और सारी रात

जाग-जाग कर पहरा-सा देती रहती।

सुन्दरता के किस्से प्रायः छिडते। किस की ग्राँखें मस्त थीं, किस की मोटी थी, किस की मासूम थी, किसकी भोली-भाली कामिनियों ऐसी थी। किसका जूडा भारी था, किसके बाल घुँघराले है, किसके रेश्म जैसे सुकोमल है, किसके बाल कमर तक गिरते है, किसके उससे भी नीचे घुटनो तक गिरते हैं। इस प्रकार शरीर के प्रत्येक भाग की चर्चा की जाती। सुन्दर लडकियों की कहानियों में जमीदार की लडकी रेशमा की भी चर्चा होती, न उसके गज-गज भर के लम्बे बाल थे, न उसकी मृगी जैसी मस्त ग्राँखें थी, न वह गोरीचिट्टी थी, बस वह एक धला-धुलाया चित्र था, जिसका नखशिख स्वयमेव प्यारा लगता है, जिससे सौन्दर्य और ग्राभा फूट रही होती है। जो लडकियाँ कभी उसे मिली थी, वे उसकी प्रशसा करते-करते थकती नही थी, कई लडकियाँ कहती, रेशमा कितनी सौभाग्यशालिनी है, जमीदार की इकलौती लड़की सारे प्रदेश की शासिका है। बहुत-सी लड़कियो की धारणा कुछ और ही थी। वह साधारण लडकियो के समान त्रिजन मे नही ग्रा सकती थी। साधारण लडकियो के समान वह हँस नही सकती थी, साधारण लडकियो के समान वह खेल नही सकती थी, और इस प्रकार बातो-बातों मे कोई चचल लडकी कह उठती—"मै कहती हूँ कि उसका भी कोई होगा, जिसकी स्मृतियाँ उसे मदहोश रखती हो, जिसके लिए जीवन में ग्रानन्द ग्राता है, जिसके लिए मरना प्यारा लगे, जिसके लिए ग्राँखें बार-बार देहली की ग्रोर जाँय, जिसके लिए खिडकियो मे खड़े होने मे संतोष प्राप्त हो—ग्रौर सब-की-सब उसकी चंचलता पर हँस पड़ती।

जब कभी रेशमाँ की चर्चा त्रिजन में होती, सदैव उसके बाद भागभरी के लडके फर्मान की बातें छिड़ जाती। न जाने शायद इस-लिए कि दोनों की ग्राँखें बिल्ली जैसी थी, न जाने शायद इसलिये कि वह सरदार की लड़की थी, और फर्मान दिन-प्रति-दिन जवान

स्त्रियो के दिलो का सरदार बनता जा रहा था। बहादुर की टुकड-टुकड़े लाश को जब दफनाया गया तो प्रदेश भर मे कोई ऐसा व्यक्ति नही था, जो फर्मान के गले लगकर दहाड़े मार-मार कर न रोया हो। कई बार गली-कूचे मे से फर्मान को देख कर अल्हड़ जवान लड़कियो की आँखे भीग जाती। कई स्त्रियाँ कहती कि रेशमा ने उसे संदेश भिजवाया था, कई स्त्रियाँ कहती कि रेशमाँ उसके घर स्वयं गई थी। कई कहती फर्मान रेशमाँ के पास आया था। सलेटी कहती रेशमा यदि जमीदार की लडकी न होती तो उसे यह अनुभव होता जैसे रेशमा और फर्मान बहन-भाई है।

फर्मान की कोमल प्रकृति किसी निर्धन लड़के जैसी मालूम नहीं होती थी—सुभद्रा सलेटी पर हँस देती—फर्मान जमीदार के खून का प्यासा था। फर्मान इस बात के लिए तडप रहा था कि वह जमीदार की ऊँची-ऊँची मुंडेरो वाली हवेली को गिराकर धरती पर बिछा दे। फर्मान जमीदार के घोड़े, बाज और कुत्ते देख कर दाँत पीसता था। सुभद्रा ने स्वयं सुना था कि फर्मान उसके भाई को एक बार कह रहा था, और फिर उनकी कोठरी मे बाहर के गाँवो के लोग फर्मान से आकर परामर्श किया करते थे, लेकिन सुभद्रा के भाई से उसने यह वचन लिया था कि वह यह बात किसी से कहेगा नही। त्रिंजन मे लड़कियाँ सदैव ऐसी ही बाते किया करतो, और उस समय सुभद्रा की हँसी न रुकती। किन्तु कभी किसी ने उसका हसी पर विशेष ध्यान नही दिया था।

कभी-कभी लड़कियाँ ढेरो को बुला लाती और सब-की-सब सारा दिन उस से चिमटी रहती। कोई उसे हाथ दिखाती, कोई उससे तावीज बनवाती, कोई बड़े कमरे मे जाकर उसे अपने गुप्त रोग बताती, कोई उस से झाड़-फूँक करवाती, कोई मन्त्र पढ़वाती। ढेरी भी किसी को लड़का देती, किसी को सहारा, किसी को उसकी सास से छुटकारा दिलाती,

किसी को इन्कार न करती । प्रत्येक की कामना-पूर्ति के लिए स्वीकृति देती, शाम को वह मिल कर ढेरो को खाना खिलाती, अचार, प्याज सबेरे की बासी रोटियाँ और कभी कभी पकौडे होते । प्रसन्न होकर कभी कोई लडकी उसे अपना दुपट्टा उतार कर दे देती, कोई उसे कमीज़ देने का वचन देती, और जब इस प्रकार वचन देने के अनन्तर वह शाम को जाने लगती तो उसके जाने के पश्चात सब लडकियाँ उसे लाख-लाख गालियाँ देती और सोचती कि वह क्यो उसकी बातो मे हर बार आ जाया करती है । कई बार उसे इस विचार से बुलवाया जाता कि पकड कर उसकी गत बनाएंगी, किन्तु उसके सामने किसी को साहस न होता, सब अपनी चतुराई और षड्यत्र भूल जाती ।

कई स्त्रियाँ कहती—देसे के पास एक जादू था । फूलाँ यह बात न मानती । सत्तो कहती—"तू उस समय मानेगी जब तुझे उसके हाथ लगेगे ।" सत्तो स्वय भी बढ-चढ कर बाते किया करती थी । पिछली बार जब मायके से आई थी तो 'सुहाँ' ठाठे मार रहा था । सब यात्री सुहाँ के किनारे बनी बीबी पाकदामन की कब्र पर पत्थर रखते और मन्नत मानते । सत्तो आगे से हंसती, और जो दो दिन उन्हे दरिया से पार होने के लिए प्रतीक्षा करनी पडी, तो वह अपने बच्चे के लिए क्रोशिए से कुछ बुनती रही । आखिर तीसरे दिन पानी उतर गया और एक चरवाही आई । वह सबको बारी-बारी दरिया के पार ले जाती रही । चरवाही ने उसका लड़का पकड लिया और हंसती-खेलती उसे पार ले गई । पानी मे से निकल कर सत्तो ने अपनी सलवार के पाँयचे सीधे किये, बच्चा सत्तो को पकडाकर चरवाही हंस पडी । जोर से हँसी और फिर उसके देखते-देखते हवा मे विलीन हो गई । सामने उसके पशु चर रहे थे, और वह एक धुंद-सी बनकर अतर्ध्यान हो गई । सत्तो को ऐसी मच्छी हुई कि दो दिन तक होश न रही और अब प्रत्येक पूर्णमासी को वह सुहाँ की बीबी पाकदामन वाली कब्र पर जाकर एक पत्थर रखती, और कितने ही महीनो से वह ऐसा ही कर रही त्री ।

गली-मोहल्ले मे त्रिंजन का कोई आनन्द नही आया करता था। लडकियाँ न खुल कर हँस सकती न खुल कर गा सकती और न खुल के खेल सकती। अडोस-पडोस का भय—कई स्त्रियो का तो काम ही यही था कि अल्हड जवान लडकियो की बाते छिप कर सुने और गली-गली उन बातो को फैलाएँ। फिर कभी किसी लडकी की माँ को आवश्यकता होती, तो वह आवाज देकर बुला ले जाती—"चावल कहाँ रखे है ? बेटी साबुन कहाँ रखा है ? बेटी जरा इधर आना, सूई मे धागा डाल देना, मुझे दिखाई नही देता।" सास तो कभी अपनी बहुओ को साँस नही लेने देती थी। बाते करने के लिए दालान मे आ बैठती और वे वही धरना देकर बैठ जाती। कभी पाँव दबवाती, कभी जुएँ निकलवाती, खौ-खौ करके जगह-जगह थूकती रहती और त्रिजन का आनन्द-भग कर देती। लडकियाँ तंग आकर धीरे-धीरे अपना त्रिजन हवेली मे ले आइ। यह हवेली कस्बे के बाहर एक ओर को थी—इसमे एक छोटा-सा बागीचा था, लम्बे-लम्बे कमरे थे। दालान मे आम का पेड था, जिसने चारो ओर घेरा डाला हुआ था। धरेक के पेड थे, जिनकी छाया बडी शीतल थी और ये कई जोडो को अपनी ओर खीचते।

लडकियाँ प्रतिदिन अपने त्रिंजन मे एकत्रित होती, हंसती-खेलती, चर्खे चलाती, कशीदे काढती, सीती-पिरोती और शाम को बडे चाव से अपने-अपने घरो को चल देती।

सावन की झडी लगी हुई थी। लडकियो ने एकत्रित होकर कई चोचले किये—पूए तले और वे छीन-छीनकर खाए। खा-खाकर पका-पकाकर जब थक गईं तो खेलने लगी, खेलते-खेलते शाम हो गई और सहसा लड़कियो ने देखा कि जमीदार अपने एक गुंडे के साथ हवेली मे आ गया है। सब-की-सब अपने कसीदे और कपडे उठाकर भाग गईं। आयशा की पिटारी दालान के एक ताक मे रह गई थी, उठाते-उठाते बेचारी अकेली रह गई।

खेल, जमीदार के गुण्डे ने, पसीने मे नहाई लडकी से पूछा—"ए

लडकी तेरा नाम क्या है ?"

'आयशा' कहकर वह लाज के मारे दोहरी हो गई। उससे कुछ कहा न गया, उसके लिए बोलना कठिन हो गया, उसका कठ सूख गया, उसके हाथ-पाँव शीतल पड़ गए, उसकी आँखो तले अँधेरा छा गया, उसे मार्ग दिखाई दिया न मजिल, उसे यह ज्ञान नही था कि वह बैठी है कि खडी है कि चल रही है।

सामने दालान मे पडी किसी वस्तु को चील झपट कर ले गई फिर एक आई, एक और आई, फिर एक और आई, फिर एक और आई।

बबूल का पेड़ !

१७

अकेली अपने कमरे में बैठी हुई रेशमा एक झटके के साथ उठ खडी हुई। मशीन की भाति क्रोशिये और धागे पर चलती हुई उसकी अँगुलियाँ उकता गईं और रुक गईं। उसने पलँग के साथ की खिड़की खोली और बन्द कर दी। बाहर प्रकृति जैसे ऊँघ रही थी। उसने पर्दे की सलवटें ठीक की, एक खूँटी पर पड़ी हुई सलवार की धूल झाडी, सामने अंगीठी पर पडी हुई वस्तुएँ छेडी, जो सोधी पडी हुई थी उन्हे टेढ़ा करके रखा और टेढी पड़ी हुई को सीधा कर दिया। फिर रेशमा ने नेकाँ को आवाज दी—जब नेकाँ कमरे में आई तो उसने खाली नजरो से उसकी ओर देखा—कोई ऐसी वात नही थी जो वह नेका के साथ कर सकती, उसने नेका को लौटा दिया।

फिर खाली पड़े तख्तपोश पर वह जा बैठी, तकिये के सहारे लेटने का प्रयत्न किया, फिर उठी दर्पण के सामने जा खड़ी हुई, फिर उसने खिडकी खोली, फिर बन्द कर दी। फिर पर्दें की सलवटें ठीक की, अंगीठी पर पड़ी हुई वस्तुए छेडी, फिर दर्पण के सामने जा खड़ी हुई, फिर उसने नेका को आवाज दी।

जब नेका कमरे में आई तो रेशमाँ का जी चाहा कि वह उससे पूछे उसे क्या हो गया था। उसे यह अनुभव होता जैसे वह घुटी और दबी

जा रही हो, जैसे उसे पंख लग जाँयगे और वह उड जायगी। विशाल और विस्तृत आकाश मे !

रेशमा ने आज मलमल का खुला-सा कुर्ता पहना हुआ था। उसकी सलवार के पाँयचे उसके पाँवो पर ढलक-ढलक जा रहे थे। उसका दुपट्टा उसके सिर पर भी था और उसके कंधो से नीचे भी लटक रहा था, उसके कानो मे झुमके और बालियाँ नही थी, उसकी गोल और गोरी कलाइयाँ नंगी थी, उनमे न काँच की चूडियाँ थी न सोने की, उसकी अंगुलियो मे अंगूठी आदि कुछ भी नही था, और बिल्कुल यूँ ही रेशमाँ की खाली आँखे अधिक मोटी जान पडती थी, उसकी नाक अधिक तीखी दिखाई दे रही थी, उसके केश जैसे रेशम के गच्छे हो और किसी ने चुपके से आकर उन्हे उसके सिर पर रख दिया हो। उसे तब ऐसा अनुभव होता था जैसे उस स्तब्धता मे एक विकलता-सी, एक व्यग्रता-सी, एक व्याकुलता-सी, एक कर्कशता-सी करवटे ले रही है।

नेका रेशमाँ की ओर देखती रही, देखती रही—और फिर सहसा वह हँस पडी। हँसी की बस एक लहर, इससे अधिक कुछ और नही। दाईं ओर की दीवार मे एक खिडकी थी, नेका ने बढ कर उसके पट खोल दिये। उसकी आँखे कह रही थी कि जो विकल हो, उसे हवा की आवश्यकता होती है, जिसका हृदय व्यग्र हो उसे अधिक प्रकाश चाहिए—और फिर खिडकी के पट के साथ लग कर वह खडी हो गई।

नीचे एक लम्बा-चौडा दालान था। दालान के एक ओर ड्योढी थी, ड्योढी के आगे तक और ड्योढी, फिर एक और दालान, फिर द्वार, उसके पश्चात कितना ही स्थान खाली था, फिर जाकर कही बडा दरवाजा आता था। दूर···सामने दालान के भीतर एक चारदीवारी से परे रसोई थी, कई मजदूर काम कर रहे थे, जहाँ बच्चे भी थे। इतने मे कोलाहल सुनाई दिया, ऊँची-ऊँची चीखें सुनाई दी। रेशमां और नेकां की दृष्टि उस ओर उठ गई। एक अधेड़ आयु की स्त्री डाँट पिलाए जा रही थी, पिलाए जा रही थी, और साथ-ही-साथ छाक

की मटकी उँडेले जा रही थी।

सब-के-सब मजदूर सहमे हुए पीछे हट गए थे। बात वास्तव में यह थी कि एक मजदूर स्त्री हवेली मे छाछ लेने के लिए आई। रसोई मे काम करती हुई एक स्त्री ने छाछ देने को कह दी, और जब वह उसके लिए छाछ बर्तन में से निकाल रही थी, रसोई की देख-भाल करने वाली वहाँ आ गई और क्रोध मे उसने छाछ की सब मटकियाँ उँडेल दी। सरकार का आदेश था कि जितनी भी छाछ घर मे बनायी जा सके, हम बरत ले और जो शेष बचे वह नाली मे बहा दी जाय, गली-मोहल्लो और अडोस-पडोस के किसी व्यक्ति को एक बूंद तक न दी जाय।

और रसोई में पडी हुई सब मटकियाँ उंडेल कर जब उस स्त्री ने छाछ माँगने वाली स्त्री को देखा तो उसके चेहरे पर झुँझलाहट की एक लहर जागी और फिर उसका सारे-का-सारा शरीर ढीला पड़ गया। उसने अपने दो टूक हुए मिट्टी के बर्तन को अतिम बार देखा और चुपके से वहाँ से चली गई।

रेशमा जैसे खिड़की के पट के साथ जुड गई, उसकी आँखे फटी-की-फटी रह गई।

जब उसे होश आया तो उसने नेका की आँखो-मे-आँखे डाल दी, नेकाँ के पास कोई उत्तर नही था जो वह उसे दे सकती।

उस शाम को नेकाँ रेशमा को बागीचे मे ले गई। आडू, आलूबुखारे से लदे हुए पेड धरती के साथ लगे हुए थे। रस से भरे लाल-लाल पीले-पीले मोटे-मोटे आडू गिर-गिर कर धरती पर ढेर के रूप मे पड़े थे। जिस प्रकार मक्खियाँ अपने छत्ते के साथ चिमटी हुई हो, उसी प्रकार आडू और आलूबुखारे शाखाओ के साथ चिमटे हुए थे, और वैसे ही नीचे गिर रहे थे।

फिर नेका उसे बागीचे के एकात कोने मे गज-गज भर के गहरे गढो की ओर ले गई। कई गड्ढे फलो से भर चुके थे और उन पर मिट्टी

पडी हुई थी। कई अभी अधपके और अधकच्चे थे, उन पर अभी मिट्टी पडनी शेष थी। फिर नेकां ने रेशमाँ को समझाया कि जमीदार के बागीचे मे इतने फल होते है कि उन्हे संभालना कठिन है, और यहाँ फल इस प्रकार शीघ्र पक जाता है कि उन्हे बाहर भेजने का प्रबंध ही नही हो सकता। अपने शहर के बाजार मे फल इतना ही भेजा जाता है कि लोग बस तरस-तरस कर ही खा सके। बागीचे में काम करते हुए किसान फल का दाना तक मुँह मे नही डाल सकते थे, सारा दिन रिसते हुए, गलते-सडते हुए फलो को मिट्टी मे दबाते रहते। नेका ने रेशमा को बताया कि उसका चचेरा भाई एक बार इस प्रकार नीचे गिरे हुए फल को खाते हुए पकडा गया था। किसी ने मजदूरो के मुँशी को वह बात बता दी—सरकार ने उसकी नंगी पीठ पर बारह बेत लगाए जाने का दड दिया। और शहतीर ऐसा जवान लड़का कुछ इस प्रकार चारपाई पर पडा कि फिर उठ न सका।

"फिर भी इन पेडो को फल लगते है," अपने-आप ही रेशमाँ के मुँह से यह वाक्य निकल गया। उसकी आँखो में आँसू डबडबा आए, उसके अनन्तर रेशमाँ से वहाँ क्षणभर के लिए भी न ठहरा गया। उसे यो जान पडा जैसे चारो ओर विष घोला जा रहा हो, जैसे सहसा हवा रुक गई हो और उसकी साँस घुटने लगी हो।

अपने कमरे में लौटकर वह अकेली अपने पलग पर आ गिरी, सोच मे डूब गई। रात को उसने खाया न पिया, रात गए तक नेका उसके पास बैठी रही।

और अभी मुँह-अंधेरा ही था कि अचानक उसकी आँख खुल गई। उसके साथ के पलग पर से नेकाँ सहसा उठ खड़ी हुई। छत की दीवार पर उन्होने एक चबूतरा बनवाया था, उस पर चढ़कर एड़ियाँ उठाकर वे अस्तबल मे घोड़ो, कुत्तों, और कबूतरो तथा उनके रखवालो को देख सकती थी। अस्तबल के सब-के-सब नौकर इकट्ठा हो रहे थे—नेका इस बात का पता करने गई, और जब लौटी तो टालमटोल करने

लगी, किन्तु रेशमा कब टलने वाली थी, आखिर पूछकर ही छोडा।

बात वास्तव में यह थी कि साथ के गाँव की दो मिरासनें गोबर और लीद उठाती हुई पकडी गई थी। वे गोबर के उपले बनाकर बेचा करती थी और इस प्रकार अपना पेट पाला करती थी। बाजार मे से होकर वे अस्तबल मे आया करती और कभी-कभी आँख बचाकर मुँह-अँधेरे आती तथा एक तस्ला गोबर लेकर चली जाती। अस्तबल मे चारों ओर गोबर का ढेर लगा हुआ था—किसी को कुछ पता न चलता, किन्तु आज एक मजदूर ने उन्हे गोबर उठाते पकड़ लिया और मार-मारकर बेचारियो का भुरका बना दिया। नेकाँ ने बताया कि दोनो गोबर से लिथड़ी हुई थी, एक की कमर टूट गई थी और दूसरी बेसुध पडी थी, फिर भी जो आता ठोकर मार जाता और गन्दी गाली देता।

रेशमाँ इस बार रात की भाँति चुप न रही। वह नेका से छोटी-छोटी बातें पूछती रही—कोई अमीर और कोई गरीब क्यो है? गरीब कैसे गरीब ही रहता है, अमीर लोग क्योकर अमीर बन गए? उसके पिता जमीदार के पास इतनी धरती कहाँ से आई? ये मजदूर कोई और काम क्यो नही करते? आखिर उसके पिता का पिता इतना बड़ा जमीदार क्यो था? इतनी धरती, इतने बागीचे, इतनी भैंसे, इतनी गौएँ,—उसका पिता इतने वैभव का क्या करता था? उसके पिता के देहान्त के बाद ये सारी सम्पत्ति किसकी हो जायगी? नव्वाब आजकल क्या करता था? नव्वाब ने कौन-सा परिश्रम किया था कि यह सब वैभव उसे विरासत मे मिल जायगा?

रेशमा के प्रत्येक प्रश्न का नेका उचित और सक्षिप्त उत्तर देती रही। जब वे छत पर से नीचे उतरी, तो रेशमा को यूँ जान पड़ा जैसे उसके मस्तिष्क के पट खुल गए हो, सहसा जैसे आत्म-विश्वास की शक्ति जाग उठी, अपने-आप को जैसे वह अधिक जिम्मेदार समझने लगी।

किन्तु अभी रेशमा ने नेका का साथ न छोड़ा। जब भी उसे अवकाश होता, ये दोनो बैठ जाती और नई-नई बाते सोचती रहती, नेकां रेशमा को गाँवो की पूरी-पूरी दशा बताती, अपने शहर के लोगो के विषय मे समाचार लाती और अपनी शक्ति-अनुसार सोचती कि वह क्योकर इन बातो का उत्तर ढूँढ सकती थी।

नेका ने रेशमां को फर्मान के सम्बन्ध मे अधिक विस्तार से समझाया। कैसे शहर का प्रत्येक व्यक्ति उस पर जान देता था, जो वह कहता था लोग वही कुछ करते थे, सदैव नई-नई बाते वह करता रहता था। देखने मे वह एक सुन्दर-सजीला नवयुवक है, वृक्ष के समान वह दीर्घकाय है, गोरा उसका रग है, बिल्ली की-सी उसकी आँखे है। हरएक को प्यार-मुहब्बत से मिलता है, हर समय वह किसी-न-किसी का सेवा मे लगा रहता है, अपनी जान जोखम में डाल लेगा किन्तु अपने पडोसी का दु:ख सहन नही कर सकेगा। घर की छोटी-छोटी बातो के बारे मे लोग उसकी सलाह लेते है, और उसके कहे बिना कोई कदम नही उठाते। सबके साथ वह नम्रता एव विनय से मिलता है, हरेक को अपना अग और अपना एक भाग समझता है।

नेका ने फिर रेशमा को समझाया कि फर्मान इलाके के सभी गाँवो मे अक्सर जाता रहता है। बाहर के गाँवो के लोग भी उसके पास आते रहते है, और तो और, रावलपिडी के शहर में भी वह कई बार जाता है। कभी-कभी कोई पतलून वाला बाबू और कभी-कभी कोई खद्दर-पोश भी उसके साथ आता है। उसने पढना-लिखना भी सीख लिया है और नित-नये दूर देश के समाचार भी अखबारो द्वारा उसे मिल जाते है।

जितना नेका फर्मान के सम्बन्ध मे बातें बताती, रेशमा का जी चाहता कि नेकां और बोलती जाय। न जाने क्यो ये बाते सुन-सुनकर फर्मान उसे अच्छा लगने लगा। जो गीत नेकां उसे आकर सुनाता, उस गीत का बहादुर भाई, निडर सूरमा सदैव रेशमां को फर्मान ऐसा

अनुभव होता और उसका काल्पनिक चित्र उसकी आँखो के सामने घूम जाता ।

जब से रेशमा की धाय नौकरी छोडकर गई थी, नेका और रेशमा के सम्बन्ध अधिक गहरे हो गए थे । उसे घूमने-फिरने की स्वतन्त्रता मिल गई थी, कई बार मुँह-अन्धेरे बागीचे मे घूमने चली जाती। अस्तबल मे हो आती, कई बार यूँ दुपट्टा ओढती कि उन्हे कोई भी न पहचान सकता । एक बार रेशमा ने नेका की सहायता से लड़को ऐसे वस्त्र पहने, जो उसे बहुत भले लगे । हँसते-हँसते वह दोहरी हो गई— फिर कई बार शाम को वह छिप-छिपाकर इधर-उधर झाँकने के लिए जाती तो रेशमाँ लडको जैसे वस्त्र पहन लेती । पहले-पहल तो वह लाज के मारे लाल और पसीना-पसीना हुई रहती, फिर जैसे वह उस वेष की अभ्यस्त हो गई । नेका कुल्ले पर पगडी बधवा लाती और शेष सब कपड़े पहनना तो आसान काम था ।

फिर रेशमा को घोडे की सवारी की भी चाह हुई । उसके लिए जमीदार की आज्ञा की आवश्यकता थी । किसी निर्बल-क्षरण मे रेशमा ने अपने पिता को मना लिया, हर शाम को वह बागीचे में घोड़े को दौडाती रहती । और जब अकेली होती तो सोचती कि यह घोड़ा कभी यूँही दौडता-दौडता बाहर निकल जायगा । दूर…पेडो के झुण्डो से परे नदी के पार पहाड़ियो के पीछे, जहाँ उसे न कोई जानता और न पहचानता होगा, कहानी की राजकुमारी के समान । जहाँ जा कर वह जो-जी चाहेगा करेगी, जो जी मे आयगा, कर सकेगी, जिसे चाहेगी मिल सकेगी ।

फर्मान के सम्बन्ध मे फिर बाते करते हुए नेका ने रेशमाँ को बताया कि साथ के गाँव मे देहाती नाटक होगा, जिसमे फर्मान स्वय भाग लेगा और साथ के गाँवो के कई लोग उसे देखने के लिए जॉयग । नाटक के विषय मे सुनते-सुनते सहसा रेशमा के मुँह से निकला कि वह भी यह नाटक देखने के लिए अवश्य जायगी, किन्तु कैसे ? दोनो, रेशमा

और नेका सोच मे खो गई ।

हर रोज रेशमा नाटक मे जाने के लिए अपनी कामना जताती और हर रोज यह सोच-सोचकर थक जाती कि वह जायगी कैसे ? आखिर एक दिन दोनो ने मिलकर निर्णय किया कि चाहे कुछ हो जाय वे अवश्य जॉयगी । रेशमां अपना भेस बदल लेगी और नेका भी काई और भेस बना लेगी ।

१८

शेरा कद्दुओ से शराब निकाल लेता था, करेलो से निकाल लेता था। आज की शराब न जाने उसने किस वस्तु से निकाली थी, शराब मे से इलायची की सुगन्धि आती थी। एक-एक घूंट के बाद जमीदार से अधिक उसके चाटुकार औंधे हो रहे थे। उस शराब का न कोई रग था, न कोई स्वाद था; वह कितनी ही एक-सी बोतलें ले आया था। व सारी शाम बैठे हुए पीते रहे।

जमीदार सोचता था कि वह अब बूढा हो गया था। जभी तो इतनी जल्दी उसे शराब चढ जाती थी। कई बार जब नशे म उसकी नजर अपने हाथों पर पडती तो वह कॉप उठता, उसे अपने पिटठुओं पर अत्यन्त क्रोध आता। सब-के-सब अभी तक दैत्यो के समान थे, किसी को न घुन लगा था न आयु ने उन्हें निर्बल किया था। वे बस वैसे-के-वैसे ही थे, जमींदार सोचता कि उसे कौन-से ऐसे दुःख ने जीर्ण कर दिया था। अपरिमित ऐश्वर्य और संतान उसके पास थी।

हाय वे दिन—वह सोचता, जब वह पीता रहता था और शराब चढने में न आती थी। अब तो उसका सारा आनन्द स्वप्न हो जाता जब वह देखता कि दो घूंट पीने के बाद उसे नशा चढ जाता है, उसे चक्कर आने लगते है, उसकी आँखो के आगे वस्तुएँ घूमने

लगती है, हाथ कही डालता है और पडता कही है। कहना कुछ चाहता है और कुछ-से-कुछ निकल जाता है—और इस प्रकार आजकल वह झुँझलाने लगता।

और उसके चारो पिट्ठू जमीदार की इस दुर्बलता को भापने लगे थे। उसके क्रोध से बचने के लिए अक्सर वे उसे बातो मे लगाये रखते थे। परस्पर हसी-ठट्ठा करते थे, कभी-कभी जमीदार को भी लपेट में ले लेते।

जहाना सदैव शेरे को उस्ताद कह कर बुलाता और वास्ते देता—"यार, कोई ऐसी शराब तैयार कर कि आठो पहर नशा रहे?" जब नशा उतर जाता तो जहाने को बडी बेकली-सी अनुभव होती, उसका शरीर टूटने लगता, उसका दिल न जाने क्या-कुछ सोचने लगता। कभी-कभी उसके जी मे आता कि वह कही भाग जाय, रात को जब सारे सोते पडे हो वह कही गायब हो जाय। कभी-कभी उसे अपने अच्छे-भले हाथ मैले-मैले लगते, उसे मुँह में एक कडुवाहट-सी अनुभव होती, वह अपने-आपको क्षुद्र अत्यन्त क्षुद्र होता हुआ अनुभव करता।

रावेल को आजकल आयशा बहुत भली लगती थी। जब एक घूँट पी लेता, वह उसे याद आ जाती। त्रिजन मे कितनी ही लडकियाँ थी, किन्तु आयशा तो जैसे एक अप्सरा थी। आयशा की एक माँ थी, आयशा का एक पिता था, आयशा का एक भाई था—रावेल सोचता कि कही वे सारे आगे-पीछे हो जॉय तो फिर आयशा और वह दोनो आनन्द मनाएँ। त्रिजन मे वह अकेली रह गई थी, आयशा रावेल को अकेली ही अच्छी लगती थी, जैसे चट्टियल मैदान मे साँप की छतरी उगी हुई हो—दूध ऐसा श्वेत! वह सोचता कि उसने अपनी पहली प्रियतमा के पति को मार डाला था, उन दिनों उसे पहली प्रियतमा अच्छी लगती थी। अब तो वह उसके लिए च्यूँटी तक को नही मसल सकता, क्योकि वह तो अब पजर बन गई थी? यह स्त्रियाँ कैसी होती है, किन्तु आयशा तो मोटे-मोटे गोरे बच्चे उत्पन्न करने वाली थी।

और जुम्मा ज्यो-ज्यो शराब पीता जाता, आज उसे त्यो-त्यो क्रोध चढता आता। उसकी आँखें लाल होती जाती। आखिर उसे समय मिल गया, कितनी देर से प्रतीक्षा मे था कि जमीदार कोई बात छेडे तो यह बताए कि किस प्रकार गत सप्ताह वह लड़की नही आ सकी थी। क्योंकि नव्वाब ने उसे मार्ग में पकड लिया था। शराब के नशे मे पागल जमीदार ने यह बात सुनकर हँसना आरम्भ कर दिया, हँसता रहा, हँसता रहा, जुम्मे को लज्जित होना पडा।

सब आश्चर्य करते कि जमीदार को आजकल हो क्या गया था, उसे जैसे क्रोध आता ही नही था। फर्मान, भागभरी के लडके के विषय मे कैसे बुरे समाचार आ रहे थे, किस प्रकार वह प्रतिदिन ज्यादतियाँ करता जा रहा था, किस प्रकार बच्चे-बच्चे की जिह्वा पर उसकी चर्चा थी, कितना वह सर्वप्रिय होता जा रहा था। वे सोचते कि एक बार जमीदार 'हाँ' करदे तो ढूंढने पर भी उसका पता न मिले।

जहाना पीता रहा, पीता रहा—जब वह बहुत पी जाता तो उसे अपने-आप पर संयम न रहता। जो बात न भी करनी होती उसके मुँह से निकल जाती। और इस प्रकार आज वह बकने लगा—एक बात न जाने कब की उसके हृदय में काँटे की भाँति चुभ रही थी, आज उससे रहा न गया।

एक बार जमीदार ने जहाने को बहादुर के घर भेजा। भागभरी के लडके की दशा अच्छी नही थी। अगले दिन सरकार के कहने पर वहाँ जहाने की पत्नी, भागभरी की हथेली पर कुछ पैसे रख आई थी। और फर्मान था कि आजकल यह कहता फिरता था—"जमीदार—मुर्दाबाद !" और न जाने क्या-क्या कुछ वह चारो ओर विष फैला रहा था।

किन्तु जहाने के मुँह से शरारत के तौर पर फर्मान का नाम सुनते ही जमीदार लाल-पीला हो गया। उसकी आँखे जैसे कट कर बाहर आ रही, उसके मुँह से शराब रिस-रिसकर बहने लगी, उसके हाथ काँपने लगे, उसके माथे पर पसीने की लहर दौडने लगी, और शराब का

गिलास उसकी अंगुलियो से फिसल कर गिर पडा।

जब कोई ऐसी बात हो जाती तो चारों-के-चारो पिट्ठू एक-एक करके वहाँ से खिसक जाते। जमीदार के क्रोध को कोई सहन न कर सकता था, किसी मे इतना साहस नही था कि जमीदार के काँपते हुए चेहरे की ओर देख सके।

और जमीदार अकेला रह गया, इतने बडे कमरे मे वह बिलकुल अकेला था। वह टूटे हुए काँच के टुकडों की ओर देख रहा था—उसने चादर पर पडे हुए टू बर्तन की ओर देखा, दीवार पर क्लॉक टिक-टिक कर रहा था। आखिर वह उठकर टहलने लगा, ज्यो-ज्यो वह कदम उठाता, क्लॉक की टिक-टिक अधिक ऊँची होती जाती।

शराब के नशे में बदमस्त जमीदार सोचता कि उसने जहाने को भागभरी के घर क्यो भेजा था, सामने दीवार पर हिरणों के एक जोडे का चित्र था। हिरण जिस प्रकार खिसक कर साथिन के समीप होता जा रहा था, हिरणी अपनी लम्बी ग्रीवा उठाकर दूर.........खेतो की ओर देख रही थी, जैसे कोई वस्तु खोगई हो, जैसे वहाँ से किसी को आना था। शराब की जो बोतलें खाली थी, वे फर्श पर औंधी पडी थी, और जो बोतले भरी हुई थी, पास खड़ी थी। फर्श की दूधिया चादर पर कुछ धब्बे थे, जो धोने से भी दूर नही होते थे—और जमीदार सोचता कि क्यों उसका घोड़ा कई बार आप-ही-आप उस गली मे चल देता था, जहाँ फर्मान रहता था, भागभरी रहती थी। फिर वह सोचता कि उसने बहादुर को व्यर्थ मे ही मरवा दिया था, वह कितना सरलहृदय था, परिश्रमी था। फिर उसे अपने कर्मचारियो के वे शब्द याद आए कि किस प्रकार फर्मान कहता था कि ये महल, ये हवेलियाँ, ये खेत उसके अपने थे। सब-की-सब वस्तुएँ प्रजा की है—उस समय जमीदार को ऐसे अनुभव होता जैसे उसकी बोटी-बोटी बाँटी जा रही हो। उसके शरीर का अणु-अणु नोचा जा रहा हो, उसे टुकडे-टुकड़े किया जा रहा हो। फर्श पर दूध ऐसी श्वेत बिछी हुई चादर पर कितने दाग थे जो

धोने से भी दूर न होते, बाहर घोर-अन्धेरी रात थी—जमीदार के भीतर उससे भी कही अधिक अन्धकार था। फिर उसने खिडकी मे खडे होकर देखा—कि दूर··· · बहुत दूर··· ··एक दीप जल रहा था, जमीदार देखता रहा, देखता रहा , अन्धकार-आँधी बन गया, बादल गर्जने लगे, किन्तु दीपक न बुझा और वैसे-का-वैसा जलता रहा, उस दीपक की लौ न कम हुई, न भडकी।

किन्तु क्लॉक की टिक-टिक क्यो इतनी ऊँची होती जा रही थी, जैसे कोई लोहा कूट रहा हो, जैसे कोई पत्थर गिरा रहा हो, और तेज, अधिक तेज, और ऊँचे, अधिक ऊँचे। जमीदार को यूँ अनभव होता जैसे प्रत्येक टिक-टिक के साथ उसका जीवन समाप्त हो रहा था, जैसे उसके श्वास बह रहे हो, एक बाढ की-सी तेजी के साथ। और फिर एक दिन यह क्लॉक चलते-चलते रुक जायगा, जमीदार सोचता कि वह मर जायगा। वह कितने वर्ष जीवित रहा था, किस कोलाहल के लिए वह जिया था, जीवन के एक-एक पल का उसने आनन्द उठाया था, हर घडी को उसने सवारा था, निखारा था—और आज भागभरी का लडका कह रहा था—"जमीदार मुर्दाबाद !" और उसका जी चाहता कि वह मर जाय। प्रतिदिन फर्मान की शिकायत उसके कानो मे पडती, वह नई-नई आलोचनाएँ करता, नए-नए साधन सोचता। समाचारपत्र कही से ले आता और पढ-पढ कर लोगो को सुनाता रहता। फिर वह सोचता फर्मान क्यो पढ गया था, अन्य लोग तो बिल्कुल ढोर-डगर थे, फर्मान का ललाट क्यो विशाल था, फर्मान की आँखें क्यो बिल्ली की-सी थी, वह कितनी देर तक घोडा दौडाता रहता था, उसका निशाना कितना सधा हुआ था, वह नेजाबाजी मे किसी को अपने से बाजी नही लेने देता था। लोग उसकी बातो पर दंग रह जाते।

क्लॉक अभी तक टिक-टिक कर रहा था। जमीदार सोच रहा था कि वह क्लांक को तोड़ देगा, फिर उसने सोचा कि वह उस फितने को मरोड़ कर रख देगा। ज़मीदारी क्यो कर समाप्त हो सकती है, अभी

तो वह जीवित है, अभी तो उसकी भुजाओ मे शक्ति है, अभी तो उसके क्रोध से लोग थर्राते है।

वाह-वाह कितने जोरो से वर्षा हो रही थी, बादल गरज रहे थे, बिजली कडक रही थी, अन्धकार शॉय-शॉय कर रहा था। किन्तु वह दीपक बहुत दूर वैसे-का-वैसा टिमटिमा रहा था, कितना स्नेह था उस दीपक मे, एकदम जमीदार को पेट मे पीडा अनुभव हुई, उसे यो अनुभव हुआ जैसे उसकी अँतडियाँ रस्सी के समान बल खाती जा रही थी।

रासधारी !

१९

"मै जाऊँगी, मै जाऊँगी !" शाम से रेशमा ने यह रट लगा रक्खी थी।

अस्तबल में बैठी कसीदा काढती हुए एक स्त्री उठकर भीतर चली गई, प्रकाश मद पडता हुआ बिल्कुल समाप्त हो गया।

"मैं जाऊँगी" अभी तक रेशमा की जिह्वा पर यह वाक्य था। नेका साचती—वह क्यो यह बात बार-बार कह रही थी। सभवत उसका यह विचार था कि वह नही जा सकती थी। आखिर वही जाना था, जहाँ नेका रहती थी। और प्रतिदिन जाया करती थी, जहाँ नेका खेल-कूद कर बडी हुई थी। सभवतः वह अपने-आपको तैयार कर रही थी, जमीदार की लडकी, सात पर्दो मे ढकी-छिपी रहने वाली।

"मै जाऊँगी" रेशमा को यूँ अनुभव होता जैसे कोई-न-कोई अडचन अवश्य पड जायगी। काली रात न जाने आज इतनी काली हो या न हो, अस्तबल की ओर से आधी रात तक खाँसने की आवाज आती रही थी। और उस ओर चौकीदार थे, नेजे उठाए हुए दीवारो को घूरते, रेशमा ने स्वय कई बार उठकर देखा था। सीढियो पर से धीरे-धीरे उतरने का कई बार उसने आज के दिन के लिए अभ्यास किया था।

"मै जाऊँगी"—रेशमा सोचती—फर्मान भला कैसा होगा। नेका कहती थी वह गोलमटोल था, गोरा-चिट्टा था, गुदगुदा-सा जैसे मक्खन का

लौदा हो, हाथ लगाने से मैला होता था, भूरे बाल, आँखे और होठ बिल्कुल रेशमा ऐसे थे। रेशमा सोचती—जभी वह उसे इतना अच्छा लगता था।

उसे तो लेकिन हर कोई पसद करता था, सारे-का-सारा प्रदेश। पोठोहार का बच्चा-बच्चा उसका नाम जानता था—उसका कोमल शरीर, उसका मधुर स्वभाव, उसके न्यारे रूप ने, उसकी हरेक के काम आने वाली भावना, सब उसे राजकुमार के नाम से पुकारते थे।

"मै जाऊँगी"—रेशमा सोचती—समय कितना धीरे-धीरे बीत रहा था। सघन-सी, अंधेरी-सी, शात-सी रात बीतती ही नही थी। चारो ओर अभी तक प्रकाश फैला हुआ था। उसे यो अनुभव होता जैसे आज ये लोग सोएगे ही नही। दूर···कही कुत्ता भौक रहा था, भौके जा रहा था। आज अस्तबल के ढोर-डगरो के गले मे पडी हुई घटियाँ बज रही थी, बजती जा रही थी।

"मै जाऊँगी" और रेशमा महल मे रहने वाली जमीदार की लडकी ने वस्त्र उतार दिए। नेका ने उसे अपनी सलवार पहनाई, बिल्कुल अपनी तरह उसे दुपट्टा ओढाया, मैले-मैले से फटे-पुराने कपडे !

"मै जाऊँगी" और दोनो पोठोहारने तैयार थी। रेशमा विकल थी, व्यग्र थी—जैसे कोई उनकी प्रतीक्षा में हो, जैसे एक युग के बाद मिलाप होने वाला हो, हर श्वास के साथ उसे यों अनुभव होता जैसे कोई आवाज दे रहा हो।

और नेका टालमटोल किये जा रही थी, चारो ओर आलोकित दीप बुझने ही मे नही आ रहे थे। समय था कि बस जहाँ खड़ा था, वही खडा था, रेशमा अपने दालान म टहलती रही, टहलती रही।

"बेटी" रेशमा को टहलते-टहलते यों अनुभव हुआ जैसे उसे किसी ने पुकारा हो। बिल्कुल उसी प्रकार जैसे ज़मीदार सोने से पहले उससे एक-दो बातें कर लिया करता था। वह पसीने-पसीने हो गई, उसका नेकाँ के समान ओढा हुआ दुपट्टा सारे-का-सारा ढुलक गया। वह प्रतिमा

के समान सुनती रही, सुनती रही, कही जमीदार ऊपर तो नही आ रहा था।

फिर नेका भीतर से निकलकर उसे यूँ कान लगाये खड़ी देखकर हँस पड़ी।

आखिर समय हो गया, स्तब्धता जिस प्रकार फैल सकती थी, फैल चुकी थी। जिस प्रकार बत्तियाँ बुझ सकती थी बुझ चुकी थी, दूर कोई कुत्ता भौक रहा था और वह भौकता रहा—चलो अच्छा हुआ। उनके दिलो की धडकनें कोई नही सुन सकेगा।

और वह मैले दुपट्टे ओढकर दौडती हुई सीढियो के अधकार मे विलीन हो गईं। वह हर कदम नाप-तोल कर उठा रही थी, दालान मे से गुजरते हुए दोनों का ऊपर का साँस ऊपर रह गया और नीचे का नीचे।

अस्तबल मे दीवार के साथ-साथ चलते हुए उनका पसीना धार बनकर बहने लगा। आखिर पानी के निकास की एक बहुत बड़ी नाली में से वे दोनो बाहर आ गई, पतली, दुबली, कोमल मछली ऐसी पोठोहारनें।

सारा कस्बा खाली पड़ा था, जैसे सारा प्रदेश रास देखने के लिए टूट पड़ा हो। गलियाँ सूनी थी, जैसे कोई वस्तु रेशमाँ को अपनी ओर खीच रही थी। अब जो वह घर से निकली तो निर्भीक नाचती-फलाँगती हुई चल पड़ी, नेकाँ भी उसके साथ थी।

लोगो की इतनी बड़ी भीड़ रेशमाँ ने कभी नही देखी थी, और वह चुपके से एक छोर में घुस गई। अभी रास आरम्भ नही हुई थी, कोई महिमा गा रहा था :

दो पत्तर अनाराँ दे।
साड्डी गली आ बैठे
कबूतर याराँ दे!!

(अनारो के दो पत्ते है और हमारी गली में साजन के भेजे हुए

कबूतर आ बैठे है)

और इस प्रकार एक टप्पे के बाद दूसरा टप्पा जोड़ा जाता रहा। फिर गाने वालियाँ ढोलक उठा लाई, एक स्वर एकलय से सात लडकियाँ गाती रही, सारा दर्शकसमूह साँस रोके हुए था। भीड ने शोर मचाते हुए बच्चो की ओर आँखे फाड़-फाड़ कर देखना आरम्भ कर दिया। जाटो के हाथो मे तेल पिलाई हुई लाठियाँ थी और लाठियाँ उनके हाथो मे से फिसलने लगी, स्त्रियो के झूमर लहरा-लहरा कर नीचे गिरने लगे।

इसके पश्चात् रास प्रारम्भ होनी थी। नारियो के गीत समाप्त हुए, लोग वाह-वाह कर के चुप हो गए, और बस थोडे समय के बाद रास आरम्भ हुई।

एक कोने मे से एक बुढिया फूट-फूट कर रोती हुई निकली। उसका लडका मारा गया था, बुढिया ने दुहत्थड मार-मारकर अपनी दुर्दशा कर ली। एक और छोर से नव-विवाहिता लडकी निकली, उसके हाथो मे अभी तक मेहदी लगी हुई थी, उसका पति मारा गया था, लड़की ने चीख मार-मारकर खून के आँसू गिराए। धरती पर अपना सिर पटक-पटक कर मस्तक लहूलुहान कर लिया। फिर एक कोने में से एक नंगा अनाथ बच्चा निकला, उसका कोई संरक्षक नही रहा था। उसका पेट पीठ से लगा हुआ था, उसके कंकाल की एक-एक अस्थि गिनी जा सकती थी। सूखे तिनको के समान उसकी भुजाएँ आगे को फैली हुई थी। उसके होठ सूखे हुए थे, उन पर पपड़ियाँ जमी हुई थी। उसकी दुखती हुई चुँधी आँखो पर मक्खियाँ भिनभिना रही थी—वह आकर चुपचाप बीच में खडा हो गया। फिर लाठी पकड़े हुए एक बूढ़ा आया, जिसके पाँच लडके मारे गये थे। बूढे की जिह्वा बन्द हो गई थी, उसकी आँखे फटी-की-फटी रह गईं थी, उन आँखो से उसे कुछ दिखाई नही देता था। कभी उसके हाथ काँपने लगते, कभी वह स्वयमेव स्थिर हो जाते। हर पाँच क्षणो के बाद बूढे की आकृति लाल हो जाती, कभी उसका

शरीर ऊपर को यो उठता जैसे वह उड़ने का प्रयत्न कर रहा हो। उसकी आँखो से टपाटप आँसुओ की धारा बह जाती और आँखे फिर खाला हो जाती, शुष्क हो जाती, बावला होकर वह जैसे सबको घूर रहा हो, यह बूढा भी बीच मे आकर लडके के पास खडा हो गया।

उनके गाँव मे एक चुडैल पड़ती थी, और जो कोई उस चुडैल के हत्थे चढता उसे जलाकर भस्म कर देती। कई घर उजड चुके थे, उसने कई चूल्हे ठडे कर दिये थे, बहुतो पर प्रलय बरसी थी। आखिर ये सब मिलकर न्यायालम में फरियाद लेकर आए थे, अपनी बिरादरी और अपने पडोसियो के आगे हाथ फैला रहे थे।

सारी दर्शक मडली अवाक् थी। आखिर बेबस खडी भीड में से एक युवक निकला, जैसे देवता आकाश से उतरा हो। उसके हाथ में तलवार थी, ओज बरसाता ललाट, ऐंठे हुए पट्ठे, उसके अधरो पर एक पीडा थी, उसकी आँखो मे एक करुणा थी, उसे देखकर रोती हुई बुढिया का कलेजा जैसे शीतल हो गया। बेहाल और बेसुध नवविवाहिता को जैसे साहस मिल गया, भूख का मारा दुबला-पतला लड़का और दु.खातिरेक से पथराया हुआ बूढ़ा जैसे एक बार फिर जीवित हो उठे।

अब वह नवयुवक गाँव की ओर जाता है, फिर उसकी चुडैल के साथ लडाई होती है। चुडैल नागिन बनकर डसने का प्रयत्न करती है, आग बनकर उसे जलाने का प्रयास करती है, शेरनी बनकर उसकी बोटी-बोटी नोचने के लिए झपटती है, किन्तु नवयुवक एक मादकता में, एक उत्साह मे उससे टक्कर लेता है। निदान चुडैल उसके चरणो में निढाल होकर गिर पडती है।

उसके बाद गानेवालियाँ फिर गाने लगती है, नाचती है। नवयुवक पर से पानी वार-वार कर पिया जाता है, फूलो और हारो से उसे लाद दिया जाता है। एक उत्साह में, एक तरग में, हँसते, खेलते, नाचते, कूदते, नारे लगाते रास समाप्त हो जाती है।

रेशमाँ और नेकां ने सोचा था कि वे रास के समाप्त होने से पहले ही उठ आयगी, किन्तु वे भीड़ के बीच बैठी थी। नेका और रेशमाँ को भीड मे जुम्मा दिखाई दिया, जहाना दिखाई दिया, रावेल दिखाई दिया, शेरा दिखाई दिया, जमीदार के दूसरे बहुत से कर्मचारी भी वही थे।

रेशमाँ ज्यो-ज्यो उनकी ओर देखती, उसे फर्मान और भी अधिक अच्छा लगता, फर्मान—जो रास मे नौजवान बना था। वह एक देवता था—वह सोचती—और ये शेष लोग कैसे थे? ये कैसे लोगो के सम्पर्क मे जमीदार घूमता था और परामर्श किया करता था।

उसकी आँखो मे फर्मान का चित्र घूमता रहा। एक मस्ती मे, एक नशे में न जाने कैसे फलांगने वाले स्थानो से वह फलांगी, जहाँ से कूदना था, वहाँ से कूदी और जहाँ झुकना था वहाँ झुकी तथा अपने पलग पर आ गिरी।

"यूँ जिये जाना कितना आनन्दमय है?" सोने से पूर्व जैसे रेशमाँ आज नेकां से कह रही थी।

कपूत !

२०

जिस दिन से जमीदार पलग पर पडा वह फिर उठ न सका। उसकी नाडियाँ जैसे ढीली पड गईं, उनमे जैसे शक्ति न रही। वह सोचता कि शराब में इतनी खराबी नही हो सकती, शराब तो उसके चारों पिट्ठू भी पीते थे और उससे कही अधिक पीते थे, फिर खराबी की क्या बात थी ? कोई इलाज कारगर नही हो रहा था, जागीर के सभी हकीम आ चुके थे, बाहर से भी वैद्य आए। जमीदार सोचता—कही उसे वही रोग तो नही था जो उसकी अन्तिम पत्नी को था। उसने जादू-टोने वाले इकट्ठे कर लिये, ढेरो को बुलवाया गया।

"कुछ है तो सही"—ढेरो यह कहती और चारो ओर से उसे टटोलती रही। अवश्य कुछ है, किन्तु उसकी समझ मे नही आता था कि वह कुछ क्या था। आखिर थक-हार कर झुँझला कर ढेरो वहाँ से चली गई।

जमीदार को अपना पेट अकड़ा हुआ अनुभव होता, कोई वस्तु उसे न पचती। वह दिन-प्रति-दिन दुर्बल होता जा रहा था। शहतीर के समान उसका दृढ-शरीर सूखकर तिनका-सा हो गया, सारा दिन लेटा रहता और उसकी आँखो के आगे न जाने कैसे-कैसे चित्र घूमते रहते। कभी-कभी उसे ऐसा विश्वास होने लगता कि वह मर रहा है।

उसे प्रतिदिन नित-नए किस्से सुनाए जाते—कैसे फर्मान लोकप्रिय होता जा रहा था, वैसे यदि वह चाहे तो सारे पोठोहार को अपने पीछे लगा ले, कैसे अब जमीदार के कर्मचारियो की बात लोग अनसुनी कर देते, और सभी इस हठ पर थे कि फर्मान को राजकुमार कहकर बुलाया जाय। जब बोलते, तो 'राजकुमार जिन्दाबाद' कहते।

और उधर नव्वाब पानी की भाँति पैसा बहा रहा था, सारा दिन मदिरा के दौर चलते रहते। उसका घर जैसे गुन्डो, डाकुओ और बदमाशो का अड्डा था। लोग आते, वहाँ ठहरते, शराब पीते और चले जाते। जैसे वह घर न हो सराय हो। हर प्रकार की नटनियाँ आती, रावलपिंडी शहर से वेश्याएँ बुलवाई जाती, और अब ये लोग प्रायः नव्वाब के घर आते रहते। उसके कमरे मे महफिल जमती, घुँघरुओ की झकार और गाने की ऊँची आवाज कई बार दीवारे चीर कर जमीदार के कमरे तक पहुँच जाती। आधी रात के बाद और सबेरे सूर्योदय तक कभी-कभी प्रकाश ही रहता, कोलाहल मचा रहता, हँसी उठती और ऊँची उठता रहती।

फिर जमीदार को पता चला कि नव्वाब अस्तबल मे से आजकल घोड़े पारितोषिक रूप मे दे रहा था, कुत्ते इनाम दे रहा था, बाज उडा रहा था। बहुतो को फसलों से भरपूर खेत बाँट रहा था, बहुतो से उनकी सारी पूँजी छीन कर गुण्डो के हवाले कर रहा था।

नव्वाब जब कभी बाहर निकलता, दुकानदार दुकाने बन्द कर लेते, घरो के द्वार बन्द हो जाते, पति अपनी पत्नियो के आगे खड़े हो जाते, माताएँ अपनी लडकियों को छिपाने लगती, वह बाजारो में खड़ा होकर गन्दी गालियाँ देता। हण्टर पकडे और कुत्तों को अपने पीछे लगाए पान खा-खाकर थूकता रहता। शराब की बोतल हर समय उसकी जेब मे होती। शराब पानी की भाँति पीता और गिराता, उसके घर की नालियों में से, दीवारो मे से, शराब की भभक नाक को चढती।

जमीदार उसके विषय में कहानियाँ सुनता रहा, सुनता रहा, और

उसका हृदय बैठ-बैठ जाता। वह सोचता—इतनी अन्धेरगर्दी तो उसन स्वय कभी नही की थी, और ऊपर से समय कौन-मा बीत रहा था—"राजकुमार जिन्दाबाद" ये गगनभेदी नारे कभी-कभी उसके कानो में पडते।

एक दिन जमीदार ने नव्वाब की पत्नी रज्जी को भीतर बुलवा भेजा। वैसे वह बाहर ही से होकर चली जाया करती थी, जमीदार उसे देर तक समझाता रहा, रज्जी चुपचाप बैठी सुनती रही। उसकी आँखो से टप-टप आँसू गिरते रहे, रज्जी जब वापिस अपने कमरे मे आई तो जैसे सारी शिक्षा वह भूल गई हो। नव्वाब तो उसका पति था, उसका सिरताज ! उसकी जैसी इच्छा। पत्नी को क्या अधिकार था कि वह अपने सिरताज के मामले मे कोई बाधा डाले।

दिन बीतते गए, सप्ताह बीतते गए, महीने बीतते गए, जमीदार दिन-प्रतिदिन दुर्बल होता गया। दिन-प्रतिदिन पीछे-ही-पीछे कदम रखता जाता—और नव्वाब ने, कोई ऐसी बाधा नही थी, कोई ऐसी दीवार नही थी, जिसे पार न कर लिया हो, जिसे गिरा न चुका हो। रेशमा के कमरे बहुत दूर थे, महल के एकात मे, जिस ओर आगे जाकर बागीचे आ जाते थे, और फिर जहाँ अस्तबल थे। जागीरदार सोचता—शु है कि उसकी लडकी को इस गन्दगी का आभास नही था, वह सोचता कि यदि कोई और पर्दा सम्भव हो मके तो वह भी रेशमा के कमरे पर डाल दे। आजकल हवा कितनी गन्दी थी, और उसकी लडकी कितनी स्वच्छ, कितनी कोमल, कितनी सरल हृदया !

बिस्तर पर पडा हुआ जमीदार सोचता—एक घर, एक पुरुष, आयुभर उसके साथ साँस लेती हुई एक स्त्री, और फिर पुरुष चाहे बीमार हो जाय ! वह बुढापा कितना विश्रामपूर्ण होता है जिसमे एक आदमी की साथिन सुखो की वर्षा कर रही हो। उसे बार-बार रेशमा की माँ याद आती, अपने चाटुकारो की हँसी से उसे घृणा होने लगी। छत पर झिलमिलाते हुए फानूस कभी वह उतरवा देता और कभी दोबार

लगवा देता। कभी कालीन उठवा देता और कभी उन्हे फिर बिछवा देता।

हाथ-भर की दूरी पर नव्वाब रहता था। सिर पर से पानी गुजर गया किन्तु वह जमीदार के कमरे मे एक बार भी न आया। रेशमाँ मुँह-अँधेरे आती, साँझ को आती, अपने कोमल-कोमल हाथो से छोटी-छोटी सेवाएँ करती। रज्जी तो जैसे जमीदार पर जान दे रही हो, आठो पहर बाहर बैठी भीतर दवा भेजती रहती; अपने हाथो से खुराक बनाती और हर बात का ध्यान रखती।

एक दिन फर्मान आया, उसके साथ पोठोहार के चार मजदूर भी थे। सुहाँ—नदी का पुल अवश्य बनकर रहेगा, और यदि जमीदार सहायता करे तो अच्छी बात है, वरना लोगो ने निर्णय किया था कि वे मिलकर स्वयं एक छोटा-मोटा पुल बना लेगे।

जमीदार पंचायत की सब बातें सुनता रहा। कभी उसके होठो पर मुस्कराहट आती, कभी उसके ललाट पर बल पडते दिखाई देते। आखिर सुनते-सुनते उसकी आकृति लाल-पीली हो गई, फिर उसके शरीर से पसीना छूट पड़ा और उसके हाथ-पाँव ठण्डे पड गए। सारे-का-सारा उसका शरीर पीला हो गया, एक भगदड मच गई। पचायत को बाहर निकाल दिया गया, वैद्य उपस्थित हुए, सभी कर्मचारी भागे हुए आ गए।

"मै न कहता था कि इन लोगो को मिलने का अवसर न दो," जहाना बार-बार यही कहता, शेरा जहाने का हमख्याल था।

किन्तु न जाने कौन था जो जमीदार को पट्टी पढ़ा रहा था—चारों-के-चारो पिट्ठुओं को शिकायत थी कि आजकल जमीदार रेशमा की बातें मान रहा था। क्या यूँ भी कभी हुआ था?

लेटे-लेट जमीदार ने उस कुर्सी की ओर देखा, जिस पर फर्मान बैठा हुआ था। वह चकित हो रहा था, बार-बार उसकी दृष्टि क्यो उस ओर जा रही थी। कभी उसे यूँ जान पड़ता कि सामने से पर्दा उठाकर वह

कमरे मे आ रहा है, कभी उसे यूँ दिखाई देता कि वह दाईं ओर के कमरे में लेटा हुआ है। कभी उसे यो अनुभव होता—वह पलग पर आकर बैठ गया है। कभी उसे ये छायाएँ अच्छी लगती, कभी उसका खून खौलने लगता। वह सोचता कि एकबार वह उठ बैठे तो यह काँटा भी निकाल देगा, और जमीदार इसकी उधेड़-बुन मे डूबा हुआ था कि सामने नव्वाब के कमरे से चीखने की आवाज़ आई, घर के नौकरो और कर्मचारियो के उधर दौड़ने की आवाज आई, और दूसरी ओर कुहराम मच गया।

शराब मे बदमस्त नव्वाब ने अपनी पत्नी रज्जी को गले से पकड कर मरोडकर रख दिया था, और लोगो के देखते-देखते उसने फडफडाकर जान दे दी। नवयुवती, सुन्दरी, पतिव्रता, घर की शोभा, महल का शृगार, रज्जी एडियाँ रगडती-रगडती ठंडी हो गई। जैसे प्राण निकलने मे न आ रहे हो, कितनी देर तक नव्वाब उसके गले को दबाता रहा, और जब रज्जी की आँखों की पुतलियाँ फटकर बाहर निकल आई, तब उसने खींचकर उसे फर्श पर दे मारा, और फिर भी रज्जी मरते-मरते मरी।

जमीदार को यह बात बताई गई, और उसके होटो पर मुस्कराहट-सी आई, जैसे किसी सडते हुए जोहड़ मे से कोई बुलबुला फूट पड़े।

अगले दिन, फिर उससे अगले दिन जहाँ-जहाँ भी पोठोहार मे यह समाचार पहुँचता, लोग हैरान रह जाते। इस बात को छिपाने का जितना प्रयत्न किया गया, उतने ही जोर से यह खबर आग की भाँति फैलती गई।

फर्मान ने जब यह बात सुनी तो उसने अपने निचले होठ को दबाया और ऊपर का होठ उठाकर मौन हो रहा।

रेशमाँ को जैसे यह एकांत खाने को दौड़ता, आठो पहर नेका साथ चिमटी रहती।

फिर पता चला कि नव्वाब ने एक और लडकी अपने घर मे डाल

ली है, वह कोई शहर से स्त्री पकड लाया था। वह सेर भर लाली मुँह पर थोपती, आँखो मे बार-बार सुरमा डालती, सारे शरीर को पाऊडर से लिथेड़े रहती। वह बहुत अच्छा नाचती थी, नाचने से अधिक अच्छा गाती थी, सारा दिन वह नाचती और गाती रहती, दिन भर वह गाती रहती और नव्वाब शराब पिये बदमस्त सामने औंधा पड़ा रहता।

कुछ ही दिनो मे उस नई लडकी ने चारो ओर अपना दबदबा बैठा लिया। सब आलमारियो की कुंजियाँ उसने अपने हाथ मे ले ली, और घर के सभी काम अपने हाथो से करने लगी। उसके घुँघरुओ की झकार रेशमाँ के कमरे तक भी पहुँचती, उसकी ताने जमीदार के कमरे तक भी सुनाई देती।

क्रोधानल !



२१

जब से कदला ने हवेली मे चरण रखा, जमीदार अच्छा होने लगा, आज पहले से अच्छा, फिर उससे बहुत अच्छा। लगभग तीन सप्ताह के बाद वह बिल्कुल ठीक हो गया; वह स्वय विस्मित था। और फिर एक दिन रावेल ने उससे कहा—"कोई-कोई चरण ही ऐसा होता है कि पडते ही सूखे हुए उपवन भी हरे हो जाते है"—और उसकी दृष्टि परे नव्वाब के महल की ओर थी, जहाँ से घुँघरुओ की झकार के स्वर फूट रहे थे और जमीदार ने दिल-ही-दिल मे नव्वाब को क्षमा कर दिया। कई लोग कहते थे कि कदला वेश्या थी, कई लोग कहते कि वह वेश्या नही थी, हर कोई नाचने वाली वेश्या थोडे हो सकती है। कुछ भी हो, जमीदार सोचता—"भागवान लड़की अवश्य है"—जिस दिन से वह आई थी, चारो ओर एक चहल-पहल-सी दिखाई देती थी, वातावरण मे जैसे रग भर गया हो, एक अत्यन्त आकर्षक झकार उसके कानो में पडती रहती।

शाम को चार घोडो की गाडी मे जब जमीदार सैर को निकला, हवेली मे बार-बार उसकी दृष्टि नव्वाब के महल की ओर उठती, जहाँ आठो पहर एक रौनक, एक कोलाहल-सा फूटता रहता था। कोई हँस रहा कोई गा रहा होता, कोई नाच रहा होता, कोई शराब उछाल रहा होता। जमीदार को अपना यौवनकाल याद आता, वह यौवन

काल याद आता, वह यौवन उससे भी कही रगीन था, उससे भी कही बद-मस्त था, उससे भी कही अन्धा था। बाजार उस पर टूट पडता था, फिर वह राग भी समझता था। जब नाचती हुई कोई बाला स्वर-लय का सौदर्य उपजाती तो वह राग पहचानकर मस्त हो जाता, और वह बाला उसे झुक-झुककर फर्शी सलाम किया करती। एक-एक तान पर लाखों रुपये लुटा देता।

"यह बेचारा क्या आनन्द लूटेगा ?" कभी-कभी जैसे जमीदार को नव्वाब पर दया आती।

फिर चार घोडो की गाडी हवेली में से निकलती तो लोगो के झुण्ड-के-झुण्ड जमीदार के सफेद घोडो के आगे जैसे बिछ जाते। बाजार में लोग उसे छिप-छिपकर सलाम करते, गली-मुहल्लों मे और सडको पर काम करते हुए आदमियो के हाथों से वस्तुएँ फिसल-फिसल जाती, और फिर वे निश्चल खडे हो जाते। शहर के कुत्ते जमीदार के कुत्तो से डरते, शहर के कबूतर जमीदार के कबूतरो से डरते, दीवारे जैसे काँप-काँप उठती।

और बाहर के बागीचे मे जमीदार की गाडी जाकर रुक जाती, उसके कर्मचारी उसकी प्रतीक्षा कर रहे होते। जब से वह बीमार पडा था, जमीदार का दिल प्राय: जैसे उकताया-उकताया-सा रहता। उसे यूँ अनुभव होता कि ये बागीचे उसके बागीचे नही थे, जैसे वे हवेलियाँ बाँटी जा रही थी, जैसे पूरी जागीर उसके हाथो से निकल रही थी। कभी वह सोचता कि अब वह मर रहा था, कभी वह सोचता कि यह एक व्यर्थ का भय था, जो उसके हृदय मे आ बैठा था।

उसे अपने चारो के चारो पिट्ठू आजकल अच्छे नही लगते थे। एक-दम उनकी बुराइयाँ उसे दिखाई देने लगी। वे जो उसे कहते, वह सदैव उसके विरुद्ध काम करता। जहाँ वे उसे बैठने के लिए कहते वह वहाँ न बैठता, उनके साथ शराब न पीता, यथासभव उनसे कन्नी काटता रहता।

खेतो में जाकर मेढो पर बैठ जाता, घास पर नगे पाँव चलता, बस

कुर्ता और तहमत पहने रहता, छोटी-छोटी बाते पूछता रहता, कितनी-कितनी देर तक कुत्तो से खेलता रहता। बाज बँधे रहते, बन्दूकें बाहर न निकाली जाती, उसे खुली हवा अच्छी लगती, बहता पानी अच्छा लगता, हल्की-हल्की फुहार जब पड़ती, उसका दिल भीगने को चाहता। पेडो की छाया मे वह खडा हो जाता और वहाँ खडा रहता।

किसी की यदि उससे कोई शिकायत करता तो वह सुनकर हँस पड़ता, क्रोध तो जैसे उसे आता ही नही था। उसके पिट्ठू सकेतो से उसके कान भरते रहते, भरते रहते।

लेकिन जमीदार आजकल आमतौर पर अपनी मनमानी किया करता, कभी-कभी वह इस बात से बहुत विकल हो उठता कि उसके कर्मचारी हर समय उसके साथ क्यो चिमटे रहते थे।

एक दिन वह घास पर बैठा-बैठा लेट गया और लेटे-लेटे उसकी आँख लग गई। सोते मे उसने देखा कि सरदारा भगिन हवेली मे झाड़ू दे रही है, उसके गोल और गोरे अगो पर बुढापा छा गया है, उसके मुँह पर मक्खियाँ भिनभिना रही है, वह पसीने-पसीने हो रही है, हाँप रही है किन्तु जान मारकर काम कर रही है, जैसे वह अपनी जवानी मे काम किया करती थी। जब उसके रूप की आभा सही नही जाती थी, जब वह अपने सिर पर टोकरा उठाती तो उसकी कमर बल खाने लगती। पतली-लम्बी सरु के समान सरदारा—जिसकी माँ उस हवेली मे काम करती रही, जिसकी माँ उस हवेली मे झाड़ू देती रही। फिर परे जमीदार ने बरामदे मे देखा कि उसका पाँच वर्ष की आयु का लड़का खेल रहा था, खेलता रहा, खेलता रहा; आखिर जब वह थक गया तो भीतर ज़मीदार के पलग पर चढ़कर सो गया। दूध ऐसी श्वेत चादर देखकर जैसे स्वयमेव वह उस पर जा पड़ा, फिर क्षणभर मे उसे नीद आ गई। सोते-सोते जमीदार ने स्वप्न मे यह सब कुछ देखा, देखता रहा, देखता रहा। उसे फिर भी क्रोध न आया; और जब वह जागा तो उसके होठो पर मुस्कराहट खेल रही थी।

शहर मे से निकलते हुए गली-मोहल्लो, सड़को और बाजारो मे गदगी के ढेर देख कर उसका जी बहुत खराब होता। लोगो को कडी मेंहनत करते देख कर उसके दिल को कुछ होने लगता, स्त्रियो और बच्चो के फटे हुए कपड़े देख कर उसे लाज आती, उसके पैरो तले से धरती निकल जाती, वह सोचता कि किसी प्रकार यह सब कुछ बदल जाय, किन्तु अब तो उसके अंगो में शक्ति नही रही थी। वह सोचता, इतनी देर के पश्चात कोई क्यो कर बदल सकता है ?

कभी-कभी उसका दिल चाहता कि वह अपना सर्वस्व किसी को सौप कर स्वय कही चला जाय, और जब कभी उसे यह विचार आता तो उसकी दृष्टि फर्मान पर पडती। कभी उसे क्रोध आ जाता, कभी वह हँस पडता। फर्मान पांठोहार के सम्पूर्ण प्रदेश मे चुना हुआ नवयुवक था, वह बार-बार अपनी दुर्बलता पर स्तब्ध हो जाता, हैरान होता रहता। कभी वह सोचता, सभवत: वह उन कहानियो से डर गया था जो उसके पिट्ठू उसे सुनाते रहते थे, कभी वह सोचता फर्मान उसे इस लिए अच्छा लगता है कि उसका रूपरग उसकी लडकी-ऐसा था, केवल फर्मान गोरा अधिक था जैसे जमीदार स्वयं गोरा था। फिर उसे बहादुर याद आ जाता—वह कितना परिश्रमी था। फिर उसे भागभरी याद आती, उस पर कैसी प्रलयकारी जवानी टूटी थी।

फिर वह सोचता आजकल भला भागभरी कहाँ होगी, आजकल तो वह बहुत बूढी-खूसट हो गई होगी, वह तो सरदारॉ से भी आयु में कितनी बड़ी थी। फि र उसे यो जान पड़ता कि स्वप्न मे जो लडका खेलता-खेलता उसके पलंग पर जा सोया था, कही उसकी आकृति फर्मान से तो मिलती-जुलती नही थी। फर्मान उस दिन उसके बडे कमरे मे जाकर लेट रहा था और फिर पर्दा उठाकर साथ के कमरे मे चला गया था। फर्मान को लोग 'राजकुमार' कह कर बुलाते थे, श्वेत और गोरा, गोल-गोल आँखो वाला।

फिर वह फर्मान के सम्बन्ध में सोचने लगा—जमींदार को अपने

आप पर अक्सर झुँझलाहट होती, पिद्दी-इतनी जान को वह जब चाहता मरोड कर रख सकता था। वह हैरान होता, न जाने क्यों जब भी वह फर्मान के विषय मे सोचने लगता था, सोचता जाता, सोचता जाता।

एक दिन उसने निर्णय किया कि वह यह खटका भी दूर कर देगा। उसने जहाने और जुम्मे को अपने पास बुलाया, कितनी देर तक वह उनके साथ घास पर लेटा रहा, लेटा रहा। जहाना और जुम्मा कुछ और ही चापलूसी करते रहे, किन्तु जमीदार के मुँह से उसके दिल की बात न निकली।

और इस विचित्र उधेड़-बुन मे जमीदार के कई साँझ बीत गईं, और जब धुँधलापन फैलने लगता—जमीदार अपनी चार घोडो की गाड़ी में हवेली की ओर लौट आता।

एक दिन साँझ को वह यूही लौट रहा था कि उसके अचानक जी में आया—घोडो की बाग उसने अपने हाथ में थाम ली जैसे कई बार वह अपनी बीमारी से पहले किया करता था, चार घोड़ो की गाडी धीरे-धीरे चलती जा रही थी। उसके आगे लगभग पन्द्रह बीस कदमो पर जुम्मा और जहाना अपने-अपने घोडो पर थे। लोगो को जमीदार के आने-जाने का समय मालूम होता, वह स्वयमेव इधर-उधर हो जाते थे। एक मोड मुड़ते हुए जहाने के घोडे ने लीद की और सडक के किनारे आमने-सामने खड़ी दो लडकियाँ झपटकर उस पर मेरी-मेरी करती हुई टूट पडी। इतने मे जमीदार की गाडी भी मोड मुड़ चुकी थी—इतने मे जमीदार बागे खीचता ही रहा, किन्तु चार घोडो के सोलह सुम्मो और आठ पहियो की गाडी ने सात-सात वर्ष की उन लडकियो को कुचल कर रख दिया।

एक कुहराम मच गया, कोलाहल-सा जाग उठा, सारा बाजार, गली मोहल्ला, अडोस-पडोस एकत्रित हो गया—न जाने इन दिनो इन लोगो की आँखे मोटी-मोटी क्यो हो गई थी, उनमे साहस कहाँ से आ गया था। लोग दौड़कर गाडी की ओर बढ; जैसे बाढ उमड आ रही

हो, किन्तु फिर क्षण मे बिखर गए। जमीदार ने केवल उचककर बाहर ही देखा था। गाडी अपनी चाल चलती हुई महल मे आ गई, जमीदार को यह जान पड़ा जैसे जीवन में पहली बार उसका दिल बैठ गया हो। उसने हर आँख मे हिसा देखी थी, उसने प्रत्येक भुजा को ऐंठते देखा था, और यो बाजार-का-बाजार लोगो से भर गया था। निहत्थे, नगे, भूखे और दुबले-पतले ककाल एकत्रित हो गए थे और सभी मिल कर जैसे एक आँधी बन गए हो।

विशेषरूप से जो नवयुवक जमीदार की आँखो मे खुभा वह सबसे लम्बा था, सबसे अधिक उसकी आँखें लाल थी। सबसे अधिक उसका वक्ष चौडा था, तना हुआ था। उसके अकड़े और ऐंठे हुए पठ्ठे जैसे टूट पडने के लिए विकल हो रहे थे, गोरा सुडौल शरीर वाला और जिसकी बिल्ली की-सी आँखें थी।

और जमीदार सोचता जब बिल्ली की-सी आँखो में प्रलय नाच रही होती है, तो वह कैसी दि ाई देती है।

अपने कमरे मे आकर उसे यो अनुभव हुआ जैसे वह यहाँ किसी का अतिथि बन कर ठहरा हुआ हो, जैसे उसकी सम्पूर्ण वस्तुएँ उसे छोड कर पीछे हट रही हों, जैसे उसके वस्त्र तक उसके शरीर से उतरते जा रहे हों।

फिर उसने रेशमाँ को पुकारा।

अब भी कोई उत्तर न मिला, पहले तो वह एक-ही आवाज पर बोल उठती थी।

रेशमा आखिर जा कहाँ सकती थी, उसने फिर जोर से उसे आवाज दी।

"कही सोई न पडी हो।"

उसे फिर कोई उत्तर न मिला।

जैसे एक कंकर किसी तालाब में गुम हो जाता है, वैसे-ही इतने बडे कमरे के एकान्त में वह गुम हो गया।

बाढ़ !



२२

श्रावण की झडी इस वर्ष कुछ इस प्रकार लगी, जैसे सदैव वर्षा हुआ करेगी। वर्षा रुकने मे ही न आती थी, बादल टूट-टूटकर बरस रहे थे, बरसे जाते, काली घनघोर-घटाएँ उमड-उमड पड़ती। बादलो के पीछे बादल, बादलो के ऊपर बादल, आकाश बादलो से जैसे लदा हुआ हो। दिनभर गडगडाहट और कडकडाहट होती रही, सारी रात बिजली कोदती, चमकती और तडपती रहती। जितनी गर्मी उस वर्ष पड़ी, उतनी-ही शायद वर्षा हो रही थी, वर्षा हो रही थी, हो रही थी। किसी की कोई प्रार्थना न सुनता था, न अनुनय-विनय सुनता था, न किसी की फरियाद सुनता था। पहले आठ दिन लोग सोचते रहे कि यह झड़ी अक्सर सप्ताह-भर रहा करती है, किन्तु एक सप्ताह बीत चुका था, फिर एक और सप्ताह बीत गया; और अब तो एक महीना हो गया था, फिर भी सूर्य कही दिखाई नही दे रहा था, आकाश निखरने में ही नही आता था। गर्मी से तग आकर जिन लोगो ने वर्षा के लिए हाथ उठा-उठाकर प्रार्थना की थी, अब सूर्य के लिए तरसने लगे थे।

पोठोहार का दरिया सुहाँ सब्र किये रहा, किये रहा। उसने अपना पाट बढा लिया, पेट फुला लिया, बडी कठिनता से बहता रहा; किन्तु वर्षा थी कि सिर पर सवार हुई जा रही थी। आख़िर क्रोधित होकर

दरिया ने अपने किनारे तोड लिये, किनारे तोडकर ऊपर चढ गया। पेड़ उखेड दिये, फस्ले बर्बाद कर दी, गाँव-के-गाव बहा ले गया; और दरिया जितना क्रोध मे आता, उतने ही बादल और गर्जते, उतनी ही मूसलाधार वर्षा होती।

और दरिया का पानी अभी तक चढ रहा था, फैल रहा था, फैलता जा रहा था, सम्पूर्ण-प्रदेश उसकी लपेट मे आ चुका था। पहुँचते-पहुँचते पानी तख्तपडी तक आ पहुँचा, सुहाँ के किनारे गाँव तक फैल चुके थे। जैसे लोग वहाँ बसते ही नही थे, गाँवो के कच्चे घरो की छते टपक रही थी, गली-मोहल्लो और घरो मे पानी आ गया था।

आकाश शोर मचाते हुए पक्षियो से अटा हुआ था, जिनके घौसले या तो भीग चुके थे या गिर पडे थे। गिद्ध और बडी-बडी चीले ललचाई हुई नजरो से एक मदहोशी में उड रही थी; उस दुर्गन्ध से जो सडते हुए जानवरो और भभकती हुई इन्सानी-लाशों से उठ रही थी। कभी-कभी कोई गिद्ध पानी में फूली हुई भैंस की लाश के पेट पर आ बैठता, और उसे नोचना आरम्भ कर देता। बड़ी-बड़ी चीले इन्सानो की लाशो पर बार-बार आकर बैठती और उनके साथ आप तैरती भी रहती, आँखे, मुँह, और सिर को नोचती भी रहती।

पानी में लाशे इस प्रकार तैर रही थी, जिस प्रकार पतझड़ के दिनों में तालाब के पानी पर सूखे पत्ते तैरते है। चारो ओर जहाँ-कही भी दृष्टि जाती, लाशें-ही-लाशें थी। पुरुषों की, स्त्रियो की, बच्चों की, ढोर-डंगरो की, भैसों की, बछडों की, और-तो-और मछलियाँ भी मरी पडी थी, मृगियाँ मरी पड़ी थी, खरगोश मरे पडे थे।

पानी की आवाज यूँ सुनाई देती थी जैसे कोई शेर दहाड रहा हो, दूर कही जैसे साँप फुंकार रहा हो; और पानी अभी तक चढ रहा था, फैल रहा था, इलाके को और भी अपनी लपेट में लिये जा रहा था।

पानी के अपने शोर के अतिरिक्त चारो ओर मौत की-सी नीरवता

थी। या तो लोग मर चुके थे, या मरने के भय से मुँह फाडे आकाश की ओर देख रहे थे। कभी-कभी यह स्तब्धता टूट भी जाती, जब कोई छत गिर पडती तो छत पर बैठे या खडे परिवार चीखते-चीखते डूब जाते।

ऊपर से वर्षा हो रही थी, नीचे पानी चढ रहा था। गलियो में जानी-पहचानी लाशे तैर रही थी, बिलखते हुए बालक अपनी माताओ के खाली स्तनो को चूस रहे थे, पत्नियाँ पतियो के मुँह की ओर देख रही थी, पुरुष स्त्रियों से लज्जित थे, बालक बेसुध पडे थे, युवक झुँझला रहे थे।

शाम होती थी, सबेरा होता था, रात आ जाती थी, और यूँ तीन दिन बीत गए।

बाढ मे पेड बहे जा रहे थे जिन्हे फल लगे हुए थे। बाढ मे बाड़े बही जा रही थी जो बागीचो की रक्षा के लिए लगाई गई थी। खेत रेतीले हो चुके थे, वे खेत, जिनमे दस बार हल चलाकर बीज डाला गया था। बाढ उन चौखटों को बहाकर ला रही थी, जिनके साथ बधे हुए माँगलिक-सूत्र अभी मैले नही हुए थे। बाढ मे मन्दिरो की मूर्तियाँ बही आ रही थी, मस्जिदो के मीनार बहे आ रहे थे। बाढ में नवयुवक बहे आ रहे थे, बच्चे-बूढे, जिनकी भुजाओ पर तावीज बँधे हुए थे, और अभी तक बँधे हुए थे। दुआ करते हुए मौलवियो को भी बाढ बहा लाई थी, और घडियाल बजाते हुए पुजारियो को इतना अवकाश न मिला कि बच सकते और वे शंख पकडे हुए बह गए। पानी पर किसान तैर रहे थे, किसानो के हल तैर रहे थे, किसानो के ढोर-डगर तैर रहे थे, लाल-सुर्ख दोशाले तैर रहे थे, कँगना-बँधी कलाइयाँ तैर रही थी। काजल का भार न सह सकने वाली आँखो पर कव्वे अपनी चोचे लगा रहे थे। सात पर्दों में रहने वाली सँभाल-सँभाल कर रखी हुई लड़कियो के झुर-मुट तैर रहे थे। नवयुवको की चक्की के पाट-ऐसी चौडी छातियो पर

चिड़ियाँ सस्ताने के लिए आ बैठती थी। कही-कही किसी खण्डहर मे लाशे एकत्रित होने लगती। कुत्तो की लाशो पर बच्चे आ टिकते और बच्चो की लाशो पर बूढे आ गिरते। स्त्रियो की नग्नता का कोई लिहाज़ न किया जाता ; एक भैंस के सीग में बच्चे की खोपडी फँसी हुई थी। एक पोठोहारिन के लम्बे बाल किसी बछडे की टॉगो से लिपटे हुए थे, एक माँ के स्तन मछलियाँ नोचकर खा गई थी।

कुएँ बाढ के पानी से भर गए, बावलियाँ भी भर चुकी थी, चश्मे भी भर चुके थे। पानी की कही बूँद नही थी, पीने के लिए पानी मिलता ही नही था, और लोग पानी मे खडे हुए थे जो कमर तक आ चुका था तथा अभी तक चढ रहा था। सामने जिस पानी मे मुरदे तैर रहे थे, सामने जिस पानी मे कुत्ते सड रहे थे, वह पानी कैसे पिया जाता, तो भी प्यासो ने वह पानी पिया। फिर कै आई, पेचिश लगी, लोग तेजी से मरने लगे। मुंडेरो पर से मुरदो को नीचे फेंक दिया जाता। कोई किसी के लिए रो न सकता, कोई किसी के लिए प्रार्थना न कर सकता, "अरदास" न कर सकता। हैजे से मरते हुए लडको की माताएँ उन्हे अपने पुत्र नही समझ रही थी, हैजे से मरते हुए माता-पिताओं को पुत्र पहचान नही रहे थे।

और आकाश था कि उसकी आँख सूखने मे ही नही आती थी, टपक-टपक कर टपकता। माएाले की ओर से बादल जैसे बहते आ रहे हों, दौडते आ रहे हो ; बादलो के ऊपर बादल, एक-दूसरे का कंधा रगडते, एक दूसरे को फलाँगते, लताडते, लपेटते, लुढकते आ रहे थे। पवन का प्रत्येक झोका जैसे भरा-भरा भीगा-भीगा हो। लोगों ने छतो पर बरसातियाँ लगा दी, छतरियाँ खोल दी, चादरे तान दी, किन्तु व्यर्थ! जो लोग पेडो पर चढ गए थे, वे तीन दिन तक उन पर टँगे रहे। पेड़ो पर चिमटे-चिमटे उनकी आँख लग जाती और पेड़ो से चिमटे हुए ही उनकी आँख खुल जाती।

लोग हमेशा विस्मित हुआ करते थे कि जमीदार की हवेली की नीव इतनी ऊँची क्यो हुआ करती थी, किन्तु आज उन्हे पता चला कि इसका लाभ क्या था। पानी चढता रहा, चढता रहा, किन्तु किसी भी हवेली की देहली को न छू सका, सारी धरती भीग गई, गीली हो गई, किन्तु जमीदार का घर अभी तक सूखा पडा था। पानी जैसे उसकी हवेली की सीढियो से आकर खेल रहा था और मजबूत सफेद सीढियो के पत्थर स्थिर खडे थे। जब से वर्षा होने लगी थी, जब पहली बार कुहराम मचा, और इससे पहले कि मौत की-सी स्तब्धता व्याप्त होती, जमीदार की अट्टालिका के द्वार और खिडकियाँ बन्द कर दी गई थी। कभी-कभी कोई झरोखा खुल जाता, उसमें से जैसे कोई ईश्वर का चमत्कार देख रहा हो,—भीतर से कोई आवाज न आई, भीतर से कोई सन्देश न आया, भूखे प्राणियो के लिए खुराक का एक दाना बाहर न फेका गया।

और लोग हैरान थे—ईश्वर कहाँ है ? ईश्वर क्या है ? ईश्वर को यह क्या हो गया ह ? ईश्वर ऐसा तो नही सुना जाता, उसकी दृष्टि मे तो सारा चराचर समान है। तख्तपडी की मस्जिद गिर पडी थी, तख्तपड़ी का गुरुद्वारा बह गया था, तख्तपड़ी का मन्दिर औधा पड़ा था। मन्दिरो, मस्जिदो, गुरुद्वारो मे प्रतिदिन अपने मस्तक रगडने वाले प्राणी तडप रहे थे। पुजारी सहमे हुए हाथ फैला-फैलाकर हार चुके थे, और सामने जमीदार के महल खडे थे, जो मस्जिद के पडोस मे उम्र भर अत्याचार ढाता रहा। मन्दिर के सामने उसके घोड़ो ने उस दिन दो बच्चे कुचलकर रख दिये थे, महल में खुराक के गोदाम भरे पड़े थे। महलो मे पानी के कुएँ थे, महलो की छतो मे से पानी की एक बूंद नही टपक सकती थी। लोग सोच रहे थे कि ईश्वर क्या है ? ईश्वर कहाँ है ? ईश्वर ऐसा तो नही सुना जाता ?

और लोगो ने आकाश की ओर देखना बन्द कर दिया, लोगों ने ईश्वर की सौगन्द उठानी बन्द करदी।

किन्तु फिर भी कुछ इस बात मे भी उसका कोई भेद समझते, कई लोग इसे ईश्वर-लीला कहकर चुप हो जाते। पानी मे गलते हुए कुरान-शरीफ के पन्ने, मलवे के नीचे दबी हुई कृष्ण महाराज की प्रतिमाएँ; बहुतो को यूँ अनुभव होता कि वे फिर उठेंगी, फिर उभरेंगी।

और कोई सोचता कि यह परीक्षा है और वेदना की मस्ती मे डूब जाते। मरकर जीवित होने का विचार बहुत-सो को एक हौसला-सा देता। मुँडेरो भर बैठे दुर्बलता से ऊँघते हुए ईश्वर के जीव स्वयमेव जैसे चुपके से नीचे फिसल जाते, दूसरे को पता भी न चलता।

किन्तु बहुत से ईश्वर को लाख-लाख गालियाँ देते, और कई सोचते कि उन्हे अपनी सहायता आप करनी चाहिए, और ईश्वर भी उन्ही की सहायता करता है जो अपनी सहायता आप करते है। वे हैरान थे कि कोई अपनी सहायता क्योकर करे ? कोई वर्षा से क्योकर कहे कि वह बन्द हो जाय ?

कोई कैसे मिट्टी की दीवारे को गलने से रोक सकता है ? कैसे कोई पानी के बिना, रोटी के बिना, और सूर्य के बिना जीवित रह सकता है ?

एक झोंका-सा आया

२३

फिर शहर की ओर से जीवन का एक आवाहन आया, एक झोका-सा आया, जिसने बहुतो को पुनर्जीवित कर दिया।

फर्मान तख्तपड़ी में आ चुका था।

विपत्ति में लोग उसे प्रतिपल-प्रतिक्षण स्मरण करते रहते। कोई कहता—वह इस विपत्ति में क्या कर सकेगा ? कोई कहता—"राजकुमार के लिए कोई बात कठिन नही है।" और अब वह बाहर से गाँव मे पहुँच चुका था।

जाते ही फर्मान गायब हो गया, जैसे पहले भी वह दो-दो चार-चार दिन और कभी सप्ताह भर किसी के ढूँढने पर भी न मिलता। और उसी शाम को स्वयसेवको की एक सेना आ उपस्थित हुई, सब कोठों पर आटा जाने लगा, दवाइयाँ जाने लगी।

लोग हैरान थे– राजकुमार कैसे यह जादू कर लेता था। लोग यह कहते कि उसका मेल-जोल दूर-दूर तक था; कुछ लोग आपस मे खुसर-फुसर करते कि वह रावलपिंडी-शहर में जाकर ताँगे पर चढता था। बहुत-से कहते कि वह बाबुओ के साथ बातें करता था, ऐनक वाले बाबू कभी-कभी उसे गाँव में भी मिलने आते थे। बहुत से कहते कि भागभरी

का लडका कितना महान् व्यक्ति बनता जा रहा था, न उसे कोई घमड था, न उसे कोई अभिमान था।

फर्मान के सामने पहाड-इतना काम था।

काम करते समय कई बार उसे सख्त झुँझलाहट होती, मौत ने जैसे लोगो पर जादू कर दिया हो। मरने मे लोगो को जैसे आनन्द मिल रहा हो, बँधे हुए खिचे हुए, लोग मृत्यु के मुँह मे चले जा रहे थे।

लोग घरो मे से निकलकर दालानो के पेडो पर जा चढे थे। किसी ने अधिक-से-अधिक यह किया था कि चारपाई उठाकर पेड़ के तनो पर डाल ली थी और बैठने को एक मचान-सा बना लिया था। किन्तु वे अपने घरो को नही छोडते थे, एक-एक करके उनके कच्चे कोठे उनके सामने ढेर होते जाते, किन्तु दालान मे से लोग बाहर चरण न रखते। अपने घरों पर आखिरी नजर डालते। उनके वे घर, जिनमे उन्होंने जन्म लिया था, पले—बढे, जिनमें उनकी सन्तान खेल-कूदकर बडी हुई, ऐसे घरो को कौन छोड सकता है ? पानी और चढ सकता था, पेड उखड सकते थ। स्वयसेवक उन्हे एक स्थान पर एकत्रित करने के लिए जाते, वास्ता देते, मिन्नते करते हुए हार जाते किन्तु लोग अपने दालानो में से न निकलते, अपने घरो से बाहर न आते। इन घरो में, जिनका नीव उन्होंने स्वयं अपने हाथो से रखी थी, जिनकी दीवारो को उनकी पत्नियाँ सारा वर्ष लीपती और पोतती रही, सँवरती और निखारती रही—"वे चाहे मर जाँय" वे कहते—'किन्तु मरेगे तो अपने दालान ही मे मरेगे।"

अपने कोठे की छत पर से एक दिन फर्मान ने देखा कि एक बूढी पोठोहारिन बैठी-बैठी बही जा रही थी। छत की बल्लियो की नाव पर वह जैसे बैठी हो, पानी की कोई लहर उसे अँधा कर सकती थी, किन्तु वह फिर भी बैठी बही जा रही थी। अपने कोठे की छत पर जहाँ से वह कभी परदेसियो की राह देखा करती थी।

इधर फर्मान ने शहर से लौटकर गाँव मे चरण रखा, उधर पानी उतरना आरम्भ हो गया। देखते-देखते आज कुछ, और कल कुछ, और

फिर कम होता-होता बिल्कुल उतर गया।

पानी तो समाप्त हो गया किन्तु अपने पीछे विपत्तियो का एक पहाड छोड गया। गली-मोहल्लो मे और सडको पर कीचड-ही-कीचड था, चारो ओर लम्बे और गहरे गड्ढे पड गए थे, और उन गड्ढो में पानी अभी तक खडा था। चप्पे-चप्पे पर लाशे पडी थी, स्त्रियो की, बच्चो की, वृद्धो की, जिन्हे जलाया जाना था। और फिर जानवरो के कँकाल थे, इन सबको भी सँभाला जाना था। यदि इसमे तनिक भी देर हो जाती तो एक ऐसा रोग फैल सकता था जिससे कोई भी न बच सकता। मलवा उठाया जाने वाला था—उनके नीचे धड़कती हुई छातियाँ दबी हुई थी, चलती हुई नब्जे दबी हुई थी। औषधियाँ ढूंढनी थी, मरहम-पट्टी का सामान एकत्रित करना था, आटा ढूंढना था, वस्त्र कही से लाने थे, और काम करने वाल स्वयं भूख थे, नगे थे और रोगी थ।

किन्तु फर्मान को कोई विपत्ति निराश न कर सकी। प्रत्येक गली मे, प्रत्येक मोहल्ले मे, प्रत्येक घर में वह स्वय पहुंचा और आवश्यकता की प्रत्येक वस्तु जरूरत की जगह पर पहुँचाई। लोग-तो-लोग, वह स्वयं भी कभी हैरान रह जाता कि कैसे आवश्यकताएँ पूर्ण करने के लिए वस्तुएँ आवश्यकता से अधिक उसके पास आ जाती थी। नवयुवको को फर्मान के नेतृत्व मे काम करने मे एक उत्साह-सा मिलता, वे सब-के-सब एक लगन मे उसके साथ काम मे जुट जाते।

और लोग सोचते कि यदि जमीदार एक बार 'सुहाँ' पर बाँध लगा दे, किन्तु लोग कहते कि उसने तो एक पुल बनाने से इन्कार कर दिया था, और प्रतिवर्ष कितने ही लोग सुहाँ की लहरो की भेट हो जाया करते थे। और फर्मान सोचता कि ये लोग स्वयं क्यों काम नही कर सकते थे। साधारण जनता, और सुहाँ के इलाके के मजदूर मिलकर यह काम क्यो नही कर लेते थे ?

फिर कडकती हुई धूप पड़ने लगी। ज्यो-ज्यो लोग अपनी सहायता आप करते, त्यो-त्यो प्रकृति उनका हाथ बाँधती, और नवयुवको की

एक सेना अपने-अपने काम में संलग्न थी। मलवे के ढेर उठाए जा रहे थे, गलियाँ साफ की जा रही थी, गड्ढे भरवाए जा रहे थे, रोगियो की सेवा की जा रही थी, कोई कब्र खोद रहा था, कोई श्मशान मे लकडियाँ पहुँचा रहा था।

और सुहाँ सिकुड़ता-सिकुडता अपने किनारो मे सीमित हो गया, धीरे से और चुपके-से यूँ बहने लगा जैसे कुछ हुआ ही न था।

किन्तु गलियो का कीचड समाप्त होने मे ही न आता था। लोगो की भूख हटने मे ही न आती थी। दु खो से दु:ख जन्म लते, एक रोग का इलाज किया जाता दूसरा रोग आ दबोचता। किन्तु फर्मान की सेना 'राजकुमार जिदाबाद' 'फर्मान जिदाबाद' के नारे लगाती दिन-रात अपने काम मे लगी रहती।

फर्मान ने अपने साथियो को बताया कि किस प्रकार कहाँ सहायता पहुँचानी है, कैसे मिल कर रहना है और मिलकर काम करना ह, वह स्वय लोगो क साथ मिल कर काम करता और कभी फिर गायब हो जाता।

और आज तीन दिन हो गए, फर्मान फिर कही अन्तर्ध्यान हो गया था।

भागभरी को भी अपने लड़के का कुछ पता नही था। वह इस प्रकार पहले कभी नहीं गया था। कही जाय, फर्मान अपनी माँ को अवश्य बता कर जाता था कि वह कहाँ जा रहा है और आज पूरे तीन दिन हो गए थे। स्वयसेवक अपना शेष कार्य कर रहे थे। पल-पल के पश्चात् "राजकुमार जिदाबाद" के नारे लगा रहे थे। और ज्यों-ज्यो भागभरी अपने बच्चे के विषय में सोचती, उसके हृदय मे लहरे उठती। आज तीसरे दिन सोचते-सोचते, बाट जोहते-जोहते उसे भय लगने लगा, लोग झुँडो-के-झुँड बाहर काम कर रहे थे। सारा दिन, सारी रात फावडे चलते रहे, और प्रत्येक खड़खड़ाहट पर भागभरी के आंखो के सामने बुरे-बरे चित्र घूमने लगते।

सोचते-सोचते डरती-डरती भागभरी आखिर उसे ढूँढने के लिए निकल खड़ी हुई। कोई कहता कि वह परसो यहाँ खडा था, कोई कहता कल उसे यहाँ उसकी परछाई-सी दिखाई पड़ी थी। कोई कहता अभी सबेरे तो उसने बाजार के पिछवाडे उसकी आवाज सुनी थी, किन्तु फर्मान हर जगह था और कही भी नही था।

ढूँढते-ढूँढते भागभरी के चरण न जाने क्यो जमीदार की हवेली की ओर उठते, उस हवेली की ओर, जिसे देखकर भागभरी की आँखे फट कर बाहर आ जाया करती थी।

भागभरी स्वय कभी-कभी यह सोचकर हैरान होती कि वह आजकल इतनी विकल क्यो थी। फर्मान पहले भी तो कई बार घर से बाहर गया था। फिर वह अपने-आपको पुत्र के आरम्भ किये हुए काम में व्यस्त करती—गलियो को समतल किया जाना था, छतों के लिए सामान ढूँढना था, टूटी-फूटी दीवारो को लीपना था, दीवारो की मरम्मत की जानी थी।

जहाँ-जहाँ गड्ढो मे पानी खड़ा रह गया था, फर्मान ने सबको समझाया कि उसे सुखा दिया जाय, वरना जो मच्छर पहले ही इतन थे और अधिक बढ जाँयगे। और यदि मलेरिया या कोई और रोग फूट पड़ा तो सारा पोठोहार मौत के मुँह मे चला जायगा।

काम करते-करते भागभरी किसी माँ को अपने लड़के को पुकारते सुनकर चौक पड़ती। किसी लड़के को अपनी माँ के साथ बाते करता देख कर उसे छोटी-छोटी बाते याद हो आती—कैसे फर्मान को उसने पाला था, लाड़ और चाव के साथ! स्नेह के साथ!! भागभरी को याद आया—एक बार उसने अपने बच्चे को छिपा दिया था, जब उनका एक सम्बन्धी उनसे मिलने के लिए आया था। वैसे तो कोई बात नही थी, किन्तु किसी ने बताया था कि उनकी दृष्टि अत्यन्त कठोर थी। बात यो हुई कि एक व्यक्ति एक शिला उठाए कही खड़ा था, लोग कहते है कि भागभरी के इस सम्बन्धी ने शिला उठाए हुए उस व्यक्ति की ओर

देखा और बोला—"कितनी अच्छी शिला है ?" बस, उसके मुँह से यह बात निकली ही थी कि देखते-देखते उस शिला के टुकडे-टुकडे हो गए। शिला वाला हक्का-बक्का रह गया, उसने उसकी ओर अवाक् होकर देखा और आँखो-मे-आँखे डाल कर बोला—"क्या दृष्टि है !" और कहने वाले बताते है कि भागभरी के सम्बन्धी की एक आँख फूटकर बाहर आ गई। और भागभरी सोचती कि कही फर्मान को उसकी अपनी दृष्टि न लग गई हो। इन दिनो उसे दिन-रात काम करता हुआ देखकर वह खुशी से फूली नही समाती थी, किन्तु इन बातों की फर्मान खिल्ली उड़ाया करता था, इसलिए भागभरी उन भ्रमो को त्याग चुकी थी, तो भी वह हैरान थी…… इतनी विकल क्यो थी और बार-बार उसका जी क्यो चाहता कि वह उसे ढूँढ़ने के लिए चल दे और ढूँढ़ती-ढूँढती जमीदार की हवेली की ओर जा निकले।

भागवान !



२४

भागभरी हैरान थी कि बार-बार उसका जी जमीदार की हवेली की ग्रोर जाने को क्यो कर रहा था !

निदान उससे रहा न गया। उसे यूँ ग्रनुभव होता था जैसे किसी के चरण-चिह्नो पर जा रही हो, एक रात ग्रौर बीत गई किन्तु फर्मान ग्रभी तक नही ग्राया था। वह घर से निकल पड़ी।

गलियो से निकलती, दालान फलाँगती, भागभरी आखिर शहर के उस भाग मे पहुँच गई जहाँ उसके भीतर की माँ ग्रनुभव कर रही थी कि उसका लड़का खो गया था। सामने जमीदार की हवेली के ऊँचे मीनार थे, जो ग्रासमान से बाते कर रहे थे, जो सुहाँ को ललकार रहे थे। हवेली की नीव कँधे-इतनी ऊँची रखी गई थी, इसलिए बाढ की कोई मुसीबत उसे नही छू सकती थी। नानकशाही छोटी-छोटी ईंटो ग्रौर मिट्टी मे दाले मिला-मिला कर तैयार किये हुए मसाले से बनाई हुई दीवारे, छतें ग्रौर नीवे जम कर खडी थी, जैसे कभी कुछ हुग्रा ही न हो।

भागभरा सोचती कि यह हवेली कितनी पक्की है, एक दुर्ग के समान। भागभरी सोचती—यह हवेली न जाने कब से खडी थी ग्रौर वैसी-की-वैसी विशाल थी। भागभरी सोचती—यह हवेली न जाने कब तक यूँ ही ग्रटल, दृढ ग्रौर ग्रछूती खड़ी रहेगी।

इतनी भयानक बाढ आई थी, इतनी कि सारे प्राणी बिलबिला उठे किन्तु सन्दूक के समान बनी हुई इस हवेली में से कोई वस्तु न जा सकी। कोई मकान ऐसा नही था जो सूखा बचा हो, किन्तु इसकी दीवारें वैसी-की-वैसी स्थिर खडी थी।

और भागभरी का सुन्दर लड़का सब से कहता फिरता था कि एक बाढ आयगी, एक आँधी आयगी, एक आग भडकेगी, एक अलाव जलेगा, और न जाने क्या-क्या वे भीतर बैठे हुए कानाफूसियाँ करते रहते।

ज्यो-ज्यो भागभरी को अपने लडके की इस प्रकार की बाते याद आती, वह त्यो-त्यो भय के मारे काँपने लगती। बार-बार उसकी दृष्टि आकाश की ओर जाती, प्रतिक्षण उसके हाथ ऊपर की ओर उठते।

सोचती-सोचती भागभरी पाँव कही रखती और वे पडते कही, जैसे कोई बीमार हो। कभी रुक जाती, कभी वह बैठ जाती, कभी चलने लगती और कभी दौडना आरम्भ कर देती। प्रत्येक पदचिह्न उसे फर्मान का पदचिह्न लगता, उसका लडका जो नगे पाँव भी चलता, जूती भी पहनता, बूट भी उसके लिए शहर से आते थे। उसकी कोई चाह ऐसी नही थी जो पूर्ण न हुई हो। उसने कोई बुरी आदत अपने साथ चिमटने नही दी थी, कई-कई दिन वह गलियो मे नगे पाँव घूमता रहता, उसकी एडियाँ खुर्दरी हो गई थी। भागभरी सोचती—जब वह शहर जाया करता था, तो उसके ऐनकों वाले मित्र उसके पाँवो में जुराबें पहना कर भेजते थे, बूट भी पहना कर भेजते थे।

कभी-कभी भागभरी सोचती कि फर्मान यदि ऐसी अनोखी-अनोखी बाते न करे तो कितना बडा किसान बन सकता था। वह प्रत्येक काम दिल लगा कर किया करता, जी तोड़ के किया करता, वह दिन-रात एक कर देता। किन्तु पोठोहार मे कितने किसान थे, जमीदार किसी को फलता-फूलता देख कर प्रसन्न हो सकता था।

"ओ भागभरी!" उसे यूँ जान पडा—जैसे किसी ने उसे आवाज दी हो, किन्तु भागभरी अपने विचारो में डूबी हुई थी। जमीदार की

हवेली की दीवारे पत्थरो की भाँति कठोर थी। इतनी भयकर बाढ आई इतनी भयावना तूफान आया, किन्तु उसकी हवेली का एक किनारा तक नही भीगा था।

"ओ भागवान !" फिर उसे आवाज आई—भागभरी काँप उठी—यह तो जमीदार की आवाज थी।

भागभरी ने जब दोनो ओर देखा, तो उसे सूखता हुआ कीचड दिखाई दिया, कीचड मे खुभे पैरो के चिह्न दिखाई दिये, औंधे पडे पेड दिखाई दिए। वृक्षो मे फँसे हुए घास के ढेर, चीथडे, पक्षियो के पिंजर, और सामने जैसे इस्पात की बनी हुई जमीदार की हवेली थी। पत्थर की बडी-बडी शिलाओ पर शिलाएँ, उन पर छोटी-छोटी नानक-शाही ईंटे ठीकरो की भाँति जडी हुई थी जैसे उन्हे अशर्फियो के समान पिरोया गया हो। ऊपर—उसके भी ऊपर—और ऊपर सामने के झरोखे मे जब भागभरी की दृष्टि पहुंची ता उसे यो अनुभव हुआ, जैसे सारी सृष्टि चीख उठी हो—"हे भगवान् !" उसकी आँखो के सामने अँधेरा छा गया और उसका अग-प्रत्यग जैसे निःशक्त हो गया, वह धड़ाम से नीचे गिर पडी।

भागभरी बेसुध और गुमसुम पड़ी रही, पडी रही, पत्थरो के समान जमे हुए कीचड पर। फिर रावेल की सुदृढ भुजाओ मे, फिर जमीदार के एकान्त कमरे के गद्दो पर, निदान जब उसे होश आया, उसके सामने जमीदार खडा था। एक बार फिर भागभरी की आँखे बन्द हुईं, उसके अग मुड गए, उसके चेहरे पर पीलिमा फैल गई। लगभग डेढ घटे के पश्चात् भागभरी ने फिर आँखे खोली, उस बार वह सिहनी की भाँति दहाड उठी।

"कहाँ है बच्चा ! कहाँ है मेरा बच्चा ! कहा है मेरा लाल ?" भागभरी ने एकदम चीखना आरम्भ कर दिया—"ऐसा अँधेर कभी नही देखा था, ऐसा जुल्म अत्याचार कभी नही सुना था, ओ लोगो मेरा शहतीर-ऐसा नौजवान कडियल बेटा ! यदि उसे कुछ आँच आई,

उससे किसी ने कुछ कहा, उसकी ओर यदि किसी ने आँख उठा कर देखा तो मै उसका रक्त पी लूंगी ! मै तो कहती हूँ कि "हे ईश्वर तेरे आगे मेरी विनय है । मै तो अबला हूँ, जिसका कोई नही, मै तो विधवा हूँ !

"तूने पहले ही मेरे सिर में धूल डाली है, पहले ही तूने क्या कुछ कम अत्याचार किया है, मै तो कही मुँह दिखाने के योग्य न रही । मैने क्या-क्या विपत्तियाँ नही सही । सारा-सारा दिन जान मारती रही हूँ और मेने पेड़ ऐसा कड़ियल लड़का पाल-पोस कर बड़ा किया है, अभी तो खानकाहो मे वे दिये नही बुझे, अभी वह तेल समाप्त नही हुआ, माथा रगडते हुए चिह्न पड गए है, अभी तो मेरी चादर उजली नहीं हुई, क्या ये धब्बे दूर हो सकते है ?"

जमीदार उसके सामने मुस्करा रहा था, वह तनिक भी क्रोधित नही हुआ था—भागभरी एक निर्भीक निधड़क सिंहनी की भाँति गरजती रही—"मै हाथ जोड के प्रार्थना करती हूँ, सारी तख्तपड़ी का वास्ता देता हूँ, तुझे सारे पोठोहार का वास्ता देती हूँ, तुझे तेरी रेशमाँ का वास्ता देती हूँ, उसे कुछ न कह ! यदि उसे कुछ हो ग़या तो मै आकाश के तारे नोच लाऊंगी, चारो ओर आग लगा दूंगी । यदि तूने उससे कुछ कहा—तो मै मस्जिदे तोड़ दूंगी, खानकाहो की मिट्टी······"

जमीदार अब भी मुस्करा रहा था, जैसे उसकी आँखे कह रही हो कि तू थककर कब मौन होगी । और भागभरी अभी तक बोलती जा रही थी, उसके मुँह से अब झाग निकलने लगी थी ।

भागभरी ने एक-एक करके जमीदार के अत्याचार गिनवाए, अपने बहादुर को स्मरण करके उसकी आँखो से आँसू बहने लग पडे । जमीदार को उसने ललकार-ललकार कर बताया—वह जानती थी, कैसे उसे विश्वास था कि यह सब उसी की करतूत थी—किसी को मलवे के नीचे गिरा देना, किसी का सुहाग लूट लेना । ऐसे अत्याचार करके वह कह रही थी, उसे दड मिलेगा, वह गल-सड कर मरेगा ।

किन्तु जमीदार फिर भी मुस्कराता रहा था, वह क्रोधित हो ही न सकता था, उसके माथे पर त्यौरी तक न उभरी।

थक-हार कर भागभरी ने उसकी अनुनय-विनय आरम्भ कर दी, वह फर्मान से उसे बस एक बार मिला दे, बस वह एक बार उसे सीने से लगा सके, एक माँ अपने बच्चे को गले से लगा सके। आज पाँच दिन हो चुके थे कि उसके ठौर-ठिकाने का पता नही था। जमीदार के अतिरिक्त प्रदेश के सभी लोग उसके चरणो-तले आँखे बिछाते थे। राजकुमार-राजकुमार कहते हुए उनकी जिह्वाए नही थकती थी।

छत से फानूस लटक रहे थे, द्वारो पर। चारो ओर पर्दे सरसरा रहे थे। नीचे फर्श पर पडे हुए कालीनो पर जैसे भागभरी धँसी जा रही थी। दीवारो से तलवारे लटक रही थी, ढाले लटक रही थी, छुरे लटक रहे थे।

भागभरी ने आखिर बिजली के कौदे की भाँति उछल कर एक छुरा उतार लिया—"मुझे बतलाएगा कि नही, मेरा बच्चा कहाँ है ?" आखिर क्रोधावेश मे भभकी—"मै अपने सीने में यह कटार भोक कर तेरे सामने गिर पड़ूँगी। एक और खून तेरी गर्दन पर होगा। यह तेरा पलग हम ऐसे निर्धनो की कब्र है, और ये तेरे पर्दे हम विधवाओ के कफन है।"

जमीदार फिर भी मुस्करा रहा था।

और जब उसके सभी शस्त्र व्यर्थ हुए, तो भागभरी की आँखो से आँसुओ की बाढ फूट पडी। वह मछली की भाँति तडप उठी, उसे जमीदार की मुस्कराहट मे एकदम एक राक्षस की-सी झलक आई, वह बडे जोर से बिलबिला उठी।

"वह तेरा अपना लड़का था, मुझे मेरे ईश्वर की सौगन्द वह तेरा अपना रक्त था। आज कितने वर्ष हो गए, जब उन कस्बो में से तू गुजरा था, मै मल-मलकर नहाई किन्तु यह कलक का टीका मेरे माथे से न उतरा।

"वह तेरा अपना लडका था, सब लोगो का सरदार बेटा। वह कैसे बढ-चढ कर बोलता है, अडोस-पडोस के लोग उसका रहन-सहन देखकर उसे राजकुमार कहते है, और मै कॉप-कॉप उठती हूँ !

"वह तेरा लडका था, क्या तूने उसकी आँखे नही देखी ? क्या तूने उसके बाल नही देखे ? क्या कोई इस सारे प्रदेश में उस जैसा गोरा है ?

"वह किस प्रकार घोड़ो पर कूदता है ? कैसे शिकार करता है ? कैसे वह पोठोहार के प्रत्येक सिंह के हृदय पर राज्य करता है ? वह तेरा लडका नही तो किसका लडका है, ईश्वर के लिए अपनी सतान पर यह अत्याचार न करना !"

और भागभरी की दृष्टि जब सामने खडे जमीदार पर पडी, तो वह एक बुत की भाति निश्चल अवाक् खडा था, उसकी आकृति से जैसे रुधिर टपक रहा हो !

भागभरी सहसा मौन हो गई, दोनो फटी-फटी दृष्टियो से एक-दूसरे की ओर देखते रहे—देखते रहे !

देखते-देखते आखिर जमीदार की आँखें लाल अगार हो गई, उसका चेहरा तमतमा उठा – "नही नही, नही !" आखिर वह कडककर बोला—"तू डायन है, तू चुड़ैल है, तू झूठ बोलती है !"

बेसुध होकर भागभरी फर्श पर गिर पड़ी।

सामने दीवार पर लटकी हुई घडी थी । टिक्-टिक् ऊँची हो गई, फिर और ऊँची हो गई। फिर इतनी ऊँची हो गई, जैसे जमींदार के दिमाग में कोई चोट लगा रहा हो ! वह तेज-तेज चरणो से कमरे में चक्कर काटने लगा, तेज-तेज डग भरते हुए जैसे प्रत्येक चरण, जैसे पाँवों की प्रत्येक आहट उसके मस्तिष्क मे धमक पैदा कर रही हो, जैसे उसके मस्तिष्क मे चोटे लम्बी होती जा रही हों !

अगली सबेरे भागभरी तेली मोहल्ले के बाहर एक खेत की मेढ़ पर पडी हुई थी। दख्लपड़ी मे शोर मच गया। मालिश की गई,

तब कही जाकर भागभरी को होश आया, इतने मे फर्मान भी आ चुका था।

"मै बाहर चला गया था।" उसने माँ से क्षमा-याचना करते हुए कहा।

फर्मान को देखते ही भागभरी बिलकुल स्वस्थ्य हो गई, जैसे उसे कुछ हुआ ही नही था। दो दिन चारपाई पर लेटे रहने के बाद वह फिर अपने काम मे जुट गई। फर्मान दिनभर छोटी-छोटी बातो पर ध्यान देता रहता, कुछ बनाता रहता, कुछ बिगाडता रहता, अन्य लोग शौक से उसके साथ जुटे रहते।

जभी तो !



२५

रात बीत गई, सबेरा हो गया—जमीदार अभी तक अपने कमरे मे निश्चल-अवाक् खडा था, तेज-तेज कदम, कभी धीरे-धीरे कदम, कभी ऐसे कदम जो गड-गड जाते है, धँस-धँस जाते है ।

सामने दीवार पर टँगी हुई घडी की टिक्-टिक् जमीदार को तेज सुनाई देती, जब वह विकल-चरण उठाता । जब उसकी गति नपा-तुली होती तो यह टिक्-टिक् धीमी पड जाती ।

उसके कमरे की ओर जो कोई भी आने का प्रयत्न करता, चौककर जैसे पीछे हट जाता । जमीदार के चेहरे पर एक रग आ रहा था, एक रग जा रहा था, और सबेरा दोपहर मे बदल रहा था ।

जभी तो—जमीदार कभी सोचता कि उसका घोड़ा भागभरी और बहादुर की गली मे से गुजरता हुआ बेलगाम हो जाया करता था । जभी तो शायद फिर वह सोचता कि कई बार उसने मुड़-मुड़कर उनके दालान में झाँका था । एक बार उसने जहाने से भी सकेत किया था कि भागभरी का ध्यान रखा करे, शायद उसकी पत्नी फज्जो उसके यहाँ गई थी कि नही ।

जभी तो—उसके कर्मचारी फर्मान के भूरे बालो की चर्चा किया करते थे, उसकी बिल्ली की-सी आँखो को सराहा करते थे, उसके गोरे

बदन के विषय में कहा करते थे।

जभी तो—उसे लोग राजकुमार कहकर बुलाते थे और सम्पूर्ण-प्रदेश उसे उसके पद-चिह्नों पर चलता हुआ सुनाई देता था। इस प्रकार सोच-सोचकर जमीदार को यूं जान पड़ता जैसे वह बिल्कुल नंगा भरे बाजार में खडा हो और लोग उसके पास से गुजरते हुए अपनी दृष्टि झुका-झुका ले रहे हो!

सोचते-सोचते कभी उसका चेहरा तमतमा उठता, कभी बुझ जाता। जभी तो—वह सोचता—शायद बहादुर उसे अच्छा लगता था—वह कितना परिश्रमी था, वह कितना सरल था जैसे उसके मुँह मे जबान ही न हो—और हवेली की छत उस पर गिर पड़ी। उसने एक खम्भे का सहारा लिया था, वह उस खम्भे को पकड़े रहा, पकडे रहा, और सब मजदूर तो एक ओर को हट गए किन्तु वह अपने स्थान से न हिला और फिर छत उसके ऊपर आ रही।

छत बहादुर के ऊपर आ गिरी और जमीदार ने अपनी आँखें उठाकर कमरे की छत की ओर देखा—फिर सामने की खिडकी से बाहर आकाश की ओर देखा। उसकी आँखे जैसे फटी-की-फटी रह गईं, उसके कमरे की छत तो उसके पूर्वजो ने बनवाई थी, शीशम के काले शहतीर, जिन्हें छ-छः महीनो तक तेल मे डुबोया जाता। यह छत क्योकर गिर सकती थी, और आकाश, सुनने में आया था कि कोई वस्तु नही, यूँही एक भ्रम-सा चला आ रहा है—और जमीदार की गति धीमी पड़ जाती। वह सोचता कि एक उसकी लडकी रेशमा है, जैसे चमेली की कली हो, कोई सुगन्धि जिसे छिपाकर रखा गया हो।

और एक उसका लडका नव्वाब है जो अपनी नई पत्नी के साथ आज-कल रगरेलियाँ मना रहा है, नव्वाब की नई पत्नी, जो नाचती भी है, गाती भी है, जब से उसने हवेली मे पाँव रखा था, हवेली मे एक गूँज-सी भर गई थी।

और एक······

"नही-नही……"उसका चेहरा फिर तमतमा उठता, उसके कदम तेज-तेज उठने लगते।

कई बार सुमन गन्दगी के ढेरो में भी उगते है, कई बार मोती धूल मे भी मिल जाते है—उसके भीतर कोई ये काँटे चुभोने लगता।

जमीदार के कदम अधिक तेज हो जाते, उसका चेहरा अधिक दहकने लगता। फिर वह सोचता कि अगली फस्ल की कटाई के दिनो मे रेशमा के हाथ पीले कर देगा, दूर देश के किसी जमीदार के साथ उसे ब्याह देगा, जहाँ वह सदैव प्रसन्न रहेगी, जहाँ से उसकी प्रसन्नता का समाचार आयगा। किसी का लडका रेशमा को ब्याह कर ले जायगा, किसी का लड़का उसका अपना बन जायगा।

"मेरा अपना लडका" जमीदार की आँखो के सामने एक सबेर का चित्र खिच गया और उसे यो जान पडा, जैसे वह ठोकर खाकर किसी खाई मे जा गिरा हो। और जब उसने सिर उठाया तो उसके चारो ओर कीचड़-ही-कीचड बिखरा हुआ था।

जमीदार पसीने मे नहा रहा था, उसका भीगा हुआ शरीर चिप-चिप करने लगा, अपने-आप से उसे दुर्गन्ध आ रही थी जैसे उस दुर्गन्ध को जला-जलाकर चारो ओर बिखेर दिया गया हो—कूड़े की दुर्गन्ध !

घड़ी की टिक्-टिक् धीमी पड गई, अत्यन्त धीमी ! उसने झाँक-झाँककर रुक-रुककर, और समीप होकर देखा—वह जितना समीप होता जाता, घड़ी की चाल जैसे अधिक धीमी पड़ती जाती। टिक्-टिक्, टिक्-टिक्, टिक्-टिक् !

सहसा जमीदार को अनुभव हुआ जैसे कोई बाहर का व्यक्ति चुपके-से उसके कमरे मे एक ओर से घुस आया है और सामने पलग पर जाकर लेट गया है—एक पराया नवयुवक, गोरा गोल-मटोल, भरे-भरे शरीर वाला, बिल्ली की-सी आँखो वाला, भूरे केशो वाला, बाहर से यँ आया है, जसे यह उसका अपना घर है, जैसे वह प्रतिदिन इस कमरे में उठता-बैठता हो। और जमीदार का साँस जैसे घुटने लगा, कमरे की हवा उसे

अत्यन्त भारी-भारी अनुभव हुई। जमीदार को यूँ अनुभव हुआ, जैसे उसके बिखरे हुए बालो को कोई देख रहा है, उसके काँपते हुए पट्ठो को कोई देख रहा है। उसके पसीने मे भीगे हुए वस्त्रो को कोई देख रहा है, जैसे उसे देख-देखकर कोई मुस्करा रहा है।

टिक्-टिक्···एक बहुत जोरदार टिक् की आवाज के साथ घड़ी चलती-चलती रुक गई। धीमे-धीमे चढाई पर चढती हुई जैसे कोई लारी आधे मार्ग मे जाकर खड़ी हो जाय और सब सहम जाँय। जमीदार चौककर पीछे की ओर मुडा और बिजली के-से झटके के साथ अपने पलग पर जा गिरा।

टिक्-टिक्-टिक्—जैसे घडी ने फिर दौडना आरम्भ कर दिया। घडी की लय पर जमीदार का साँस तेजी से आने-जाने लगा, तेज, अधिक तेज, और तेज, तेज़-तेज, फिर उसके हृदय की धड़कने ही केवल सुनाई देने लगी। जमीदार की सुध इस कोलाहल मे विलीन हो गई।

जमीदार बेसुध पड़ा रहा, पड़ा रहा!

जब उसकी आँख खुली तो उसके कमरे मे उसके कर्मचारी थे, वैद्य थे, हकीम थे, जादू-टोने वाले थे। उसके शरीर पर मालिश की जा रही थी, सबके चेहरो पर व्यग्रता थी। जमीदार ने लाख प्रयत्न किया कि वह हाय-हाय करे, आह भरे, उसके भीतर से कोई आवाज निकले, किन्तु उसकी जबान जैसे सुन्न हो गई थी, उससे अपनी जीभ हिलाई न जाती, उसके होठो पर जैसे ताले जड दिए गए हो, उन होठो को उससे हिलाया न जाता, उसने भुजा उठाने का प्रयास किया, उसने अपना हाथ सरकाना चाहा किन्तु वह तो एक लाश के समान लेटा हुआ था, उसका अग-प्रत्यग जैस जकड़ा गया हो।

इस बिवशता, इस निर्बलता और इस बन्धन को अनुभव करते हुए जमीदार की आँखो के सामने फिर तारे टूटने आरम्भ हो गए, टूटते हुए तारे बिखरते गए—आखिर वह फिर बेसुध हो गया।

"मेरा अपना लडका! मेरा अपना लड़का!! मेरा अपना लड्का!!!"

जब जमीदार की आँख खुलती तो उसके होठ जैसे यह जाप कर रहे होते और रेशमाँ पलंग पर बैठी हुई उसके हाथ दबा रही होती।

रेशमाँ को देखकर जमीदार की आँखो से आँसुओ की झड़ा लग गई। जमीदार ने पहले कभी इस प्रकार नही किया था—"बेटा-बेटा !!" कहते हुए उसने अपनी बेटी को छाती से लगा लिया। बेटी को उसने छाती से लगाए रखा और बारम्बार उसकी फरियाद चीत्कार बन-बनकर ऊँची उठती रही।

फिर जमीदार पर एक शून्यता-सी छा गई, उसके आँखो तले अँधेरा व्याप्त हो गया, और जब यह अँधेरा छँटा तो उसकी आँखों के सामने पूरी तरह प्रकाश न हुआ, चारो ओर एक मद्धम-सी धुंध फैली रही।

इस धुँध मे उसने देखा—सामने दालान मे रेशमाँ उसकी लडकी और एक सुन्दर लडका खेल रहे है, यह लडका रेशमाँ को बहन कहकर बुलाता है, आयु मे भी उससे कुछ छोटा-सा दिखाई देता है। लड़के का गोरा और भरा-भरा शरीर बिल्ली की-सी आँखे और भूरे-भूरे बाल है। बिल्ली की-सी आँखें, भूरे बाल, बिलकुल रेशमाँ ऐसे—बिल्ली की-सी आँखे और भूरे बाल, जिस प्रकार जमीदार के अपने थे। ये दोनो बालक कभी एक-दूसरे की बाहो मे बाहे डालकर खेलते थे, कभी एक-दूसरे की गालो से गाल मिलाकर खेलते थे, कभी एक-दूसरे के कन्धे पर चढ जाते थे, और यूँ हँसते-खेलते-नाचते-कूदते वे आकाश की ओर चढ गए।

जमीदार की आँखे एक बार फिर बन्द हो गईं।

रेशमाँ उसके माथे के पसीने को अब भी पोछ रही थी, उसके हाथों को अत्यन्त कोमलता से दबा रही थी। पलग पर अपने पास बैठी हुई अपनी लडकी को जमीदार देखता रहा, देखता रहा। मैं अब रेशमाँ के हाथ पीले कर दूँगा—वह सोचता और सामने द्वार का जैसे पर्दा हटा—गोरा, भरे-भरे शरीर वाला, बिल्ली की-सी आँखो वाला एक नवयुवक भीतर आ गया। रेशमाँ उसके गले से लगी, नवयुवक पलग पर बाईं ओर आकर बठ गया। और फिर बाहर जमीदार को यूँ सुनाई

दिया जैसे बाहर ढोल बज रहे हो, शहनाइयाँ बज रही हो, अत्यन्त चहल-पहल हो। फिर उसने देखा कि एक थोड़ी आई है, उस पर कँगना बाँधे हुए एक नवयुवक गोरा, भरे-भरे शरीर वाला, बिल्ली की-सी आँखो वाला और भूरे बालो वाला सवार है। रेशमां उसकी घोडी को जौ खिलाती है, 'भाई-भाई' कहती हुई उसका सेहरा बाँधती है, और फिर शहनाइयो का शोर और अधिक ऊँचा हो जाता है, ढोल और जोर से बज उठते है।

"नही-नही"—जमीदार ने जैसे फिर चीखना आरम्भ कर दिया। कर्मचारी, वैद्य और हकीम फिर भीतर आ गए, किन्तु इससे पहले कि वे भीतर आते, रेशमाँ साथ के कमरे से होती हुई बाहर जा चुकी थी।

"ए जहाने !"

"ए जुम्मे !"

"ए शेरे !"

"ए रावेल !"

बार-बार जमीदार अपने सेवको को आवाज देता, किन्तु वे तो उसके कमरे मे पहले ही से उपस्थित थे।

सामने दीवार पर तलवारे लटक रही थी, बन्दूके लटक रही थी, खाले लटक रही थी, हिसक जानवरो की, जिनका जमीदार ने स्वयं अपने हाथो से शिकार किया था।

दुर्ग की भाँति जमीदार की हवेली अभी तक उतनी ही दृढ थी जितनी कि वह पहले कभी थी।

"आ गए, आ गए, आ गए !!!" करता हुआ जमीदार हडबड़ाकर उठ खडा होता और उसे यूँ अनुभव होता जैसे सारी दीवारे, सारे मोर्चे लकडी के छिलको के सामान मसले जा रहे हों।

कभी उसे यूँ अनुभव होता जैसे बाढ-सी आ गई हो और उसे बचाने के लिए कोई न आ रहा हो। कभी उसे यूँ जान पडता, जैसे चारो ओर आग फैलती हुई सारी-की-सारी हवेली को अपनी लपेट मे ले रही हो,

और कोई भी नही जो सहायता के लिए आ रहा हो। कभी उसे यूँ लगता कि नेजे उछाले जा रहे हो, छुरियाँ चमक रही हो, भाले उठ रहे हो!

छोटी-छोटी वस्तुएँ बडी होती जा रही थीं, और जमीदार को यूँ लगता जैसे वह उनके नीचे दबता जा रहा हो। उसे आँधियाँ आती हुई दिखाई देती, झंझाएँ चलती हुई अनुभव होती, बिजलियाँ कौदती हुई जान पडती, बादल गरजते हुए लगते, और उसका अग-प्रत्यंग काँप उठता।

तेल की मालिश से, धूप और इत्र की सुगन्धि से जमीदार को कुछ शान्ति-सी अनुभव होती, तो सामने रेशमाँ की खिडकियो से उसे यूँ अनुभव होता जैसे फूल बरसाए जा रहे हो, और नीचे जैसे वह नवयुवक खड़ा हो, गोरा-गोरा भरे-भरे शरीर वाला, बिल्ली की-सी आँखो वाला, भूरे वालो वाला।

"भाई धीरे-धीरे आ,
तेरे घोडे को घास डालूँगी!"

रेशमाँ के गाने की उसे जैसे आवाज सुनाई दे रही थी और गोरा-गोरा भरे-भरे शरीर वाला, बिल्ली की-सी आँखो वाला, भूरे बालो वाला नवयुवक एक खिड़की मे से उडता हुआ और दूसरी खिड़की मे से निकलता हुआ भीतर चला जाता। रेशमाँ बार-बार उसके गले में हार पहनाए जाती।

फिर जमीदार सोचता कि रेशमाँ का आँचल एक अत्यत सुन्दर युवक ने सम्भाला हुआ है, सारा पोठोहार जैसे उस विवाह पर टूट पडा है, लोग गा-गाकर, नाच-नाचकर थक चुके है, और फिर रेशमाँ चली जाती है, दूर क्षितिज तक जाकर एक चिह्न की भाँति विलीन हो जाती है।

जमीदार विस्मित होता कि उसे नव्वाब कहीं भी दिखाई नही दे रहा था। नव्वाब के कमरे के स्थान पर उस हवेली में एक रेतीला-

मैदान बना हुआ दिखाई देता था, जिसमे खस का एक अकेला पौधा था, जो दूर मे इस प्रकार दिखाई देता जैसे नव्वाब की शहर से लाई हुई गाने और नाचने वाली नई पत्नी, पतली-दुबली कोमल-कोमल एक लड़की।

और जमीदार हैरान होता कि उसका कोई कर्मचारी भी दिखाई नही दे रहा था, न उसके नौकर न दासियाँ दिखाई दे रहे थे, तिस पर भी उसकी हवेली की प्रत्येक वस्तु उसे स्पष्ट दिखाई देती। चारो ओर उसे बहार आई अनुभव होती।

और गोरा-गोरा, भरे-भरे शरीर वाला, बिल्ली की-सी आँखो वाला, भूरे बालो वाला नवयुवक एक कमरे से निकलता हुआ दूसरे कमरे मे जा रहा होता। दूसरे कमरे मे से निकलकर तीसरे कमरे मे प्रविष्ट हो रहा होता।

और जमीदार को बार-बार पसीना आ जाता तथा बार-बार बेसुध हो जाता। जादू-टोने वाले मन्त्र पढ़ते रहे, हकीम दवाएँ देते रहे, वैद्य नुस्खे बनाते रहे, किन्तु जमीदार यूँ पलग पर पड़ा कि फिर न उठ सका

जादू टूट गया !



२६

सारे-का-सारा पोठोहार कुछ और का और हो गया। ढेरो की कोई बात न पूछता, ढेरो हैरान थी। ढेरो ने लाख जगराते काट, ढेरो न बार-बार अपने-आप मे देवी उतारी, ढेरो ढोलक पीटते-पीटते थक जाती, किन्तु ढेरो जो बात न चाहती, वह अवश्य होकर रहती।

ढेरो बहुत परेशान थी।

जिस दिन से मोती को ढेरो ने छत से लटका कर मार दिया था, उसे यूँ अनुभव होता जैसे उसका सारा जादू टूट गया हो। वह सोचती कि कही सारा चमत्कार उस कुत्ते मे तो नही था ?

बात यूँ हुई कि एक दिन जब वह कुएँ पर से आई, कुत्ता उसकी अनुपस्थिति मे कही खिसक गया। घर आकर वह उसकी प्रतीक्षा करती रही, करती रही—वह काफी समय के बाद लौटा। ढेरो ने सोचा—उसे कोई हड्डी कही से मिल गई होगी, उसने इस बात का कोई विचार न किया। अगले दिन फिर मोती उसी समय पर गायब था, ढेरा ने फिर भी कोई परवाह न की ; ठीक उसी समय तीसरे दिन जब वह फिर घर से बाहर निकल गया, तो ढेरो को दाल मे कुछ काला-काला अनुभव हुआ। ढेरो चुपचाप अपने काम मे मगन हो गई।

नियमानुसार लगभग दो घन्टे के पश्चात् मोती दुम हिलाता, नाक फुलाए, मुँह खोले दात निकाले हुए आ रहा था। ढेरो ने आज देखा कि मोती की आँखो में कीचड कुछ कम थी, चलते-चलते तेज-तेज डग भरता और उसकी टाँगें सीधी धरती पर पड रही थी, किन्तु ढेरो ने उस ओर कोई विशेष ध्यान नही दिया। चौथे दिन जब मोती उसी समय और उसी प्रकार दालान से निकलने लगा, तो बड़े कमरे मे चक्की पीसती हुई ढेरो ने उसे देख लिया, और कडककर आवाज दी—"मोती !"

मोती वही-का-वही जैसे जकडा गया हो। दुम सीधी लटकाकर अगले पाँवो को आगे फैलाकर और पिछली टाँगो को धड के नीचे समेटकर च्याऊँ करता हुआ मुडा, जैसे अत्यन्त लज्जित हो, जैसे कोई चोरी करता पकडा जाय।

और अपनी थूथनी को अगली दोनो टागो पर फेंककर वह ढेरो के पास फैलकर लेट गया। ढेरो ने उसके माथे पर लाड़ से हाथ फेरा और फिर वह अपने काम मे मगन हो गई। चक्की की गति के साथ चलने वाला गीत वह होश सभालने के समय से गाती आ रही थी :

कही तो पेड लगाती हूँ,
पत्तो वाले पेड !
कही शहतूत लगाती हूँ,
बाग मे बूटे लगाती हूँ,
पत्तो वाले बूटे !
बाग मे शहतूत लगाती हूँ,
और अब वह पेड हाथभर के हो गए है,
पत्तो वाले पेड !
और अब शहतूत भी हाथभर लम्बे हो गए है,
किन्तु तुम ऐसे मूर्ख हो कि समझ नही आई !

और यहाँ तक पहुँचकर वह सदैव रुक जाया करती थी, यहाँ तक पहुँचकर सदैव उसका कठ रुँध जाता था, और उसकी आँखे सजल हो

जाती। एक नासमझ की याद मे यह गीत ढेरो ने उम्रभर गाया, पहले तो हर घड़ी, दिन-रात यह गीत गाती रहती। और जब से मोती उसके दालान मे आया फिर उसे लगने लगा जैसे उसका हमदर्द मिल गया हो! हर समय मोती-मोती करती वह पुरानी बाते भूलती गई।

मोती उसके कमरे मे होता तो अभागिन ढेरो को इस प्रकार अनुभव होता जैसे वह अकेली नही। मोती की स्वामि-भक्ति देखकर एक तो वह पुरुषो का उपेक्षाभाव भूल जाती। मोती उसके समीप होता तो ढेरो के भीतर का स्त्रीत्व जागा-जागा सा रहता।

तो भी, कभी-कभी किसी गहराई मे छिपी हुई जैसे कोई भावना जागती है, ढेरो का जी बार-बार यह गीत गाने को चाहता और बार-बार उसकी आँखे सजल हो जाती।

ढेरो आज फिर यह गाती रही, गाती रही। आज फिर चक्की चलाते हुए उसकी आँखो के सामने उसका अपना जीवन चित्रवत घूम गया। उसने पहला विवाह किया। उसका पति उसकी बडी बहन को लेकर भाग गया। उसने दूसरा विवाह किया, अभी अधिक दिन नही बीते थे कि उसके पति ने किसी पडोसिन को संभाल लिया। और ढेरो ससार में अकेली रह गई। कितनी देर तक वह रोती रही और फिर मोती उसे मिल गया। एक ही दृष्टि मे जैसे उनमे मित्रता हो गई, बेरी तले बैठी, दूधिया श्वेत वस्त्र पहने हुए एक भिश्ती की स्त्री के साथ मोती कुश्ती लड़ रहा था। कभी उसकी टाँगो मे से निकलता, कभी उसकी भुजाओं से रगड़ करके निकलता, कभी उसके हाथो को चाटता, कभी उसके पाँव सूँघता। सामने कोठे की मुँडेर पर बैठी ढेरो यह कौतुक देखती-देखती मस्त हो गई। एक नशे मे उसकी आँखें मुँद गईं।

और अगले दिन मोती ढेरो के दालान में खेल रहा था।

देसी घी की चूरी और भिश्ती के घर की सूखी रोटी मे अन्तर होता है। भैंस के दूध मे और उस छाछ मे भी अन्तर होता है जो भिश्ती के घर मे कही से माँगकर लाई जाती है। गद्देदार पलँग में और

भिश्ती के घर के अस्तबल में अन्तर होता, जहाँ उसकी गदही हर समय दुम हिलाती रहती है।

मोती एक बार ढेरो के यहाँ आया तो फिर वहाँ से जा न सका।

ढेरो सोचती भी जाती और गाली भी देती जाती।

लगभग एक घटे के उपरान्त ढेरो ने पीछे मुडकर देखा—मोती वहाँ नही था। चक्की को छोडकर उसने चारो ओर देखा, ऊची-ऊँची आवाजे दी, किन्तु मोती कही भी नही था।

ढेरो बहुत झुँझलाई।

पूरा एक घटा और बीत गया, तो ढेरो ने देखा कि मोती दीवार फलाँगकर चुपके से चोरो की भाति दालान मे आ चुका था।

ढेरो विस्मित थी!

अगले दिन वह शाम को मोती की निगरानी मे बैठ गई। नियमानुसार ठीक उसी समय मोती विकल और व्यग्र होने लगा। कभी इधर जाय कभी उधर जाय, फिर वह एक गिलहरी के पीछे दौड़ा। गिलहरी दौडकर सामने के पेड पर चढ गई और मोती जड के पास खडा उसकी प्रतीक्षा करने लगा। ढेरो ने सोचा कि अब वह अपने झँझट मे उलझ गया है, कहाँ जायगा—उसकी आँखे तनिक हटीं तो मोती गायब था।

ढेरो के तन-बदन मे आग लग गई। वह घर का द्वार खुले-का-खुला छोडकर दौड पडी। गलियो और नुक्कडों मे झाँकती निदान गाँव के बाहर जा पहुँची। देखे तो मीरासियों के पड़ोस में एक पेड-तले खानाबदोशो की कुतिया के साथ खेल रहा है। कभी वे मिलकर भागते, कभी आँख-मिचौनी खेलते, कभी लाड-चाव से एक-दूसरे को काट खाते, और इस प्रकार नाचते हुए, कूदते हुए, खेल करते हुए अँधेरा फैल गया।

ढेरो क्रोध में उबलती हुई घर पहुँची, उसके पहुँचने के पाँच मिन्ट पश्चात् मोती भी ठीक समय पर लौट आया।

"कहाँ गए थे?" ढेरो से आज रहा न गया, और उसने मोती को ठोकर मारते हुए पूछा।

कहाँ की देवी और कहाँ का जादू !"

और घृणा के मारे वह बार-बार नाक सिकोड़ती।

फिर बाढ आई, ढेरो ने लाख प्रयत्न किये कि वह उसे रोक ले, किन्तु अब तो उसे अपने-आप पर विश्वास नही रहा था।

ढेरो का मकान गिर पडा, ढेरो के शंख बह गए, ढेरो की ढोलक खो गई, दीवारो पर चित्रित आकृतियाँ भी न बच पाईं, अन्य लोगो की भांति ढेरो भी छत पर टँगी रही, पेड़ो से चिमटी रही।

बाढ़ के बाद ढेरो की समझ मे न आता कि वह कहाँ जाय, क्या करे, लोग अपने-अपने धन्धो मे उलझ गए, कितने दिन तक ढेरो की किसी ने कोई बात न पूछी। प्रतिदिन उसे यू अनुभव होता जैसे लोग बदल रहे हो, और के और हो रहे हो !

ढेरो ने सोचा कि वह फिर मकान बनवाये, फिर बर्तन ढूंढ़े, फिर वस्त्र सिलवाये, फिर चारपाई ढूंढे, फिर बिस्तर मोल ले, फिर चूल्हा लीपे और पोते।

कौन इतना कुछ करे ?

एक रात उसने अपने घर के टूटे हुए शहतीरो को एकत्रित किया, मिट्टी का तेल उन पर छिड़क कर आग लगा दी, और चुपके से उस चिता पर स्वयं बैठ गई।

और हँसती-खेलती ढेरो जल गई !

हम भूखे हैं !

२७

तत् तत् ता दिग् थुम् थुम्, जीजी, किल, थू, थुअग्, तक, धुम्, धुम् तीदा, दिग् दिग् थई, तक थुग्, थुम् तीदा, दिग् दिग् थई, तक् थुम, थुम् तीदा, दिग् दिग् थई .....!

कदलाँ अकेली नाच रही थी। सल्मे-सितारे से झिलमिल करते हुए उसके जेवर, सुगन्धि से बसे हुए, गज-गज भर के लम्बे गुँथे हुए केश, मोतिए की सुकोमल कलियों से सजे हुए, रंगे हुए उसके अधर, गुलाबी किये हुए कपोल, मोतियो की तरह आभा बरसाते दाँत, मोटी-मोटी काली आँखे, जैसे कोई अप्सरा आकाश से उतर कर आई हो !

नाचते-नाचते कंदलाँ ने गाना आरम्भ कर दिया—'सुन्दर देशो मे सबसे सुन्दर देश पंजाब है !"

गाते-गाते उसने पजाब के पहाड़ो की चर्चा की, और अपने अंग-अग को उसने चट्टान का-सा, पथरीला बनाकर दिखाया। फिर उसने पजाब के दरियाओं की चर्चा की, जैसे शीशे की भाँति पिघल कर बह निकले हो। फिर उसने पजाब के लहलहाते खेतो की चर्चा की, कलियो की चर्चा की, फूलो की चर्चा की, और उसका अंग-प्रत्यंग खिल उठा।

पजाब के वीर-सैनिकों की चर्चा करते हुए कंदला शेरनी की भाँति

दहाड उठी, पंजाब के जाटो की चर्चा करते हुए कंदलाँ उन्नत-मस्तक हो गई, पजाब के राँझों, पंजाब के हीरो, पजाब के मिर्जाग्रो की चर्चा करते हुए वह झूम-झूम गई।

कंदलाँ सोचती कि वह अभी तक अकेली थी, नाचती गई, नाचती गई।

अभी उसका नृत्य समाप्त नही हुआ था कि वाह-वाह करता नशे मे डूबा नव्वाब साथ के कमरे में से निकल आया। अपनी तरग मे नाचती और गाती हुई कँदलाँ को पता न लग सका कि कब से नव्वाब बाहर गाना सुन रहा था, छिपकर उसका नृत्य देखता रहा था।

नव्वाब के बार-बार आग्रह करने पर कदलाँ ने एक और नृत्य आरम्भ कर दिया, उसका नाम था "हम भूखे है!" एक भूखे-प्राणियों की गाथा, जिन्हें कभी पेट भर खाने को न मिला हो, ऐसे लोग जो पेट की ज्वाला बुझाने के संघर्ष मे अपनी आयु गला देते है, फिर भी जिन्हें पेट भरने को नही मिलता, जो कई पीढ़ियो से अपने बच्चों को, अपने पोतों को पैतृकरूप से भूख देते आए हैं, निर्धनता और दरिद्रता देते आए हैं। यह उन लोगो की कहानी थी कि जो जितना कुछ कमाते, पर चील झपट्टा मारती और वह सब कुछ ले जाती। यह नृत्य धरती के एक टुकड़े के विरुद्ध पुकार थी, लूट-खसूट के विरुद्ध पुकार थी, अन्धो और बदरबाँट के विरुद्ध पुकार थी, और कदलाँ एक-एक भंगिमा के साथ दस-दस बातें बता जाती।

और फिर कदलाँ ने पूर्ण-चित्राकन किया कि उस प्रदेश मे बाढ आ जाती है, और यह न रुकने वाला पानी सारे प्रदेश में खलबली मचा देता हैं, च्यूँटियों की भांति लोग पानी की सीमा से बाहर होते जाते है, ऊपर और ऊपर, और इस प्रकार सारे-का-सारा प्रदेश या पेड़ो पर चढ जाता है या किसी कोठें का आसरा लेता है।

चारो ओर भूख का कोलाहल मचा है, और कंदलाँ की आँखो से छम-छम करते हुए आँसू गिरने लगे। अभीतक शराब पीता हुआ नव्वाब

और कुछ न समझ सका, किन्तु कंदलाँ के आँसू उससे छिपे न रहे।

उसने उठ कर उसे नाचते-नाचते पकड लिया और यह रट लगाने लगा कि वह रो क्यो रही थी ! शराब का हठ अत्यन्त दृढ हुआ करता हैं, कंदलाँ ने टालना चाहा, उसे कुछ अन्य बातो मे लगाना चाहा, किन्तु नव्वाब बिलकुल न माना। शराब के नशे मे उसे यूँ ज्ञात होता कि उसे अपनी आँखो से कुछ दिखाई नही दे रहा था। हाथ कही डालता, किंतु हाथ पड़ कही जाता, उसके हाथ और जिह्वा जैसे फूले हुए थे, उसके मुँह से कोई स्पष्ट बात न निकल सकती।

इस प्रकार उसे पीछे पडा हुआ देखकर कदलाँ तग आ गई, किन्तु क्रोधित होने और झुँझलाने की उसे आदत नही थी। सामने आल्मारी के दर्पण में स्वय को यूँ फँसा हुआ देखकर वह मुस्करा दी।

कुछ समय तक उसने यूँ ही टालमटोल की, किन्तु जब नव्वाब का हठ सीमा से बाहर हो गया तो सामने दर्पण मे फटी-फटी आँखो से देखती हुई कंदलाँ ने नव्वाब की नर्तकी से आँख मार कर पूछा कि वह क्या करे।

और दर्पण वाली कंदलाँ ने कहा—बुरे को बुराई से अच्छा बना दो अथवा मरोड कर रख दो, फिर निमिषभर मे कदलाँ ने एक कहानी घडी।

"मुझे आज माँ-बाप याद आ गए है।" कंदलाँ ने उस स्त्री के समान कहा जो पति के छिपे घाव को पहचान ले। फिर उसकी कहानी स्वयमेव आगे चल पडी।

जब नव्वाब उसे शहर में मिला, तो कंदलाँ उस समय अपने घर वालो से रूठ कर आई थी। उसके माँ-बाप किसी और स्वभाव के थे और स्वयं किसी दूसरी प्रकृति की थी। उसका साँस उसके अपने घर में घुटा-घुटा-सा रहता और हर समय उसे किसी-न-किसी बात पर टोका जाता। फिर कंदलाँ की किसी के साथ जान-पहचान हो गई और यह जान-पहचान गहरी मित्रता में परिणित हो गई, ऐसी मित्रता, जिसके लिए

कोई बलिदान किया जा सकता है, जिसकी मादकता हर समय उसकी आँखो मे छलकती रहती। जब उसके माँ-बाप के कान में यह भनक पड़ी तो उन्होंने अपनी पसन्द का वर उसके लिए ढूंढ़ा और उसकी मगनी कर दी। उसने अपने माँ-बाप को लाख समझाया, रोई—रूठी, किन्तु किसी ने एक न सुनी। आखिर जब विवाह की धमकियाँ दी जाने लगी तो कदलाँ घर से निकल खड़ी हुई।

और फिर कदलाँ ने बताया कि नव्वाब उसे उस समय मिल गया।

नव्वाब नशे मे इतना चूर था कि उसने इतना भी न सोचा कि उससे पूछे कि उसके मित्र का क्या हुआ।

"किन्तु तू रो क्यों उठी ?" नव्वाब को अभी तक शाँति न हुई थी।

कदलाँ ने उसे बताया कि वह स्वयं तो यहाँ भरपूर सुख का जीवन व्यतीत कर रही थी, किन्तु उसे भय था कि उसके माँ-बाप की उसके पीछे क्या दशा होगी।

नव्वाब उठा और उसने सामने की आल्मारियो में से चाबियो का एक गुच्छा निकाल कर उसके हवाले कर दिया कि वह जितना चाहे अनाज अपने सम्बन्धियों को भेज दे। फिर उसने एक थैली में से नोटो की गट्ठी निकालकर उसके हाथ में दे दी। जिस हथेली पर कदलाँ ने गट्ठी रखी थी उस पर पसीना आ गया।

और कदलाँ प्रसन्न हो गई।

और इस प्रकार अकेले एकात मे बैठे पति-पत्नी छोटी-छोटी बातो में उलझ गए—बाढ के सताए लोग किस प्रकार उजड़ चुके थे और भागभरी का लडका फर्मान लोगों को किस प्रकार पुनर्जीवित कर रहा था। नव्वाब हैरान था—सारे-का-सारा पोठोहार जैसे पीर के समान उसका सम्मान कर रहा था, कोई उसकी सौगंद नही उठाता था। यह बात भी उसकी समझ मे नही आती थी कि इतना साहस उसमें कहाँ से आ गया था, दिन-रात वह अपने काम में संलग्न रहता। न जाने इतन पैसे कहाँ से आए थे, आटा बाँटता, दालें बाँटता, लोग कहते थे—बाढ़

के दिनो मे बच्चो के लिए दूध भी वह कही से मँगवाता रहा।

सब लोग फर्मान को राजकुमार-राजकुमार कहकर पुकारते थे, शायद इसलिए कि वह तनिक गोरा अधिक था, किन्तु नव्वाब कहता कि वह इस काँटे को बहुत शीघ्र अपने मार्ग से हटा देगा।

यह सुनते-सुनते कदलाँ जैसे सिकुडती जाती, चौंक-चौक पडती। बार-बार उसे पसीना आ जाता।

"मार्ग से काँटा हटा देने से आपका क्या मतलब है ?" रुकते-रुकते, झिझकते-झिझकते आखिर उसने पूछ ही लिया।

नव्वाब ने अपनी पत्नी को बताया कि जब से जमीदार चारपाई पर पडा था, उसके चारो-के-चारो पिट्ठू अब नव्वाब के पीछे फिरते रहते, और यदि उनमे से किसी एक को भी सकेत कर दिया जाय तो राजकुमार का ढूँडने से भी निशान न मिले।

कितनी देर तक कदलाँ मौन रही, फिर विषय बदलने के लिए उसने नव्वाब को याद कराया कि जमीदार को चारपाई पर पड़े एक महीना हो चला था और नव्वाब अभी तक उसकी दशा पूछने के लिए नही गया था। नव्वाब को कुछ अपनी ही शिकायते थी; जब भी कोई उसे जमीदार के सम्बन्ध मे कुछ कहता तो उसे क्रोध आ जाता।

कभी-कभी कदलाँ नव्वाब को समझाने का प्रयत्न करती, नव्वाब आगे से हँस छोडता। उसे यूँ अनुभव होता जैसे सारे-का-सारा पोठोहार उसकी मुठ्ठी में हो और उसकी भुजाओ मे इतनी शक्ति हो कि जब भी वह चाहे उसे मरोड़ कर रख दे।

खेतो में हल चलाते, हवेलियो को गिराते-बनाते, यहाँ तक कि प्रतिदिन के मेल-मिलाप में लोग एक-दूसरे को साथी कह कर पुकारते, और नव्वाब कहता कि यदि उसका बस चले तो एक-एक की जिह्वा काट डाले।

किन्तु कदलाँ भी तो कई बार उसे 'साथी' कहकर बुलाती थी, वे तो पति-पत्नी हुए। नव्वाब सोचता कि वह कंदलाँ का साथी था,

कदलाँ—जो पुस्तके पढती थी, कदलाँ—जो सारा-सारा दिन बैठी न जाने क्या-कुछ लिखती रहती, मेमो की भाषा में, कदलाँ, जो आकाश से उतरी हुई अप्सराओ के समान नाचती रहती थी, कदलाँ, जो गाती थी जैसे बुलबुल बोल रही हो।

उस दिन फिर रात गए तक पति-पत्नी बैठे बाते करते रहे। अगले दिन देर तक सोते रहे—दोनो। नव्वाब अभी सोया पडा था कि कदलाँ को दूर हवेली मे कोलाहल सुनाई दिया—अपने कमरे की सब से ऊपर की खिड़की खोलकर कदलाँ ने देखा कि कंधो पर बेलचे और फावडे रखे असख्य मजदूर जा रहे थे, तीर की भांति सीधी पक्तियो मे। उन सबके आगे राजकुमार था, और सब-के-सब यह वार-बार कहते कि हम भूखे है, बार-बार-आवाज आती "राजकुमार ज़िदाबाद" बार-बार यह नारा उठता "जनता ज़िदाबाद!" पुरुषो के पीछे स्त्रियाँ थी, स्त्रियो के पीछे बालक थे—, कदलाँ देखती रही, देखती रही, जैसे सारे-का-सारा प्रदेश टूट पड़ा हो।

और कदलाँ को ऐसे अनुभव हुआ जैसे नया रक्त उसकी धमनियो मे दौड रहा हो, जैसे सामने पूरब म एक नया सूर्य उदय हो गया हो, जैसे सूखे हुए बागो में बहार आ गई हो, फूल खिल उठे हो, कलियाँ झूम रही हो। पक्तियो की पक्तियाँ, लोग अर्धनग्न, अधढँके. दीर्घकाय पोठोहारी—इस्पात के समान कठोर-सुदृढ़. गदुमी रग की पोठोहारने, बालक, जिन्होने कठिनता से अभी होश सँभाला था, तीर की भाँति सीधे जा रहे थे, आकाश की ओर देख रहे थे, निर्भीकता से चरण उठा रहे थे, जोर-जोर से पाँव धरती पर पटक रहे थे।

कदम मिलाकर पोठोहारी जा रहे थे, शान्तिपूर्वक निर्भीक होकर, जैसे मृतकों को जीवित कर दिया गया हो, जैसे प्रत्येक नयन में स्वप्न साकार हो उठे हो, जैसे प्रत्येक मानस मे उमँगे उछल रही हो, जैसे प्रत्येक गति में स्फूर्ति भर गई हो।

कदम मिलाकर पोठोहारी जा रहे थे, प्रत्येक कदम उन्हें आगे-ही-आगे लिये जा रहा था, प्रत्येक चरण उन्हें उन्नति की ओर लिये जा

रहा था, उनका मार्ग कठिन था, उनकी मंजिल दूर थी, कदम-कदम पर कांटे बिखरे हुए थे, कदम-कदम पर खाइयां खुदी हुई थी, पोठोहारी फिर भी जा रहे थे, पुरुष, स्त्रियाँ, बालक, राजकुमार के नेतृत्व में !

'राजकुमार'—प्रत्येक पोठोहारी के हृदय पर राज्य कर रहा था, राजकुमार, जो उनमे से एक था, राजकुमार—जो रूखी-सूखी खाता। यदि उसके साथी नंगे पाँव चलते तो वह नगे पाँव चलता, यदि उसके साथियो के पास वस्त्र पूरे न होते तो वह भो उनकी निर्धनता में सम्मिलित होता।

कंदलाँ खिड़की में खडी होकर देखती रही, देखती रही। पोठोहारी दूर निकल गए, बहुत दूर जैसे मुर्गाबियो की डारें आकाश पर फड़फड़ाती हुई निकल जाँय !

"वर्षा अब होकर रहेगी" कंदलाँ सोचती—मुर्गाबियाँ जब आकाश पर उडा करती है तो वर्षा अवश्य हुआ करती है।

भोर !

२८

ठल्लियाँ से लगभग डढ कोस की दूरी पर एक अत्यन्त घना वन है, इस वन के किनारे पर दो प्राचीन चट्टानें है, जैसे एक-दूसरी के साथ सटकर खडी हो।

इन चट्टानो के बीच मे एक सुरंग है जिसके बारे में जन-साधारण का अनुमान है कि उसमे भूत रहते है, इसीलिए शायद प्रत्येक पोठोहारी इनसे बचकर गुजर जाता है। इस ओर कभी किसी ने चरण नही रखा था।

फर्मान की पार्टी का यहाँ प्रधान-कार्यालय था, यहाँ लोग छिपते-छिपाते आ जाते, यही सब परामर्श किये जाते, यही सब कार्यक्रम बनाए जाते, यही प्रतिज्ञाएँ की जाती, यही उकसाया-पढ़ाया और उभारा जाता।

सबेरे से सुरंग के मुँह पर बैठा हुआ फर्मान बार-बार मुस्करा पड़ता, अनाज से लदी हुई खच्चरो को देख-देखकर! इन खच्चरो की पक्तियाँ समाप्त होने मे न आती और सुरग अनाज की बोरियों से भरपूर हुए जा रही थी—और फिर एक साथी हँसता हुआ फर्मान के समीप आया तथा उसने नोटों से भरा हुआ लिफाफा उसे पकड़ा दिया। जब खच्चर आने बन्द हो गए तो सारे साथी इकट्ठा हो गए और बैठ गए। उनका ऐनक वाला शहरी मेहमान भी पहुँच चुका था।

फर्मान को ऐसे ज्ञात होता जैसे सब काम इच्छानुसार होते जा रहे थे, जैसे वर्षो का सघर्ष रग ला रहा था, जैसे मजिल अधिक दूर न हो, जैसे उसके साथियो की आकृतियो से मुर्दनी उडी जा रही हो, स्वय अपने गौरव तथा सम्मान के लिए फर्मान को यूँ अनुभव होता कि लोग अब प्राण तक त्याग सकते थे। अपने पडोसी को बेइज्जत होता देखकर अब कोई भी अपनी दृष्टि नही झुका सकता था, एक बिरादरी-सी, एक भाई-चारा-सा सबमे उत्पन्न हो चुका था।

कई लोग राजकुमार की रग-रग को पहचानते थे कि वह क्या किया करता था, कैसे करता था, और वे सब उसके प्रत्येक काम मे शामिल होते थे, उसकी प्रत्येक कठिनाई पर जान लडा देते, और ये सब लोग राजकुमार के नजदीकी साथी थे। कुछ लोग एंसे थे - जिन्हे पता था कि वह उनका हमदर्द था, जिस ओर वह उन्हे ले जा रहा था, वे उस दिशा को पहचानते थे, और सारे-का-सारा पोठोहार उसके लिए अपना बलिदान कर सकता था। उसके मुँह से निकली हुई हर बात के लिए प्रत्येक पोठोहारी अपने प्राण न्यौछावर कर सकता था।

ऐनक वाले शहरी ने बताया कि जिला बोर्ड के चुनाव सिर पर आ रहे थे, और पोठोहार-प्रदेश से दो सदस्य चुने जाने थे।

आज से पहले तो चुनाव के समय जमींदार अपना और नव्वाब का नाम भेज दिया करता था और चुनावो का किसी को पता लगे बिना वे सदस्य चुन लिये जाते थे। जब नव्वाब छोटा-सा था, तो जमीदार अपने किसी कर्मचारी को अपना साथी बना लिया करता था।

किन्तु अब तो समय कुछ और ही रग बदल चुका था।

आखिर यह निर्णय हुआ कि एक फर्मान का और दूसरा फर्मान जिसे चाहे, दो नाम चुनावों के लिए भेज दिए जाँय, और यदि जमींदार के प्रतिनिधियो के साथ टक्कर लेनी पड़े तो डटकर मुकाबिला किया जाय। पहले तो राजकुमार का यह निर्णय सुनकर लोग मौन हो गए, घबरा-से गए, किन्तु जब उसने प्रदेश का भ्रमण करके एक-एक गाव में

जाकर लोगो को समझाया तो सब-के-सब पोठोहारी जैसे उसके पीछे हो लिये ।

नव्वाब यह समाचार सुनकर अत्यन्त भन्नाया । जमीदार के कानो मे जब यह बात पडी तो उसने साहस छोड़ दिया और दिन-प्रतिदिन उसकी दशा और अधिक बिगडने लगी । नव्वाब के घर शराब अधिक उँडेली जाने लगी और नित्य नयें कार्यक्रम बनाये जाने लगें कि किस प्रकार फर्मान को वश मे किया जा सके ।

और उधर सारे-का-सारा प्रदेश 'राजकुमार जिंदाबाद' के नारे लगाता, जमीदार के पिट्ठुओ की पीठ पीछे लोग हँसते और आवाजें कसते ।

नियमानुसार नव्वाब ने एक अपना नाम और दूसरा जमीदार का नाम चुनावो के लिए भिजवा दिया । उसने अपने कर्मचारियो को शराब की बोतले दे दी, उनके गले मे रिवॉल्वर पहना दिये, उनकी पेटियाँ गोलियो से भर दी, और जहाँ भी वे जाते लोग 'जी सरकार' 'जी सरकार' कहते हुए न थकते । और हर शाम को जब नव्वाब के पास ये समाचार पहुंचते, तो वह हैरान होता कि जमीदार को किसका भय था, किसको साहस था कि नव्वाब के विरुद्ध कोई बात भी कर जाय ।

जहाँ-जहाँ जमीदार के कर्मचारी पहुँचे, लोग हार लेकर उनका स्वागत करते, प्रत्येक उन्हे अपनी सेवाएँ समर्पित करता । वोटो का वचन लेकर कही लोगो के घर बनाए जाते, कही जमीदार की ओर से आटा बाँटा जाता, बीज दिये जाते, कही हल और खुरपे मुफ़्त बाँटे जाते ।

दौरे के बाद जो रिपोर्ट पेश की गई वह यह थी कि सारे-का-सारा पोठोहार एक-स्वर होकर जमीदार के सकेत पर चलने को तैयार था, नव्वाब का पूर्णरूप से भ्रम-निवारण कर दिया गया और उसे विश्वास दिलाया गया कि फर्मान की गुटबन्दी मे फूट डाल दी गई है और लोग उसके काफी विरोधी बन चुके है ।

'राजकुमार' आज फिर गायब था, किन्तु इस बार वह भागभरी को बताकर गया था।

बाढ के सताए लोगो को चुनावो के कारण काफी सहायता मिल गई। नव्वाब ने कई कुएँ खुदवा दिये, कई मन्दिर बनवा दिये, कई नालियाँ, कई नहरे और कई पुल बनवा दिए। कई मस्जिदो की मरम्त करवा दी गई, कई गुरुद्वारे निर्मित करा दिये गए, बहुत-सो को खेती-बाड़ी के लिए बैल मिल गए, बहुत-सो को चढ़ने के लिए घोडियाँ मिल गई।

पोठोहार मे फिर कुछ गूँज होने लगी, विशेष रूप से चुनावो से पूर्व कुछ दिशाओ में खूब चपल-पहल आरम्भ हो गई। जलसो का जोर बढ गया, जलूस निकाले जाते, मुर्गे हलाल किये जाते और भोज उडाए जाते।

चुनावो मे गिनती के कुछ दिन रह गए थे। फर्मान के साथी गाँवो में बडी तत्परता से घूम आते और फिर लौटकर फर्मान को अपनी रिपोर्ट पहुँचा देते।

कोई चार दिन अभी शेष थे कि नव्वाब को किसी ने बताया कि प्रत्येक पोठोहारी अपना वोट फर्मान को देना चाहता था। और उसके कर्मचारी उसे उल्लू बना रहे थे और स्वय भी मूर्ख बन रहे थे। नव्वाब ने पानी की भाँति पूँजी बहानी आरम्भ कर दी, उसने निर्णय किया कि एक हजार रुपए पर भी यदि उसे एक वोट खरीदना पड़ा, तो वह खरीद लेगा, किन्तु एक जाट से हार नही खाएगा। और हुआ भी यही, अगले चार दिनो मे लोगो ने रुपयो की थैलियाँ भर-भरकर भीतर डाल ली।

चुनावों के दिन चारों ओर स्तब्धता छाई हुई थी। पोठोहारी डेढ-डेढ़ गज लम्बी लोहे से मढी हुई लाठियाँ उठाए आते और नव्वाब के लगर में पूरी-हलवा खाते तथा लकीर खीचकर पर्दे के पीछे लगी हुई संदूकची मे पर्चियाँ डालते जाते।

सारा दिन 'नव्वाब जिन्दाबाद' और 'जमीदार जिन्दाबाद' के नारे लगते रहे, ढोलकियाँ बजती रही, शहनाइयाँ चिल्लाती रहीं।

अगले दिन सुबह-सबेरे ही परिणाम सुनाया जाने वाला था। नव्वाब के कर्मचारियो ने साठ घोडियो पर सोने के तार वाली चादरे डालकर उन्हे जुलूस के लिए सजाया, प्रदेश के सभी मीरासी ढोलक और बाजे लिये हुए आ चुके थे। जिस-जिस गली में से नव्वाब ने गुजरना था, वहाँ-वहाँ झंडियाँ लगाई गईं, जगह-जगह फूलों के हार बनाए गए, प्रत्येक बडे चौक को कालीन बिछाकर सजाया गया, आतिशबाजी का प्रबन्ध किया गया, प्रत्येक मोड पर जमीदार और नव्वाब के चित्र लटकाए गए।

सायंकाल के पूरे पॉच बजे परिणाम सुनाया जाने वाला था। शहर से आए हुए अधिकारी वोटो को बन्द कमरे में गिन रहे थे और लोगो की भीड़ बाहर चुप साधे खडी थी। लोग कोठो पर भी बैठे हुए थे, हर चौक में खड़े थे, हर गली-गली के मोड पर भी डटे हुए थे।

पूरे पाँच बजे शहर से आए हुए मैजिस्ट्रेट ने भीतर से निकलकर बतांया कि फर्मान और उसके साथी को केवल दस वोट नही मिले थे, शेष सम्पूर्ण-प्रदेश ने उन्हे ही वोट दिये थे।

क्षणभर मे 'राजकुमार जिन्दाबाद' के गगनभेदी नारे लगने आरम्भ हुए, नव्वाब और उसके कर्मचारी ढूंढने पर भी कही दिखाई न दिये, लोग हँसने-गाने और नाचने लगे। पलक-झपकते गलियो के मोड़ो से जमीदार और नव्वाब के चित्र उतर गए और उनके स्थान पर फर्मान और उसके साथी के चित्र लटका दिए गए। जैसे हर्ष का सागर उमड पडा हो, सारे-का-सारा प्रदेश उत्साह मे उछल रहा था।

आखिर जुलूस उन्ही बाजारो में से, उन्ही गलियो में से, उन्ही मोहल्लों मे से गजरने लगा, जहाँ तैयारियाँ की गई थी, जहाँ मुंडेरों पर लोग बैठे हुए थे, अपने प्रिय नेता के स्वागत का उत्साह अपने दिलो में छिपाए हुए। अपने हाथो से चुनी हुई कलियाँ, अपने कोमल करो से पिरोए हुए हार लिये पोठोहारने अपने सर्वप्रिय नेता पर न्यौछावर करने के लिए तैयार थी। नोटो के हार राजकुमार के गले में डाले जा रहे थे

जो बहुत दिनो से सँभाल-सँभालकर धरोहररूप मे उन्होने उसके लिए रखे हुए थे। कौडी-कौडी जो नव्वाब ने लोगो को बाँटी थी, फर्मान की झोली में डाली गई, नाच-नाचकर, गा-गाकर, लोग जैसे पागल हो गए थे।

घोडो वाले फर्मान के लिए घोडे लिये उपस्थित थे। आतिशबाजी वालो को पता था कि किसके लिए उन्हे अनार छोडने है और पटाखे चलाने है, इसलिए रातभर तख्तपडी जगमग-जगमग करती रही।

फर्मान को फूलो के हार पहनाए जाते, नोटो के हार पहनाए जाते, मिसरी के कूजो के हार पहनाए जाते। उसका कठ हारो से भर जाता, तो पहले हारो की लडियाँ उतारकर रख दी जातीं, फिर देखते-देखते वह हारो के बोझ से गर्दन झुका रहा होता, लोग राजकुमार से आकर गले मिलते, उनमें से कई तो उसे कधो पर उठा लेते, लडकियाँ उसके सिर पर से पानी वारती, उसके घोडे को बार-बार जौ खिलाये जाते—और इस प्रकार चाँदनी रात बीत गई।

नया दौर !



२६

क़दलाँ ने उसे लाख समझाने का प्रयत्न किया, किन्तु नव्वाब अपने-आप में नहीं था। जब से चुनाव का परिणाम निकला था, हर समय शराब के नशे में गुट्ट औंधे-मुँह पडा रहता। आज सोलह दिन हो गए थे, पिये जाता, पिये जाता, और फर्मान को हजार-हजार गालियाँ देता तथा उसके मुँह से झाग निकलते रहते थे, उसकी आँखो से जैसे दानवता बरस रही होती, कदलाँ सोचती कि कही वह इसी प्रकार न चल बसे।

कोई बीसवें दिन जमीदार ने नव्वाब को बुलवा भेजा। सवेरे से उसके संदेश आ रहे थे, दिनभर कदलाँ नव्वाब को तैयार करती रही और कही शाम को जाकर वह इस योग्य हुआ कि अपने पिता के सामने के कमरे मे चलकर जा सके।

जमीदार बहुत बीमार रहा था, कितने दिन तक हवेली मे हर आदमी घबराया-घबराया रहा, रेशमाँ ने कितने दिन न कुछ खाया न कुछ पिया, और वह सो भी न सकी, किन्तु नव्वाब जमीदार को देखने के लिए कभी न आया।

जब से जमीदार चारपाई पर पड़ा था उसने उसी प्रकार सिर डाल दिया था, जैसे उसकी कमर सदा के लिए टूट चुकी हो। उसके अँग

काँपने लगे थ। जुम्मा, जहाना, शेरा, रावेल और उसके दूसरे गुंडे भी उसकी कम ही परवाह किया करते थे। आजकल उनकी नव्वाब से गहरी छनती थी, उसके आगे-पीछे फिरते, उसके साथ ही शिकार के लिए निकलते, उसके साथ बैठते-उठते, उसी के साथ शराब के दौर चलते।

जुम्मा तो उस दिन से जमीदार की सीढियाँ भी नही चढा था, जिस दिन एक दोपहर को उसने जमीदार के कमरे मे दाखिल होते हुए देखा था कि नूरी तेलिन दूसरे द्वार में से निकलकर जा रही थी। जुम्मे को बार-बार वह दिन याद आता, जब नूरी रेशम का सूट पहनकर उसके घर में आई थी और उसे कँधो से झिझोडकर डाँट-डपट पिलाकर, उल्टे पाँव चली गई थी। नूरी तेलिन, जिसकी सभी भावनाएँ जैसे मसल दी गई थी, किन्तु फिर भी जिसने पराजय नही मानी थी। नूरी तेलिन, जिसकी विवशता देखकर जुम्मे-ऐसा युवक गली-मोहल्ला छोडकर भाग खडा हुआ था।

सारी शाम उस दिन जुम्मा हक्का-बक्का रहा, बार-बार अपनी बूढी हो चकी पत्नी की आँखो-मे-आँखें डाल देता, जैसे उनमें लिखा हो कि उन्होने कितनी बार परपुरुषों को देखा था, ऐसे जैसे किसी स्त्री को दूसरे की ओर नही देखना चाहिए। आधी रात को जुम्मे से जैसे किसी ने झिझोड़कर कहा—"तू इतना नेक कब से हो गया ?" और उसने सारी बात भुला दी।

फिर भी जमीदार की सीढियो पर उससे चरण न रखा जाता और वह बार-बार विस्मित होता कि इतना आत्म-गौरव उसके हृदय की कौन-सी गहराई में छिपा हुआ था।

आज इतने दिनों के बाद नव्वाब ने जब पहली बार दालान से बाहर चरण रखा, तो कदलाँ द्वार तक उसे छोड़ने के लिए गई। घास के खुले मैदान को उलाँघता हुआ रेशमाँ के कमरे के पिछवाड़े से पानी की नाली फलाँगकर वह सामने जमीदार के कमरे की सीढियो तक पहुँच गया, अगली सीढी चढकर बेटा अपने पिता के सामने था। जमींदार ने

सकेत से नव्वाब को अपने पलँग पर बिठा लिया।

जमीदार के चेहरे की गोरी खाल झुर्रियो से अटी पडी था, उसके सिर का गजापन माथे तक आ पहुँचा था। यह पता नही चलता था कि उसका माथा कहाँ समाप्त होता है और उसका सिर कहाँ से आरम्भ होता है। जमीदार के हाथ काँप रहे थे, उसकी टाँगे काँप रही थी, बात करते हुए उसके होठ काँपने लगते, और वह एक-एक शब्द पाँच-पाँच बार दुहराता। जहाँ रुक जाता, वही रुका रहता।

जमीदार ने नव्वाब को समझाया कि वह एक और ही ससार और एक और ही युग का आदमी था। आज से अस्सी वर्ष पूर्व का युग कुछ और था, और इसी प्रकार वह अनुभव करता कि उसने कितनी ज्यादतियाँ की थी। ऐसी ज्यादतियाँ, जिन्हे करते उसके पूर्वज गौरव अनुभव किया करते थे; न जाने क्यो, उससे आप-ही-आप कुछ बातें हो जाया करती थी। शायद जिस वातावरण मे उसने आँखे खोली थी, उसकी यही विशेषता थी। उसे अपनी बर्बरता और अत्याचार न तो स्वय बुरा लगा था, न कभी उसके अमल न उसे कभी कुछ कहा था। उसका पालन ही कुछ इस प्रकार से किया गया था कि भलाई और बुराई के अन्तर को उसने कभी अनुभव ही नही किया था। और-ता-और, जिन बातो को आजकल लोग बहुत बुरा कहते है, उन्ही बातो को उस युग मे करते हुए वह प्रसन्न हुआ करता था। और उसका पिता, उसके पिता-का-पिता यह देख-देखकर हँसा करते थे।

नव्वाब का ससार कुछ और ही था, अब लोगों की आँखे खुल गई थी। चलती हुई रोशनी शहरो में से होती हुई अब गाँव-गाँव फैल चुकी थी, लोग अब और ही बाते किया करते थे। अब लूट-खसूट को कोई सहन नही करता था, शहरी लोग आजकल गाँवा मे आते थे और ग्रामीण शहरो मे जाते थे। लोग अखबार पढने लगे थे, स्कूल आजकल लड़के और लड़कियो से भरे होते थे।

पिछली बाढ ने सारे प्रदेश को बर्बाद कर दिया था, धरती की

हदबन्दियाँ अब दिखाई नही देती थी। जहाँ टीले थे, वहाँ आजकल कमर तक गहरे गड्ढे बन गए थे, जहाँ गड्ढे थे वहाँ सिर तक रेत आ गई थी, सड़कें नीचे-ऊपर हो चुकी थी, स्थान-स्थान पर पेड उखडे पडे थे। सम्पूर्ण प्रदेश मे ढोर-डगर ढूँढने पर भी नही मिलते थे। कही-कही उनके बच्चे दिखाई देते थे, किन्तु दशा बहुत बुरी थी। फूलो से लदे हुए बाग बह गए थे, फस्लो से लदे हुए खेत डूब चुके थे, तबाह हो चुके थे।

जो बात मै सोचता हूँ कि इस प्रकार हो, वह बात उससे उलट हो जाती है। सामने खिडकियो और रोशनदानो से आकर कबूतरो ने अपने घोसले बना लिये है, मेरे दरवाजो में से काली बिल्लियाँ गुजरती रहती है, रात को झरोखों में से मै देखता हूँ तो तारे टूट रहे होते है, और जैसे टूट-टूटकर पोठोहार की ओर आ रहे है, रात को मुझे बडे डरावने-डरावने सपने आते है।"

और इसमे सन्देह भी नही था—पोठोहार का प्रत्येक व्यक्ति जाग चुका था। प्रत्येक मजदूर और प्रत्येक किसान विकल एव व्यग्र था, लोगो को जैसे कोई लक्ष्य दृष्टिगोचर हो गया हो। प्रत्येक अपनी धुन में मस्त था, किसी को अब भूख का भय नही था। दहाडते हुए पोठोहारी जाट पीतल से मढी हुई सिर से ऊँची लाठियाँ उठाए गलियो और मोहल्लो मे घूमते रहते।

आज जिला-बोर्ड के चुनावों ने तो सबको हैरान कर दिया था। जमीदार सोचता कि कुछ दिनों के बाद वे जो चार व्यक्ति उसके साथ है, वे भी खिसक जाँयगे, और उसे उन नौकरो से घृणा होने लगती। वह जानता था कि ये लोग कैसे थे, और नव्वाब का शक्ति-प्रदर्शन वह देख चुका था।

"मुझे तो यूँ मालूम होता है कि जब मेरे साँस निकलेंगे, तो मुझे कंधा देने के लिए भी कोई न आयगा। मुझे यूँ लगता है जैसे मेरा साजो-सामान कोई बाहर फेक देगा और इस हवेली में निवास करने लगेगा। मुझे यूँ अनुभव होता है—ये नौकर-चाकर कही खिसक जाँयगे,

मुझे यूँ लगता है जैसे तुम भी विरोधी दलो मे शामिल हो जाओगे !"—और जमीदार को गोता आ गया।

नव्वाब—जो इतनी देर से चुप बैठा हँस रहा था, अब उससे रहा न गया—"यह सब फर्मान की कृपा है !" उसने दाँत पीसते हुए कहा—"यदि मैंने अपनी माँ का दूध पिया है तो उसे घुटनो के बल न कर दिया तो नव्वाब नाम नही। चार दिनो तक और खेल ले, उसका कही नामोनिशाँ तक दिखाई नही देगा, मुझे अपनी माँ के दूध की कसम !"

और नव्वाब क्रोध में उबलता रहा तथा जमीदार भी कुछ सुने बिना कमरे से बाहर चला गया।

"तू जो दूध की कसम खा रहा है, वह तूने ससुरे पिया ही नही !" जमीदार की दृष्टि नव्वाब का पीछा कर रही थी—"और अत्याचार न करना, उस लड़के के लिए सारा प्रदेश टूट पडेगा !"

नव्वाब आखिर आँखो से ओझल हो गया।

जमीदार ने सहसा अनुभव किया कि सामने दीवार पर लटकी घड़ी की टिक्-टिक् और ऊँची हो चुकी थी। फिर यह टिक्-टिक् कुछ इस प्रकार की हो गई, जैसे जोर-जोर से चोटें पड़ रही हो ! कभी यह शोर जमीदार के मस्तिष्क मे होने लगता, कभी यह शोर उसे ऐसे लगता, जैसे सामने की दीवार से उठ रहा हो।

जमीदार करवटें बदलने लगा—कुछ समय के उपरान्त वह मछली की भाँति तडपने लगा और फिर निश्चल-मूक होकर गिर पड़ा। यह सब फर्मान की शरारत थी, नही-नही, फर्मान आजकल जिला-बोर्ड के अधिवेशनो में जाकर बैठता था। फर्मान सोचता होगा—पोठोहार की सेवा तन-मन और धन से किये जाय, वह धन जो समिति मे सचित था।

"फर्मान तेरा अपना बच्चा है। मुझे मेरे ईश्वर की सौगन्द, फर्मान तेरा अपना बच्चा है !"

मुंदी-मुँदी आँखो से जमींदार ने फिर देखा—जैसे फर्मान लोगो को अपने पीछे लिये हवेली की ओर चला आ रहा है। लोग कदम-कदम पर

उसकी सेना मे भागकर शामिल हो रहे है। ज्यो-ज्यो हवेली के समीप पहुँचता जाता, त्यो-त्यो उसका उत्साह बढता जाता, और फिर एक हल्ला बोलकर पोठोहार के सभी निवासी जैसे हवेली पर टूट पडते है, लोग नाखूनो से, घूँसो से, दाँतो से जैसे हवेली की ईट-से-ईट बजा रहे हो। फिर जमीदार को यो अनुभव हुआ जैसे बाढ आ गई हो, चारो ओर पानी-ही-पानी। जमीदार की हवेली बह चुकी है और वह एक लाश बना हुआ पानी पर तैर रहा है। उसके सभी गाँव वैसे-के-वैसे खड़े है, किसान पानी मे जीवित थे, काम कर रहे थे, उनसे बाढ जैसे कुछ न कह रही हो। जमीदार की लाश के साथ-साथ नव्वाब की लाश तैरती जा रही है। नव्वाब की बत्तीसी यूँ बाहर निकली हुई है, जैसे वह हँस पड़ा हो! एक चील उसके माथे पर बैठी उसकी आँखे नोच रही है।

पसीने-पसीने जमीदार हडबडाकर उठ खडा हुआ—उसके अँग अधिक जोर से काँपने लगे।

फिर डाक्टर आते है, हकीम आते है, वैद्य आते है, प्रत्येक अपनी-अपनी शक्ति के अनुसार जोर लगा रहा है, किन्तु कोई अन्तर नही पड रहा, कोई सुधार नही हो रहा।

न जाने क्यों ?

३०

फर्मान ने जिलाबोर्ड मे भी जाकर देख लिया। उसकी यह धारणा और भी दृढ हो गई कि सारा शासनक्रम ही गलसड चुका है, सब-का-सब ताना-बाना ही बिगडा हुआ था। जिलाबोर्ड मे भी वही कुछ होता जो गोरे रंग वाले की इच्छा होती, जमीदार आखिर गोरे रग वालों का ही पिट्ठू था।

फर्मान यह भी जानता था कि किसी समाज का उस समय तक भला नही हो सकता, जब तक लोग पढ-लिख नही जाते। और उसका अनुभव उसे बता रहा था कि केवल साहस की आवश्यकता होती है, पढ-लिख लेना कोई इतनी बडी बात नही थी। वे लोग जो सारी उम्र बोझ उठा सकते थे, चट्टानो को चीर सकते थे, उनके लिए यह कोई कठिन नही था कि जिस बात का निर्णय कर ले उसे पूरा न कर दिखाएँ।

फर्मान ने घर-घर, गली-गली, गॉव-गॉव मे शिक्षा-प्रचार आरम्भ किया। पहले-पहल तो उसने अपने साथियो मे एक-एक को पढ़ाया-लिखाया और इस प्रकार यह काम और आगे चल पड़ा। प्रत्येक व्यक्ति क्या नवयुवक, क्या वृद्ध, छोटी-बडी पुस्तकें पकडे हुए दिखाई देते।

फिर फर्मान ने सफाई का एक आन्दोलन आरम्भ कर दिया, प्रत्येक ने अपने अड़ोस-पड़ोस की सफाई का उत्तरदायित्व ले लिया। लोग

झुँडो मे, गलियो और मोहल्लो मे घूमते तथा कूड़ा-कर्कट उठाते। मलबे को साफ किया गया, देर से पड़े हुए ढेरो को उठा दिया गया, कूड़े-कर्कट के लिए अलग स्थान बना दिया गया।

फिर फर्मान ने लोगो को बताया कि उनके घर कैसे होने चाहिएँ, पुरानी दीवारो मे रोशनदान निकालने के लिए एक हल्ला बोल दिया गया। पन्द्रह दिन मे सारे प्रदेश मे कोई ऐसा घर न रहा जिसमे रोशनदान न बना दिए गए हो। और तो और, लोगो ने ढोर-डगरो की कोठरियो को भी हवादार बना दिया।

सारे प्रदेश में बीमारी की रोक-थाम का कोई सन्तोषजनक प्रबन्ध नही था। फर्मान सोचता कि ऐसा वातावरण बनाया जाय कि रोग का चिह्न न मिले।

लोगो ने सौगन्दे उठाई थी कि वे कभी गन्दगी नही फैलाएँगे और प्रत्येक व्यक्ति अपने उत्तरदायित्व को अपने सामर्थ्य से बढकर निभाने का प्रयत्न करेगा। फिर भी कभी-कभी सब विस्मित होते कि अड़ोस-पड़ोस में वहाँ किसी ने गन्दगी फैलाई होती, जहाँ गन्दगी न फैलाने का निर्णय किया गया था, और सब एक-दूसरे से लज्जित होते। इसी प्रकार होता रहा, होता रहा, फिर कुछ लोगो को सन्देह होने लगा कि हो-न-हो, यह किसी की शरारत है! निरीक्षण किया गया, तो उन्होंने देखा—रावेल चौपाल पर शौच के लिए बैठा हुआ था। लोगो ने खूब धिक्कारा, किन्तु वह फुंकारता, लाल-पीला होता आँखे निकालता हुआ चला गया।

लिपे-पुते हुए गाँव के सुन्दर-सुन्दर कोठे, चमकती हुई साफ गलियाँ, नहाए-धोए हुए उजले गाँव जमीदार के पिट्ठुओ को एक आँख न भाते और वे हर समय झुँझलाए-झुँझलाए-से रहते। अपने घोडो का रौब जमाते रहते, अपनी बन्दूके लटकाकर घूमते रहते, उनके कुत्ते गलियों में हफ-हफ करते रहते, फिर भी लोगो के दिलो मे पुराने जमींदार और उसके पिट्ठुओं का भय कम होता जा रहा था; और यदि उनका

राजकुमार उनके सामने होता तो वे सर्वथा निडर हो जाते, मरने-मारने के लिए कमर कस लेते।

एक बार गॉव के एक जलसे मे फर्मान व्याख्यान दे रहा था। उसके व्याख्यान का आज का विषय धरती की देख-भाल के बारे मे था। फर्मान ने लोगो को बताया कि बाढ, आँधी और वर्षा के कारण उनकी धरती बर्बाद हो रही थी, इसलिए लोगो को चाहिए था कि वे हर खाली पडी जगह पर घास उगा दे और पेड लगा दे। इस प्रकार उनकी धरती न तो खराब होगी न बर्बाद, फर्मान ने लोगो को विशेष रूप से यह बात समझाई कि वे अपने ढोर-डगरो को कही और छोड़ दिया करे, ढोर-डगर घास को अधिक उगने से रोकते है, और घास न हो तो धरती फटने लगती है, इसलिए ढोर-डगरो को घास के विशेष और सुरक्षित खेतो मे ही छोडना चाहिए।

फर्मान ये बाते लोगों को समझा रहा था कि बीच मे से उठकर शरा बोला—"धरती की लोगो को क्या चिन्ता है, धरती तो जमीदार की है!"

अभी बाकी शब्द उसके मुँह मे ही थे कि कुछ लोगो ने उठकर शेरे को गर्दन से दबोच लिया। वास्तव मे जब से शेरा आया था, कुछ-न-कुछ करता रहा था; हर बात में व्यग से काम लेता, लोग उससे दुखी हो उठे थे।

फर्मान ने बढकर उसे लोगो के हाथो से मुक्त कर दिया और अधिक बिगाड न होने दिया।

जलस के बाद जब लोग एक-दूसरे के आगे-पीछे होकर बिखरे तो फर्मान अपने नजदीकी साथियो के साथ गाँव से बाहर निकल आया। आज फिर चारो-के-चारो हठ पर उतारू दिखाई देते थे।

फर्मान चिन्ता में व्यस्त था।

कितनी देर से फर्मान उन्हे टाल रहा था, अब और अधिक टालते रहना वह असम्भव अनुभव कर रहा था। आखिर उसने सारा उत्तर-

दायित्त्व अपने ऊपर ले लिया। वह सोचता—यदि यह काम करना है तो उसे उसको अपने हाथो से पूर्ण करना चाहिए। रात को जब वे अलग हुए तो फर्मान ने दोबारा वचन दिया कि वह उस काम को अपने हाथो से पूरा करेगा।

और इस प्रकार बार-बार वचन देते रहने से उसने यूँ अनुभव किया कि यह झंझट समाप्त ही कर दे। सभी यह बात कह रहे थे कि जब तक जमीदार की एक-एक हवेली जलाकर भस्म न कर दी जायगी, किसान-मजदूरो के मकान नन्हे-नन्हे दिखाई देते रहेगे। और जितने उनके मकान छोटे दिखाई देंगे, उतने ही उनका साहस टूटा रहेगा। एकरूपता तो दो ही साधनो से उत्पन्न हो सकती थी, या तो प्रत्येक नागरिक के लिए जमीदार-ऐसी हवेलियाँ बनाई जॉय अथवा जमीदार की हवेली को गिराकर धरती से मिला दिया जाय, और यह दूसरी बात अधिक सुगम थी।

फिर फर्मान सोचता कि जमीदार तो यूँ ही घुलता जा रहा था, मरे हुए को मारना कौनसी वीरता है। यदि उसके साथी थोडे समय के लिए और प्रतीक्षा करे तो यह कॉटा उनके मार्ग से स्वयमेव हट जायगा, और फिर नव्वाब का ध्यान उसकी सारी आशाओ को टुकडे-टुकड़े कर देता। नव्वाब बिलकुल वैसे-का-वैसा था, जिस प्रकार लोग उसके पिता की कहानियाँ सुनाया करते थे। नव्वाब तो अभी हट्टा-कट्टा था, नव्वाब ने अभी तीस वर्ष और लेने थे कि उसकी दशा भी उस जैसी हो जायगी और चारपाई पर जा गिरेगा।

फर्मान सोचता कि हवेली को चारो ओर से आग लगाई जाय, क्योकि गर्मी की रुत थी, इसलिए जब तक कुएँ से पानी निकाला जायगा, हवेली जलकर भस्म हो जायगी, न जाने कौन आग की लपेट मे से बच निकलेगा, न जाने कौन आग की लपेट मे आ जायगा ?

घोडे जल जॉयगे, कुत्ते जल जॉयगे, डोरियो से बॅधे हुए बाज जल जॉयगे, पानी कौन निकालेगा, कौन पानी डालेगा, शायद कोई भी नही।

जिन्हे आवाजे दी जॉयगी, वे लोग तो बाहर जा चुके होगे, वे तो दिन ढलते ही हवेली में से निकल जॉयगे।

किन्तु इतनी शीघ्रता भी क्या थी ? काश, वे थोडा समय और प्रतीक्षा कर सके, जमीदार आँखे बन्द कर ले, नव्वाब की हवेली को भस्मसात् कर देने का कुछ और ही आनन्द था। नव्वाब, जिसका अभिमान अभी तक जीवित था, नव्वाब जिसे भागभरी सदैव 'अत्याचारी' कहकर बुलाती थी, नव्वाब—जिसने जिलाबोर्ड के चुनावो के बाद मूँछो पर ताव दिया था कि वह फर्मान को जिला-बोर्ड के अधिवेशन मे बैठने के योग्य नही रहने देगा, और अभी तक जिसका कोई वश नही चला था, जमीदार निःशक्त हो चुका था, कितनी देर से पलंग पर पडा घुल रहा था, उसका अँग-प्रत्यँग कॉपता था, बन्द-बन्द लरजता था, भागभरी ने जमीदार के सम्बन्ध मे कभी कोई अपशब्द नही कहा था।

जमीदार का दोष भी क्या था ? जिस युग मे उसने आँख खोली थी और बडा हुआ, उस युग मे हर कोई ऐसे ही करता था। फिर फर्मान सहसा जैसे कॉप-सा उठता, उसे अपने-आप से भय होने लगता। अनजाने मे उसने फिर सोचा कि आज वह जमीदार के पक्ष मे सोच रहा था।

बार-बार फर्मान के विचार उस दिशा मे बह जाते और उसी ओर बढते जाते। वह अपने दिल को लाख समझाता, सारा दिन उसके साथी जमीदार के अत्याचारो की कहानी छेडे रहते, किन्तु फर्मान अक्सर अनुभव करता कि उसे क्रोध नही आता है। और ऐसे समय उसे अपने-आप से घृणा होने लगती।

न जाने क्यो फर्मान यह सोचता कि जमीदार की हवेली को कभी आग नही लग सकती, अपने साथियो मे एक पर भी उसे उस काम का उत्तरदायित्व देने का भरोसा नही था, उसे अपने-आप से और अधिक लाज आती।

"मै स्वयं यह काम करूँगा, मै स्वयं यह काम करूँगा, मै अकेला

यह काम करूँगा," फर्मान हर साँस के साथ यह सोचने लगा, सोचते-सोचते अन्धकार हो गया। उपेक्षाभाव मे चलता-चलता वह हवेली के एक कोने मे जा खडा हुआ, अँधेरी रात थी, हाथ-को-हाथ सुझाई नही देता था, हवा चल रही थी, बस एक चिन्गारी की आवश्यकता थी, पलक झपकते मे सारी-की-सारी हवेली शोलो मे लिपट जायगी।

फर्मान सोचता कि आग पहले पश्चिम की ओर से लगाई जाय, जब वहाँ पहुँचता तो सोचता—पूर्व को ओर से आग लगाना अधिक अच्छा होगा। फिर उसे विचार आता कि तनिक उत्तर-दिशा मे जाकर देखे, फिर उसे ध्यान आता कि नही दक्षिण की ओर से जाकर देखे।

हवा और तेज हो गई।

पहले फर्मान को पेट्रोल की काली बोतल तोड़नी थी, फिर दिया-सलाई जलानी थी, शेष कार्य स्वयमेव हो जायगा। और सामने बागीचा था, जिसमे से होता हुआ वह नदी की ओर चला जायगा।

फर्मान पसीने मे नहा चुका था। उसे यूँ मालूम होता जैसे उसके हाथ-पाँव सुन्न हो चुके हो, इस दुविधा मे फर्मान की दशा बिगड़ रही थी कि हवेली के ऊपर कमरे की खिड़की खुली और उसमे से दूध-ऐसे वस्त्र पहने हुए एक भरपूर जवान लड़की ने बाहर झाँक कर देखा, जैसे वह आकाश से उतरी हुई कोई अप्सरा हो। अँधेरी काली रात मे खड़ा फर्मान हिमवत् स्थिर हो गया, पलभर के लिए वह भूल गया कि वह कौन है, किस कार्य के लिए वह आया था, वह चौककर पीछे हट गया और फिर झिझकते हुए वह घर की ओर लौट पड़ा।

दीवार के कान!



३१

जहाना, जुम्मा, शेरा और रावेल आजकल नव्वाब के पिट्ठू बन चुके थे। ज्यो-ज्यो जमीदार की दशा बिगड़ती जाती त्यो-त्यो वे उससे दूर होते जाते। नव्वाब का जहाँ तक वश चलता, वह उस ओर चरण न रखता, और इस बात पर प्रसन्न होता कि जमीदार के पिट्ठू अब उसके पिट्ठू नही रहे थे।

जिला-बोर्ड के चुनावों के उपरान्त बाहर निकलने को उसका मन न मानता। सारा दिन मदिरापान करता, गुट होकर औंधे-मुँह पडा रहता। फर्मान तथा उसके साथियो को हानि पहुँचाने के ढँग सोचता रहता और फिर उन साधनो पर विचार करता हुआ स्वय ही उन्हे बदल देता।

जमीदार, नव्वाब और उनके जुआरी सब-के-सब जैसे निःशक्त हो चके थे—यूँ अनुभव करते, जैसे उनका कोई हमदर्द कही भी नही रहा था। प्रत्येक व्यक्ति उनका साथ छोड चुका था, अभी तक वैसे एक भ्रम-सा बना हुआ था, जो किसी समय भी टूट सकता था।

शेरें की पत्नी पर, अल्हड़ जवान लडकियाँ, गली में गुजरते हुए हँस पड़ी थी। जब उसने आगे से बुरा-भला कहा तो उन लड़कियों ने आगे से उसे माँ-बाप की गालियाँ दी और जहाने को ताने दिये! और जहाना कहा करता था कि लोग उसकी पत्नी को शेरे के ताने दिया करते थे, और फिर सब-के-सब हँस पड़ते।

रावेल और जुम्मे की पत्नियाँ 'धन्नी' की ओर की रहने वाली थी। कब से मायके गई हुई थी और आने का नाम न लेती। नव्वाब कहता —कदलाँ ऐसी स्त्री ससार भर में उत्पन्न नही हुई थी, और खिडकी मे खडी कंदलाँ दराड मे से यह देख-देखकर, सुन-सुनकर जी-ही-जी में हँसती। नव्वाब सप्ताह मे एक बार अवश्य रावलपिंडी शहर से गाने वाली लडकियाँ मँगवा लेता, रात-भर महफिल गरम रहती। जो लडकी भी रावलपिडी से आती, नव्वाब अचम्भे मे आ जाता कि वह कदलाँ की परिचित निकल पडती, नाचती-हँसती और खेलती रहती। वह सोचता—जभी तो कदलाँ कभी उदास नही हुई थी, उकताई नही थी।

और नव्वाब विस्मित होता, जब जाते हुए नव्वाब से अधिक-से-अधिक पैसे दिलवा दिये जाते, फलो के टोकरो-के-टोकरे उनके साथ लदवा दिये जाते, वस्त्र दिये जाते, घर की जिन कीमती वस्तुओ पर वे हाथ रखती उन्हे दे दी जाती। नव्वाब सोचता कि उसे कैसी पत्निया मिलती थी। पहली पत्नी थी, जो उसके सामने बोलती नही थी, और अब यह दूसरी थी जिसके विषय मे लोग उसे डराते रहे थे। उसके माथे पर भी [illegible] कभी बल नही देखा था।

जब से जमीदार चारपाई पर पड़ा, तब से घर के काम मे कदलाँ अधिक दिलचस्पी लेने लगी। रसोई की ओर चक्कर काटती, अस्तबल की देखभाल करती, घोडो को जाकर पुचकारती, कुत्तो से चोचले करती, और कई सायँकाल बागीचे मे व्यतीत करती। कही से बेल-बूटे कटवाती रहती, कही लगवाती रहती। उसने बागीचे की कई पगडडियाँ बनवा दी, उसने बागीचे की चारदीवारी में कई द्वार लगवा दिये।

नौकर-चाकर चारो ओर उसका सम्मान किया करते थे। प्रत्येक के साथ हँसकर बालती, मजदूरो के बच्चो को उठा-उठाकर प्यार करती, किसी को कुछ इनाम देती, किसी को कुछ। जब भी बाहर निकलती, अत्यन्त साधारण वेश मे, मजदूरो और श्रमिको से घुल-मिल जाती, कभा

उन्हें स्वय काम करके बताती।

श्वेत घोडी कदलाँ को अत्यन्त प्यारी लगती, घटो उसके पास खडी रहती, उसे खाते हुए और विश्राम करते देखती, उसके साथ खेलती रहती, और वह घोडी भी प्रतिदिन समय पर मुँह उठाकर प्रतीक्षा करने लग जाती, कदलाँ ने उसका नाम 'सुन्दरी' रखा था।

आधी-आधी रात को कदलाँ चुपके-से घूमकर देखती कि कौन कहाँ होता है और क्या करता है। उसने सब प्रहरी बदल दिये। उसने शहर से आदमी बुलवाकर प्रहरी रख लिये, जो बन्दूक चलाना भी जानते थे, रिवॉल्वर का इस्तेमाल भी कर सकते थे, गतके के खिलाडी भी थे। पहले कुत्ते रात को खुले छोड दिये जाते थे, किन्तु अब कदलाँ के आदेश से उन्हे रात को बाँध दिया जाता।

रेशमाँ और कदलाँ मे असीम स्नेह था। वैसे रेशमाँ कभी नीचे कदलाँ के पास नही आई थी, और कदलाँ भी यह नही चाहती थी कि वह नीचे आकर नव्वाब की करतूतो से परिचित हो जाय। कदलाँ वैसे उसके पास अवश्य जाती थी। आरम्भ मे जमीदार को यह अच्छा नही लगता था, किन्तु ज्यो-ज्यो समय बीतता रहा, त्यो-त्यों कदलाँ के सम्बन्ध मे उसके विचार पलटते गए। रेशमाँ भी जब कभी कोई बात करती तो कदलाँ की प्रशसा करते हुए न थकती।

कदलाँ ने रेशमाँ को बहुत दिन से पढाना आरम्भ कर रखा था। रेशमाँ दिन-रात पढती रहती, और अब तो वह बडी-बडी पुस्तके पढ़ लेती थ'।

कदलाँ ने उसे हर प्रकार की पुस्तके मँगवाकर दी थी, कई पुस्तके कदलाँ उसे समझा-समझाकर पढाया करती थी।

चाहे जमीदार लाख कहता कि मुसलमानो को गाने-बजाने से क्या सम्बन्ध, और फ़िर विशेष रूप से स्त्री के लिए तो यह पाप था, और स्त्री भी वह जो जमीदार की लडकी हो, किन्तु रेशमाँ ने एक न मानी और पहले चोरी-छिपे और फिर जमीदार के जानते-बूझते कँदलाँ ने रेशमाँ

को सितार सिखाना आरम्भ कर दिया । साँझ-सबेरे रेशमाँ के कमरे मे ग्रामोफोन बजता रहता और कई प्रकार के रिकॉर्ड बजते-बजाते रहते ।

कभी-कभी रेशमाँ कँदलाँ को अपनी जमीदारी के विषय मे छोटी-छोटी बातें बताती रहती, वे बाते जो दुर्ग-ऐसी जमीदार की हवेली की ऊँची-ऊँची दीवारो से छन-छन कर भीतर पहुँच जाती, वे बातें, जिन्हे न बताने का नेकाँ लाख प्रयत्न करती, उसके भीतर की नारी से वे छिपाई न जाती । जब उनकी मैत्री अधिक गहरी हो गई तो रेशमाँ न कँदलाँ को बताया कि कैसे वह एक रात नेकाँ के साथ रास देखने के लिए गई थी । किन्तु उस समय तो वह अभी अल्हड थी और अब वह लाख साहस करे तो ऐसा नही कर सकती थीं ।

अक्सर बातो-बातो मे फर्मान की चर्चा भी छिड जाती, और रेशमाँ उसके विषय मे सुनी-सुनाई कहानियाँ यूँ कहती, जैसे वह उसका कोई समीप का साथी हो । कँदलाँ सुनती रहती, सुनती रहती, कभी-कभी रेशमाँ को यूँ अनुभव होता जैसे उसकी कहानियाँ सुन कर फर्मान कँदलाँ को भी अच्छा लगने लगा था ।

एक दिन कँदलाँ अचम्भे मे आ गई, जब उसने यँ ही रेशमाँ के एक कमरे की आलमारी खोली—तो सामने एक खाने मे—फर्मान का चित्र पडा था; उस चित्र के चरणो मे ताजा तोडी हुई कलियाँ पडी थी । रेशमाँ बाहर गई हुई थी, इससे पूर्व कि वह फिर कमरे मे लौटे, कँदलाँ ने आलमारी के पट उसी प्रकार बन्द कर दिए । कँदलाँ ने लाख प्रयत्न किया, उसके मुँह पर एक रँग आ रहा था और एक रँग जा रहा था, आखिर तबियत बिगड़ने का बहाने करके वह नीचे उतर आई ।

अपने कमरे में आकर पहली बात जो उसने की, कि द्वार बन्द करके सन्दूक के भीतर जिस कमीज की तह मे फर्मान का वैसे-का-वैसा चित्र पडा था, उसे जला दिया ।

जिला-बोर्ड के चुनावो के उपरान्त कँदलाँ को अवकाश न होता । दिन भर नव्वाब घर में पड़ा रहता, उसके चाटुकार भी वही आ जाते

और शराब के दौर सबेरे से चलने लगते तथा रात गए तक चलते रहते। शराब पीकर गुण्डे ससार भर की बकवास करते, बार-बार मन्सूबे बाँधते, और बार-बार उन्हे बदल देते, कँदलाँ छेद में से सब बाते सुनती रहती।

एक दिन यूँ ही वे सबके-सब बेसुध पडे थे कि शेरा काँपता हुआ आया—उसके वस्त्र मिट्टी और कीचड मे लिथड़े हुए थे, उसके दाँतो से रक्त बह रहा था।

शेरे ने बताया कि पहले की भाँति आज भी वह जलसे मे गया था, जहाँ फर्मान व्याख्यान दे रहा था, और अभी जलसा समाप्त नही हुआ था, कि उसके साथी उस पर टूट पडे, मार-मारकर उन्होने उसे अध-मरा कर दिया, उसके दाँत तोड दिये।

ज्यो-ज्यो शेरा अपनी आप-बीती बढा-चढा कर बताता, त्यो-त्यो नव्वाब को क्रोध चढता, त्यो-त्यों अन्य गुण्डे लाल-पीले होते जाते। उनके हाथो से शराब के प्याले गिर पड़े और वे उसी समय तैयार हो गए। प्रत्येक गुण्डे ने अपना-अपना पिस्तौल सँभाल लिया, और द्वार के पट के साथ लगकर देखती हुई कँदलाँ का हृदय तेजी से धडकने लगा, किन्तु एक के बाद एक उसने देखा कि नव्वाब शराब के नशे में धुत्त सामने पलग पर जा गिरा—"अबे ससुरी के, आज के रग मे क्यो भंग डाल रहा है ?"—नव्वाब ने टूटे-फूटे शब्दो मे कहा और नव्वाब के अन्य गुण्डे भी हाँ-हाँ कहते हुए वैसे-के-वैसे गिर पडे, शेरा हक्का-बक्का खडा रहा।

लगभग क्षण भर बाद फिर शेरे ने अपनी कहानी छेड दी और सब ने मिलकर परामर्श किया कि अगले इतवार को फर्मान की कड़ी निगरानी की जाय, रात को सोते-में उठाकर उसे कही आगे-पीछे कर दिया जाय।

किन्तु ऐसे निश्चय तो वे कई बार कर चुके थे। शेरा कह रहा था, जब कभी उन्होने उसे फाँसने का निश्चय किया, फर्मान उनके हाथ न लगा।

"इन बातो से तो मै स्वय हैरान हूँ ?" शराब के नशे मे चूर नव्वाब होशमदो की भाँति बाते करने लगा।

'उस ससुरे के भाग ही अच्छे है ?" उनमे से एक बोला।

"नही तो वह कौन था, जो चुनाव मे जीत जाता ?" एक और ने बडी कठिनता से वाक्य पूर्ण किया।

और फिर सब चुप हो गए, जैसे उन पर हिमपात हो गया हो !

तू धीरे-धीरे आ !

३२

रेशमाँ आजकल फिर 'मिर्जा-साहिबाँ' की कहानी पढ़ रही थी। साहिबाँ मिर्जे के साथ चल पडी, शहर से निकलकर मिर्जा जड के नीचे सो गया। दूर से अपने भाइयो के घोडो की उड़ाई हुई धूल देखकर साहिबाँ न बार-बार अनुनय-विनय की,—"ऐ मिर्जा, भाग चल !" किन्तु उसकी नीद बहुत गहरी थी। और अब जब घोड़े सामने आ गए, उस समय भी मिर्जा सोया पड़ा था। साहिबाँ ने उसका तूणीर जड के ऊपर फेंक दिया। मिर्जे के अचूक निशाने ने उसके माँ-जाए भाइयो के एक-एक करके तीरो से सीने बीध देने थे, और पराए पूतो ने निहत्थे मिर्जे की बोटी-बोटी उडा दी······पढते-पढते रेशमाँ ने गरदन मोड़कर नेकाँ से पूछा—"बहन नेकाँ, तुझे साहिबाँ कैसी लगती है ?"

और नेकाँ को आगे से मौन देखकर रेशमाँ ने उसे बताया कि उसकी सम्मति मे साहिबाँ मूर्ख स्त्री थी, जिसे अपने हृदय का कुछ ज्ञान नही था। भाइयो को छोड़कर पहले अपने प्रेमी के साथ भाग खडी हुई और फिर भाइयो के प्यार मे अपने प्रेमी को मरवा डाला।

"किन्तु वह बहन के रूप मे कितनी महान् थी ?" रेशमाँ ने एक ऐसी भावुकता से कहा, जो किसी के हृदय की गभीरताओं में छिपी होती है। और नेकाँ ने रेशमाँ की आँखो में आये आँसू देखकर अनदेखे कर दिए।

जब पढने से उसका मन ऊब जाता, तो रेशमाँ क्रोशिया लेकर बैठ जाती। एक-एक घर, एक-एक ग्रन्थि, एक-एक कली बडे चाव से बनाती, जमीदार की लडकी को क्रोशिये का क्या आकर्षण ? इतने बारीक काम से क्या लगाव ? नेकाँ बार-बार पूछती कि वह किसके लिए इतना परिश्रम करती थी, किन्तु रेशमाँ हर बार टाल जाती।

कभी-कभी नेकाँ विस्मित होती। अपना कमरा बन्द करके जैसे रेशमाँ भीतर किसी के साथ बाते कर रही हो। कई बार उसकी सिसकियों के स्वर सुनाई देते, कभी उसकी आँखे लाल-लाल दीखती।

दोनो समय वह अत्यन्त श्रद्धा के साथ कलियाँ तोडती और उन्हें आलमारी के एक खाने मे रख देती। नेकाँ को इस बात का तनिक भी दु:ख नही था, वह जानती थी कि वहाँ किस प्रतिमा की पूजा की जा रही थी।

किन्तु आजकल रेशमाँ की नीरवता, आजकल रेशमाँ का मानसिक-खिचाव, रेशमाँ का खोया-खोया-सा रहना नेकाँ को काफी परेशान कर रहा था। नेकाँ उसकी रग-रग को पहचानती थी। कुछ दिनो तक मौन रहने के पश्चात् उसने धीरे-धीरे रेशमाँ का दिल कुरेदना आरम्भ कर दिया। किन्तु जहाँ भी वह हाथ रखती, उसे पीडा, चीत्कार और आँसू ही मिलते और इन सब का कारण कही छिपा हुआ, खोया हुआ दृष्टिगोचर होता।

एक रात हवेली मे कुहराम मच गया। रेशमाँ सायँकाल ही से विकल थी, उसके हृदय में खलबली-सी मची हुई थी। पता करने पर मालूम हुआ कि कोई व्यक्ति हवेली को आग लगाता हुआ पकडा गया था; अधिक जाँच-पडताल पर ज्ञात हुआ कि फर्मान को अस्तबल के रक्षक बाँध लाए थे। कहते थे कि उसके पास पैट्रोल की एक बोतल थी और दियासलाई की डिबिया। और वह हवेली के इर्द्-गिर्द सन्देहपूर्ण-भाव से चक्कर लगाता रहा था।

नव्वाब पिछले दो दिनो से अपने गुँडो के साथ रावलपिंडी गया हुआ

था। पलक झपकते ही यह समाचार हवेली मे चारो ओर फैल गया और फैलता-फैलता जमीदार के कानो तक पहुँच गया।

जमीदार ने तत्काल फर्मान को अपने कमरे मे बुला भेजा। अश्व-पालको ने बयान दिया—अभी कठिनता से अँधेरा हुआ था कि फर्मान हवेली की ओर आया और इधर-उधर टहलने लगा, फिर प्रत्येक द्वार और प्रत्येक खिडकी के पास खडे होकर देखता रहा और घूमता रहा, जैसे निर्णय कर रहा हो कि उसने अपना काम कहाँ से प्रारम्भ करना था और जब उनका सन्देह निश्चय मे बदल गया तो प्रहरियो ने मिल कर उसे जा पकडा। फर्मान जमीदार के कमरे मे अकेला खडा था, शेष सब कर्मचारियो को जमीदार ने बाहर भेज दिया। फर्श पर पडे हुए कोमल कालीन मे फर्मान के पाँव धँसते जा रहे थे। छतो से लटकते हुए झाड-फानूसो मे से निकलता हुआ मन्द-मन्द प्रकाश छन-छनकर सारे कमरे को सुन्दर रूप से आलोकित कर रहा था। दाएँ-बाएँ खिडकियो मे से धीमी-धीमी पवन ठुमक-ठुमककर आ रही थी। जमीदार के पलँग के समीप गुलाब की निरीह-कलियाँ सिर झुकाए श्रद्धाभाव मे खडी थी। जमीदार मौन था। फर्मान ने अभी उसके कमरे मे चरण ही रखा था कि उसके सारे रोग जैसे कट गए हो, उसके अगो का कम्पन रुक गया। दोनो नीरवता मे जैसे एक-दूसरे से बाते कर रहे थे, लड-झगड रहे थे। अभी तक उन दोनो की दृष्टि मिली नही थी और इस प्रकार कितनी ही देर खडे-खडे आखिर जब फर्मान ने जमीदार की ओर आँख उठाकर देखा तो वह बेसुध पडा था। क्षण-भर तक फर्मान की समझ मे न आया कि वह क्या करे।

सामने द्वार पर पर्दे फडफडा रहे थे, जैसे उनके पीछे कोई और भी हो, जैसे भीतर से कोई मार्ग सुझा रहा हो। फर्मान ने पर्दे को हटाकर देखा। वहाँ कोई भी नही था। दाई ओर की सीढियो से निकलकर वह नीचे आ गया। आगे एक दालान था जिसके सामने एक और द्वार था और यह द्वार एकदम खुला था और फर्मान अत्यन्त विकलता से उसमें

से निकला, बाईं ओर बागीचा था। पलक-झपकते वह उसमे गायब हो गया। हवेली से दूर जाकर फर्मान ने मुडकर देखा—केवल ऊपर के कमरे के अतिरिक्त सारी हवेली सूनी थी।

और ऊपर के कमरे मे रेशमाँ घुटनो के बल रो-रोकर विनय कर रही थी, और नका बाहर बैठी प्रतीक्षा कर रही थी, प्रतीक्षा किये जा रही थी। और यूँ प्रतीक्षा करते-करते सवेरा हो गया, अभी तक रेशमाँ की आँखो के आँसू सूखे नही थे।

रेशमाँ अभी तक अपने कमरे मे थी, तभी कदलाँ ऊपर आई। नव्वाब जिन दिनो बाहर होता, कदलाँ अक्सर ऊपर आया-जाया करती, किन्तु वह आज तनिक सबेरे ही आ गई थी। उसे हँसती और मुस्कराती देख-कर नेकाँ हक्की-बक्की रह गई। भीतर से रेशमाँ की आवाज सुन रही थी। उसने अपने-आपको तनिक सँभाल लिया।

"कहते है कोई चोर आया था रात को ?" कदलाँ ने आते ही बात की।

रेशमाँ मौन थी, उसकी आँखे लाल थी, सूजी हुई थी, जैसे अब और अधिक नही रो सकती थी।

"कहते हैं"—कदलाँ ने बात दुहरानी चाही—"कहते है कि चोर आया और स्वयमेव लौट गया ?"

"वह कैसे ?" सहसा रेशमाँ के मुँह से तीर की भाँति यह वाक्य छूट गया। उसे गहरी लज्जा आई और लाज के मारे उसका बदन तमतमा उठा, किन्तु पलभर का असतोष उसकी सभी भावनाओ की विकलता को स्पष्ट कर गया।

और फिर कदलाँ ने उसे सारी कहानी सुनाई कि उसने स्वय जाकर उसके पैरों के निशान देखे थे और ये निशान जमीदार के कमरे के पिछ-वाडे से होते हुए बागीचे मे से बाहर निकल गए थे, और रात भर हवेली के प्राचीर के साथ प्रहरी मोर्चे बनाकर परेशान होते रहे।

और फिर जितना समय कंदलाँ ऊपर रही, रेशमाँ और कंदलाँ हँसती

रही, खेलती रही और गाती रही।

तू धीरे-धीरे आ।
तेरे घोड़ों को मैं घास डालूँगी।

और फिर वे बार-बार साईस की हँसी उडाती। जी-ही-जी में कँदलाँ ने निर्णय कर लिया था कि घोड़े चाहे कुछ भी करे, वह साईसो के स्थान पर भी नये व्यक्ति रख लेगी। फिर वे गाने लगी :

तू धीरे-धीरे आ।
शीतल समीर बह रहा है!

एक स्वर और एक प्राण होकर जब रेशमाँ और कदलाँ स्वर उठाती, नेकाँ के हृदय में कुछ होने लगता। वह सोचती कि वह इतना कुछ कैसे पचा सकेगी, इतना वह कैसे सुरक्षित रख सकेगी—कही उसका अँचल न फट जाय; और भय के मारे वह काँपने लगी।

मैंने लाहौरी शिविर लगाए हैं।
अब मैंने पेशावरी शिविर लगाए है।
इन शिविरो के ऊपर से मै बताशो की वर्षा करूँगी।
लडकियाँ उन्हे छिप-छिपकर खायँगी।
तू धीरे-धीरे आ!

रेशमाँ और कदलाँ अभी तक गा रही थी।

पिता पर पूत

३३

जमीदार की दशा दिन-प्रति-दिन बिगडती जा रही थी, दो-दो दिन और कभी तीन-तीन दिन बेसुध पडा रहता। इतना समय निरन्तर लेटे रहने से उसकी पीठ मे घाव हो गए थे। लाख इलाज किये गए, किन्तु उसकी चमडी गलने लगी, उससे भयानक दुर्गन्ध आने लगी।

नव्वाब आजकल आमतौर से शहर ही मे रहता, उसके साथ जमीदार के पिट्ठू भी चिपटे हुए थे। फर्मान की उस घटना के बाद जब वह घरलौटा तो वह बात काफी ठडी पड चुकी थी। फिर भी वह जमीदार के कमरे मे जाकर काफी समय तक कूदता रहा, और बडबड़ाता हुआ बाहर आ गया।

उसके बाद नव्वाब कभी अपने पिता को देखने के लिए न गया। कई बार जमीदार ने उसे सन्देश भी भेजे, उसकी पत्नी ने भी उसे समझाया, किन्तु नव्वाब ने एक न सुनी।

फिर जमीदार के शरीर के एक पूरे भाग पर अधरग गिरा। सिर के दाई ओर के बाल झड गए, खोपडी की खाल पीली पड गई। एक ओर की भुजा सूखने लगी, एक टाग सुन्न हो गई, दाईं ओर की पलक तक न झपकी जाती, नाक के दाहिने नथुने से साँस न लिया जाता।

हकीम, वैद्य, डॉक्टर अपनी पूरी शक्ति दिखा चुके थे। किन्तु बुढापे

के रोग का कोई इलाज नही था। अपने शरीर तथा अग-अग का जमीदार पूरा मोल ले चुका था, वह अपने प्रत्येक अग को सामर्थ्य से अधिक प्रयोग मे ला चुका था। और अब उस मशीन के पुर्जे घिस-घिसाकर, प्रयोग मे आ-आकर बर्बाद हो चुके थे।

वह चाहता था कि नव्वाब को केवल इतना ही याद दिला दे—"तेरी भी यही दुर्दशा होगी!" किन्तु नव्वाब था कि उसने उसके कमरे मे फिर चरण ही न रखा।

और प्रतिदिन जमीदार के पास ये समाचार पहुँचते कि नव्वाब ने आजकल क्या चाल पकड रखी थी, उसकी मित्रता किनके साथ गहरी होती जा रही थी, और सप्ताहो तक वह कहाँ गायब रहता था।

अनाज की भरी हुई कोठरियाँ खाली होती जा रही थी। घोडे बिक रहे थे, कुत्तो की बहुत बुरी दशा होती जा रहा थी, कमरो के कालीन तक बाहर जाने लगे थे—और हवेली मे कभी नई वस्तु नही आई थी। जमीदार को यूँ ज्ञात होता कि उसका वैभव पानी की भाँति बहाया जा रहा था। इससे पहले कि वह अपनी आँखे मूँद ले, उसके हाथ मे भिक्षा-पात्र होगा।

जमीदार प्रतिदिन अपने बाज मँगवाकर देखता, प्रत्येक को प्यार करता। कुत्ते बारी-बारी उसके कमरे मे आते और कितनी देर उससे खेलते रहते। अपने कमरे के कालीन बदलवाता, अपने झाड़-फानूस बदलवाता, खिडकियो और द्वारो के पर्दे बदलवाता, अपने कुल के आभूषणो तथा हीरो को तश्तरियो मे रखकर देखता, सुन्दर और कीमती पात्रो मे उसके लिए वस्तुएँ सजाई जाती। सारी बन्दूके, सारी राइफलें, सारी तलवारें जो उसने अपने जीवन मे इस्तेमाल की थी, उसके सामने लाकर रखी जाती, एक दृष्टि में सारी वस्तुएँ देखकर जैसे उसे सन्तोष हो जाता, उसकी भूख मिट जाती। जमीदार का दिल चाहता कि वह एक-एक वस्तु अपने अंक मे भर ले किन्तु उसकी एक भुजा तो हिल ही नही सकती थी, एक टाँग थी कि मुड़ नही सकती थी, एक आँख थी कि

देख नही सकती थी, एक भाग था कि उससे उठाया नही जाता था।

जमीदार सोचता—काश, एक बार नव्वाब आकर उसे देख जाय, किन्तु नव्वाब अपने हठ पर डटा रहा।

हठ से अधिक नव्वाब को आजकल दुर्बलता की अनुभूति होने लगी थी। उसे यूं ज्ञात होता कि उसके चरण जैसे उखड़ रहे हो, जैसे प्रत्येक वस्तु पर उसकी पकड ढीली पडती जा रही हो, प्रत्येक आँख उसे निठल्ली और निर्लज्ज दिखाई देती। उसे यह अनुभव होता कि वह विवश था और किसी का कुछ नही बिगाड सकता था; इस प्रकार की विवशता की अनुभूति उसे हर समय खाने को दौडती, तथा बार-बार मदिरापान मे समययापन करता और नशे में सब-कुछ भुलाने की कोशिश करता।

जमीदार सोचता कि क्या पूत इतना कपूत हो सकता था। नव्वाब वही कुछ था, जो कुछ जमीदार कभी हुआ करता था, बल्कि उससे भी कही बढकर।

जमीदार सोचता कि वह क्या-क्या कुछ करता रहा, उसके समय में उसके हाथो से किस प्रकार लूट-खसूट की गई, और उसकी अपनी एक-एक करतूत आँखो मे चित्रवत् घूम जाती। स्मृतियो के एक-एक चित्र पर जमीदार लाख बार मर-मर जाता। उसकी एक-ही नि.शेश आँख रक्त के आँसू रोती, और यूं विचारो मे सोए हुए उसे एक आवाज सुनाई देती—"वह तेरा अपना बच्चा है, मुझे मेरे ईश्वर की सौगन्द ?" और स्मृतियों का घृणास्पद चित्रपट यही-का-यही रुक जाता—"वह तेरा अपना बच्चा है !" जैसे उसके मस्तिष्क में चोटे पडने लगतीं, और जमीदार अपनी आधी भुजा उठाकर अपने आधे मस्तक पर रख लेता।

और नव्वाब जमीदार का लड़का सोचता कि उसका पिता इतना नम्रहृदय क्यो हो गया था। फर्मान—जिसको वह आकाश मे ढूंड़ता फिरता था, उसकी हवेली मे आकर चला गया। उल्टा चोर कोतवाल

को डाँटे । उल्टा फर्मान ग्राज जमीदार की हवेली को ग्राग लगाने की चिन्ता मे है। दाँत पीस-पीसकर उसने होठ काट-काटकर सुजा लिये। उबल-उबलकर फिर उबलने लगता—किन्तु एक क्षण बाद ही नव्वाब को अपनी दुर्बलता अनुभव होने लगती, जैसे वह उस तूफान के सामने तिनका हो, जो तूफान सारे पोठोहार को अपनी लपेट मे ले लेना चाहता था। जमीदार के विशेष पिट्ठुओ से गली-मोहल्ले मे माथापच्ची बन्द हो गई थी। नव्वाब जब स्वयं उन गली-मोहल्लो मे से निकलता, कई तो उठ खडे होते और कई मुँह फेर लेते।

नव्वाब ने सोचा कि बाहर से सरकार की सहायता ली जाय। प्रयत्न करके उसने एक पुलिस-चौकी का प्रबन्ध कर ही लिया। सिपाहियो ने गाँव का भ्रमण आरम्भ कर दिया, किन्तु जो सिपाही भी ग्राता वह लोगो का पक्षपाती हो जाता। फर्मान और फर्मान के साथियो मे एक मोहिनी-शक्ति थी जो सब का मन मोह लेती। प्रत्येक ककर और प्रत्येक पत्थर पर जमीदार के अत्याचारो के छीटे पडे थे और उससे प्रत्येक को घृणा थी।

पुलिस का जमीदार से पुराना वैर था। अपने यौवन-काल मे एक बार जमीदार ने एक पुलिस वाले को एक पेड़ से लटकाकर फाँसी लगा दी थी। एक दूसरे को कत्ल करवा के उसकी लाश कही छिपा दी थी; और जब पुलिस वालो ने शोर मचाया तो उसने अफसरो से मिलमिला-कर चौकी ही वहाँ से उठवा दी, ताकि न रहे बाँस न बजे बाँसुरी।

रेशमाँ का जहाँ तक बस चलता, वह नव्वाब से बात न करती। वह उससे अपने जीवन मे दो-चार बार मिली होगी, नव्वाब को अपना-आप मैला-मैला और बुरा-बुरा लगता, उसे बहन-ऐसे सम्बन्ध के सामने विकलता-सी अनुभव होती।

जितनी बार रेशमाँ नव्वाब से मिली न उससे खुलकर बात हुई, न एक-दूसरे की ओर उन्होने आँख उठाकर देखा। नव्वाब की आजकल की करतूत देखकर, विशेष रूप से जब से जमीदार चारपाई पर पड़ा था

रेशमाँ उससे बहुत डरती थी। सदैव नेकाँ से इस सम्बन्ध मे बाते करती रहती। कदलाँ के पास जब बैठती तो उससे भी इसी सम्बन्ध मे वार्तालाप करती। कँदलाँ हैरान होती कि रेशमाँ एक देहाती लडकी इतनी सूक्ष्मदृष्टि वाली होती जा रही थी।

कई बार रेशमाँ सोचती—नव्वाब से स्वय बात करे, किन्तु उसे इस बात का साहस न होता। एक-दो बार उसे अवसर भी मिला किन्तु वह टाल गई। आखिर एक दिन उसने दृढ-सकल्प कर लिया और एक शाम को जब नव्वाब रावलपिडी शहर से लौटा, तो नीचे कमरे मे जाकर उसने कदलाँ के सामने समझाना आरम्भ कर दिया—सबसे विचारणीय बात, जिसपर रेशमाँ जोर देती, यह थी कि अपने समय में जमीदार जिस प्रकार रुपया बर्बाद करता था, अपने प्रदेश मे ही करता था, और इस प्रकार घर का रुपया घर ही मे रहता था, वह पूँजी फिर-फिराकर जमीदार के पास ही आ जाती थी। नव्वाब रावल-पिडी जाया करता था, आठ-आठ, दस-दस दिन वहाँ रहकर अपनी पूँजी और अपनी सम्पत्ति बर्बाद कर रहा था और यहाँ लोग कौडी-कौडी को तरसते थे।

नव्वाब विस्मित होता—रेशमाँ कैसी बाते कर रही थी। उसकी समझ मे कुछ न आता और कदलाँ की आँखो मे जैसे लिखा होता—"मैने कभी तुम्हारी बातों मे टाँग ही नही अडाई।"

एक चाँदनी रात

३४

आमदनी वह पूँजी है, जो बाहर से आए अथवा जमीदार से छीनकर संचित की जाय।

जगल के बीच अत्यन्त सघन झाडी में एक चाँदनी रात को फर्मान और उसके साथी एकत्रित हुए। शीत धीरे-धीरे बिदा ले रहा था। फिर भी मैदान मे बैठे हुए कँपकँपी चढ जाती, इसलिए उन्होंने एक अलाव जला रखा था। इस अलाव के गिर्द दूर-निकट से आए हुए पार्टी के सदस्य बैठे हँस रहे थे, खेल रहे थे, गा रहे थे।

अभी तक फर्मान, जिसे व्याख्यान देना था, नही पहुँचा था।

जो लोग बाहर से आए थे, वे पार्टी के लिए सचित की हुई पूजी एकत्रित करा रहे थे। अपना-अपना हिसाब देते, बार-बार अपने साथियों से कौली भरकर मिलते, बार-बार हाथ मिलाते और एक-दूसरे को अपने अनुभव बताते।

"मोटे-मोटे सूफियो पर भी भूत सवार है।" एक साथी ने दूसरे साथी को समझाते हुए कहा।

"बुझने से पहले एक बार तो भडक उठेंगे।" दूसरे ने अलाव की ओर देखते हुए कहा।

आग दहक उठी थी, जब फर्मान वहाँ पहुँचा, सबसे गले लगकर मिला. प्रत्येक अपनी रिपोर्ट देने के लिए विकल था, किन्तु सबसे अधिक

विकल स्कूल का अध्यापक था, जो एक युग से फर्मान से मिलना चाहता था। आज उसने आते ही फर्मान को घेर लिया। आखिर था भी तो वह एक बूढा-खूसट। उनमे से कई एक उससे पढते रहे थे, बहुत-सो को उसकी शीशम की छडी ने मार पिलाई थी और उन्हे अभी तक याद था। अध्यापक फर्मान को पकडकर एक ओर ले गया और चिन्तातुर भाव से उससे पूछने लगा—"तू जो कहता है, वह ठीक ही होगा, किन्तु… ."

अध्यापक की केवल एक ही कठिनाई थी कि उसने सारी आयु जोड-जोडकर एक हजार रुपया सचित कर लिया था। और अब उसे भय लगता था—ये लोग जो चाहते थे कि निर्धन और भूखे लोग मौत का शिकार न हो, उनके तन पर वस्त्र हो, उनके रोगो का इलाज हो, उनके घर साफ-स्वच्छ हो, उनके बालको को उच्च-शिक्षा मिले, तो फिर अध्यापक ऐसे अमीर व्यक्ति की क्या दशा होगी? उसे तो कोई हानि नही पहुँचेगी।

"रुपया यदि चाहिए तो अभी सारे-का-सारा ले लो, किन्तु मुझे कुछ न कहिए! और यदि मे मर जाऊँ तो मेरी बूढी पत्नी पर कोई विपत्ति न आए!" बूढे अध्यापक ने आखिर फर्मान से हाथ जोडकर प्रार्थना की।

फर्मान खूब हँसा—हँस-हँसकर लोट-पोट हो गया। आखिर अपने-आपको वश मे करके और अध्यापक के गले में बाहे डालकर उसने कहा—"मौलवी साहब! हम तो आपको एक हजार रुपया और देंगे, साथ ही धरती देगे और ढोर डंगर भी……"

और फिर फर्मान ने अपने शेष साथियो से अध्यापक महोदय की इस विपत्ति की चर्चा की, और सबके पेट मे हँसी के मारे बल पड गए।

और फिर अनाज से भरा हुआ एक छकडा उनके पास आ खडा हुआ, सब अल्लादाद और उसके बैलों को देखकर अवाक् रह जाते। न पहाड़ उनके मार्ग में ठहरते थे न दरिया उनका मार्ग काटते थे, न किसी सघन-वन मे वे रुकते।

"इतनी बोरियाँ ?" एक साथी ने अल्लादाद से कहा ।

"मै कहता हूँ, यदि हम दोनो हाथो से लुटाना भी आरम्भ कर दे तो भी हम भूखे न रहें !" अल्लादाद ने अपने स्वाभाविक अल्हडपन से उत्तर दिया ।

फिर कितनी देर तक इधर-उधर की बाते होती रही । आखिर जब सब लोग हँस-खेल चके, खा-पी चुके, तो फर्मान ने उठकर अपना नया प्रस्ताव सबके सामने रखा, सुनते-सुनते सब साथी जैसे भौचक्के-से रह गए । प्रत्येक को यह अनुभव होने लगा, जैसे सारी शक्ति उनके हाथ मे थी । उम्रभर जमीदार से भय खाते रहे, हालाकि जमीदार को उनसे डरना चाहिए था ।

"राजकुमार जिन्दाबाद !"—के नारे बार-बार गूँजते और लोगो के मुँह से स्वयमेव निकल जाता—"बलिहारी उसकी, जिसने तुझे जन्म दिया है !"

भागभरी और उसकी सहेलियाँ खाने-पकाने से अवकाश पाकर उनमे आकर सम्मिलित हो चुकी थी । फर्मान का प्रस्ताव यह था कि जो फसल तैयार हो चुकी थी, आजकल उसे कोई हाथ न लगाए, और जिन खेतो मे कुछ कटाई हो चुकी थी, उन्हे वैसा ही छोड दिया जाय, और जिन खेतो की फसल कट चुकी थी, वह खेतो ही मे पडी सडती रहे । ढोर-डगरो को खेतो मे चरने से रोका न जाय, कुओ से पानी न निकाला जाय, रहट न चलाए जाँय, और जो साथी सरकार के अस्तबल मे, हवेली मे काम कर रहे थे, वे एकदम काम छोड दे । किन्तु यह सब कुछ करने से पहले सबके घरो में दो सप्ताह के खाने के लिए अनाज अवश्य होना चाहिए । और सब यह जानते थे कि जिनके पास अनाज की कमी थी, उनकी आवश्यकता कहाँ से पूरी हो सकती थी । इन दो सप्ताहो मे फर्मान ने समझाया कि प्रत्येक गाँव मे जत्थे बनाकर सब साथी तख्तपड़ी मे आएँ—'जमीदारी मुर्दाबाद' तथा 'हमे हमारी धरती दो' के नारे लगाएँ ।

'जमीदारी मुर्दाबाद !' भागभरी सोच रही थी।

और उसके साथी की स्त्रियाँ हैरान होती कि जैसे उसका बेटा कहा करता था, यदि उन्हे जमीदार की हवेली में जाकर रहना पडा तो वे इतना भी नही जानती थी कि इतनी बडी हवेली का क्या करेंगी।

और फिर फर्मान ने उनको समझाया कि सम्भव है कि उन्हे पुलिस से टक्कर लेनी पडे, सम्भव है उनमे कई द्रोह कर जॉय, सम्भव है कि उन पर लाठियाँ बरसाई जाँय, यह भी सम्भव है कि एकाध बार गोली भी चल जाय, किन्तु कोई साहस नही छोडेगा। जिस साहस के साथ उन्होने आज तक अपने सगठन को दृढ रखा था, उसी साहस से एक प्राण होकर सबके-सब लडेगे सगठित होकर, सिर जोडकर, यदि आवश्यकता पडी तो सबके-सब जान दे देगे।

"और ईश्वर न करे, यदि इस बार हम अपने उद्देश्य मे असफल रहे तो हमारा नामोनिशान मिट जायगा..." अन्त मे फर्मान ने कहा।

और फिर 'फर्मान जिन्दाबाद—राजकुमार जिन्दाबाद' के नारो की गूँज मे प्रत्येक ने प्रतिज्ञा ली कि वे फर्मान के बताए हुए मार्ग पर चलेंगे, चाहे मर ही क्यो न जाँय।

दूर-दूर के गाँवों से आए हुए प्रतिनिधि बिखर गए और धीरे-धीरे सभी साथी चले गए। केवल चार साथी रह गए, जिनके हाथ मे इस आन्दोलन की बागडोर थी।

फर्मान ने एक-एक को समझाते हुए बार-बार इस बात पर जोर दिया कि यह लहर अहिसात्मक असहयोग की लहर थी। और वे इसी आन्दोलन से इस बात का निश्चय रखते थे कि शत्रु घुटने टेक देने पर विवश हो जायगा। इस प्रकार जत्थेबन्दी करके जब लोग आने आरम्भ हो जॉयगे, तो अनिवार्य था कि लोगो मे उत्साह बढेगा। और सम्भव है कि जरा-सा उकसाने पर वे किसी को हानि पहुँचाने पर तुल जॉय, बार-बार फर्मान इस बात पर जोर देता कि यदि लोगो ने कही भी तनिक-सी भूल की तो सारा काम चौपट हो जायगा, और फिर सारे-का-

सारा आन्दोलन नए सिर से आरम्भ करना पड़ेगा। सम्भव था कि विरोधी उन्हे जान-बूझकर ललकारने लगे, किन्तु किसी ने किसी पर हाथ नही उठाना। वह सारा कार्य शान्तिपूर्ण ढंग से करना चाहता था, मजदूरो ने अपना मूल्य आकना था, श्रमिको ने यह प्रमाणित कर दिखाना था कि उनका मूल्य क्या है, और विरोधी यदि उनके मूल्य पहचान जाँय तो उसीमे सारे आन्दोलन की सफलता थी। फर्मान यह जानता था कि कोई उन्हें सरलता से धरती नही देगा, किन्तु यह उत्साह एव प्रेरणा, जिसने इस आन्दोलन से जन्म लेना था, वह जमीदार और उसके जुआरियो के चरण लडखडा देगी।

भागभरी सोचती कि उसका लडका किसी से ऊँची आवाज से बाते नही किया करता था। भागभरी सोचती कि उसका लडका किसी का बुरा नही चाहता था, जभी तो वह जमीदार की हवेली मे आग नही लगा सका था। जमीदार की हवेली के बारे मे यह बात उसके हृदय की विशालता थी, नही-नही यह उसकी दुर्बलता थी, भागभरी के लडके की यह दुर्बलता थी। यह दुर्बलता थी उस नवयुवक नेता की, जिसे सब राजकुमार कहकर पुकारते थे। दुर्बलता थी···नही···न···ही· न···न······दुर्बलता सम्भवत· भागभरी की उपमा थी, दुर्बलता सम्भवत: माँ की थी जिसके कारण उसका लडका विवश होकर रह गया था।

मेरी अपनी दुर्बलता—दो मे से एक अवश्य बलवान होता है और एक अवश्य दुर्बल होता है। भारी यदि बहुत भारी हो, तो दुर्बल अधिक दुर्बल प्रतीत होता है। और भागभरी को अपने-आप मे से सडाँद आने लगी, जैसे कूडे का ढेर किसी ने बिखेर दिया हो। उसे यूँ अनुभव हुआ, जैसे उसके आसपास की धरती गन्दगी से भरी हो और सब लोग उसमे लिथडे हुए है, खा रहे है, पी रहे है, खेल रहे है, काम कर रहे है, और कय मे कुलबुलाते हुए कीडे कभी काले पड जाते है और कभी लाल।

लौटते समय एक नदी पडी। भागभरी फर्मान से बोली—"बेटा! मैं तनिक नहा न लूँ, सबेर तो हो ही रही है।"

एक तूफानी रात !

३५

कल दिन-भर वर्षा होती रही, रात-भर वर्षा होती रही, आज सबेरे से वर्षा होती रही। और अब रात हो चुकी थी। बादल बरस-बरसकर फिर बरसने लगते, मूसलाधार मेह पड रहा था। बादल गरजते, बिजली कौंदती, झँझाएँ चलती, वर्षा एक पल एक घडी के लिए न रुकती, जो कोई भी जहाँ था, वही रुका था।

रात मौन थी, फिसलती और चिकनी-सी, बार-बार सन्नाटा जैसे आकर शरीर से चिपट जाता और बरामदे मे एक नारी थी, जिसकी चरण-चाप मूसलाधार वर्षा में भी दब न सकती। झझा कभी-कभी मेह की बूदो को टिटहरी (एक पक्षी) की भाति घुमाकर भीतर ले जाती, किन्तु स्त्री के उखडते हुए और जमते हुए चरण बूदो की टपाटप से भी जैसे अधिक तीव्र थे। बिजली की चमक मे उस रात से अधिक घना काला दुपट्टा भी कभी दिखाई दे जाता, और कभी अधेरे मे अंधेरा और गहरा हो जाता।

बरामदे की यह नारी विकल थी, मछली की भाति जैसे तड़प रही हो। सताप अधिक घना होता जा रहा था। बादल उमड़े आ रहे थे, जैसे धरती को छू रहे हों। काली घनघोर घटाओं में बिजली की कौंद नागो के समान लपक-लपक कर डसने को दौड़ती—किन्तु चारो ओर

वर्षा-ही-वर्षा हो रही थी, और कुछ नही था। नारी की विकल चरण-चाप भी रुक गई थी। पिछले दो दिन से भूखी उस जवान लड़की के भीतर एक अलाव जल रहा था। एक भूखी जवानी, जिसकी अन्तर्ज्वाला को अटूट वर्षा व तेज हवा के बर्फीले झोके कम नही कर सकते थे।

सोच-सोच कर बरामदे मे टहलती हुई नारी अनुभव कर रही थी कि उसका मस्तिष्क फट जायगा।

"कल रात के बारह बजे टाली मूहरी के पुल पर···" जैसे अंधकार मे से कोई उसके कानो मे यह बात फूँक रहा था।

और कल आज बन चुका था।

टन्—टन्—टन् हवेली के द्वारपाल ने घडियाल बजाना आरंभ किया और घने काले दुपट्टे वाली लडकी काँप उठी, दस बज चुके थे।

दस बज चुके थे और अब केवल दो घटे शेष थे, दो घटे जिनका आधा केवल एक घटा होता है—और टालीमूहरी के पुल पर सफेद घोडे पर जाते हुए सवार को ठडा कर दिया जायगा। पूरे बारह बजे उसने उस पुल पर से निकलना था। पता देने वाले ने ठीक पता दिया था और उस पुल पर से गुजरने वाला व्यक्ति समय का पाबद था। वर्षा चाहे दो घटे तक होती रहें, चाहे आधी आ जाय, चाहे तूफान आ जाय, चाहे पुल हो चाहे न हो, सफेद घोड़े वाला सवार अवश्य जायगा।

और टालीमूहरी के पुल पर राइफले तान ली गई होगी। दस बज चुके थे और राइफलो वाले आठ बजे से गए हुए थे। चार गुंडे, जिनके अदर मदिरा की आग न वर्षा से भयभीत हुई न बादलो से सहमी, न बिजलियो से रुकी। दो दिन से निरंतर शराब पी-पी कर अकडाए हुए पट्ठे, दो दिन की प्रेरणा का विष, घोर अधेरी रात की स्तब्धता और मदिरा से मदमस्त आँखो की क्रूरता सफेद घोड़ा, सफेद साज उन्हे अवश्य दिखाई दे जायगा। सफेद घोड़े का गोरा चिट्टा सवार उनके निशाने की लपेट मे अवश्य आ जायगा।

"टन् टन्·····" दस बज चुके थे। घडियाल बजना बन्द हो

गया । वर्षा अधिक तीव्र हो उठी, गरजते हुए बादल अधिक दूर-दूर तक फैल गए और बिजली जैसे काले दुपट्टे को चीर-चीर जाती ।

"रात को पूरे बारह बजे टालीमूहरी के पुल पर !" फिर जैसे किसी ने उसके कानो मे आ कर फूँका ।

रात को पूरे बारह बजे एक भूकम्प आयगा, रात के पूरे बारह बजे धरती फट जायगी, रात के पूरे बारह बजे प्रलय आ जायगी ।

और अब रात के दस बज चुके थे ।

घने काले दुपट्टे वाली नारी बरामदे मे तडप रही थी, उसके शरीर मे से जैसे चिन्गारियाँ निकल रही हो, उसकी आरक्त हो रही आँखे जैसे फट कर बाहर आने को उद्यत हो, व्यग्रता मे कभी उसका रोम-रोम काँपने लगता और कभी उसका शरीर ऐंठ जाता ।

तेज-तेज डग'''अधिक तेज होते जा रहे थे । किन्तु उसका मस्तिष्क जैसे पथरा चुका हो, हिम की भाति स्थिर और शीतल, अथवा उसकी आँच के कारण भस्म हो चुका था, जो उसके अग-प्रत्यग मे दबी हुई थी ।

दो घटे और—फिर चाँद कभी नही निकला करेगा । और दो घंटे—फिर फूल खिलना छोड देंगे । और दो घंटे—फिर अंधकार मिट जायगा । रात वही-की-वही रुक जायगी ।

घने काले दुपट्टे वाली लडकी ने अपने शरीर की चुटकी भरी, उसके नाखून मास मे खुभते गए, किन्तु उसने उस टीस को अनुभव न किया ।

बिजली अभी तक चमक रही थी, वर्षा अभी तक हो रही थी, बादल अभी तक गरज रहे थे, रात और भी भयानक होती जा रही थी ।

तिड—तिड—तिड़ !!! घने काले दुपट्टे वाली लडकी के कानों मे जैसे गोलिया चल रही थी, और उसे ज्ञात हुआ जैसे फूल टहनी से टूट कर औधे मुँह गिर पड़ा हो । श्वेत घोडे का सवार टालीमूहरी के पुल की दाई ओर ढेर हो चुका था ।

तिड—तिड—तिड—गोलियाँ बरस रही है और सारे-का-सारा प्रदेश जैसे भुना जा रहा हो। जैसे प्रत्येक बालक अनाथ कर दिया जाता है, हल चलाने वालो के हल जैसे वैसे-के-वैसे खडे हो, खेतो की मेढो पर पड़े हुए बीज जैसे बर्बाद हो रहे हो। कुएँ अन्धे हो चुके हो। बहती धारा रुक गई हो।

तिड—तिड—तिड—एक नारी के सफेद बालो मे धूल पड रही है। उसकी नग्नता का अपमान किया जा रहा है, उसकी बोटी-बोटी कुत्ते नोच रहे है।

तिड—तिड—तिड—प्रत्येक युवती के सतीत्व पर आक्रमण किया जा रहा है।

"रात के पूरे बारह बजे टालीमूहरी के पुल पर"—किसी ने फिर उसके कानो मे यह फूँका—"रात के पूरे बारह बजे"—काले दुपट्टे वाली नारी ने सोचा—"रात के पूरे बारह बजे—स्त्रियाँ चीख उठेगी, बालक बिलबिलाने लगेगे, बूढे दहाडे मार-मारकर पागल हो जॉयगे।

टन्—टन्—टन्—घडियाल फिर बजने लगा, बारह बज रहे थे। काले दुपट्टे वाली लडकी चौक पड़ी। उसका शरीर पसीने से तर हो गया। घुप-अधेरी रात मे उसने ऑखे फाड-फाड कर देखा—बिजली एक बार फिर काँपी, जैसे उसके समीप आ कर मुसकरा रही हो।

और घने काले दुपट्टे वाली नारी एक अपरिमित तीव्रता के साथ बाहर निकल गई।

"पूरे बारह बजे" उसके कानो मे यह बात गूँज रही थी, उसने स्त्रियों वाले वस्त्र उतार दिये और एक नवयुवक के वस्त्र पहन लिये।

"पूरे बारह बजे" उसके कानो मे यह आवाज़ गूँज रही थी, वह लालटेन के प्रकाश मे एक कागज के टुकडे पर कुछ लिखने का प्रयत्न कर रही थी।

"पूरे बारह बजे" यह आवाज उसके कानो मे गूँज रही थी, जब वह मूसलाधार वर्षा मे अपने धडकते दिल के साथ विलीन हो गई।

फिर उसने अस्तबल मे से एक सफेद घोड़ा खोला, घोड़े पर काठी डाली, और फिर वह बागीचे के मार्ग से बाहर निकल आई। फिर बादल गर्जते रहे, बिजली कौदती रही, मेह पड़ता रहा। घोडे के पाँव धरती को न छूते, जैसे वह उड रहा हो, वर्षा से लड रहा हो, शीत से लड रहा हो।

"टालीमूहरी के पुल पर" कोई ऊँची आवाज मे जैसे पुकार रहा था। और टालीमूहरी का पुल पाँच मील दूर था।

सफेद घोडे के सुकोमल सवार को अपना शैशव याद आया—माता-पिता का दुलार, सेवको का पालन, सखियो की छेड-छाड। एक बार ये खेलते-खेलते "चोर-चोर" का खेल खेली थी, और अंगुली की बंदूक से उसने लकडी के घोडे पर भागते हुए चोर को मार गिराया था। फिर उसको वे दिन याद आए—जब वह श्रेणियो के पश्चात श्रेणियाँ उत्तीर्ण करती गई और यूँ उछलते-कूदते हसते-खेलते, कभी-कभी कोई उससे कहता कि कही वह मुँह के बल न गिर पडे, और फिर उसकी माँ उसे सात-सात पर्दो मे छिपाकर रखने का प्रयत्न करती। वह नौकरो से बात नही कर सकती थी, वह माली के बालक को दुलार नही सकती थी, किसान से उसकी पत्नी की दशा नही पूछ सकती थी। वह गाना सीख सकती थी, किन्तु किसी पराए के सामने गा नही सकती थी, नृत्य सीख सकती थी, किन्तु अपनी माँ के अतिरिक्त किसी के सामने नाच नही सकती थी। सखियाँ चाहे उसके घर आ जाँय, किन्तु वह सहेलियो के घर नही जा सकती थी—और इस प्रकार देखते-देखते वह झुँझला उठी,—और बिल्कुल उसी प्रकार वर्षा हो रही थी, बिल्कुल उसी प्रकार बिजली कौद रही थी, बादल गरज रहे थे—उसने सामने पलग पर पड़ी हुई माँ को उस बार घूर कर देखा—और फिर धीरे से बाहर निकल आई। जब घर के बड़े द्वार में से निकली तो घर की घड़ी बारह बजा रही थी।

"पूरे बारह बजे" फिर उसे यह बात याद आई।

"पूरे बारह बजे—पूरे बारह बजे—पूरे बारह बजे" प्रत्येक श्वास के साथ उसके मुँह से यह शब्द निकलने लगते ।

घोडा सरपट दौड रहा था । ललकारता जा रहा था, गोरे सवार का सफेद घोडा उडता जा रहा था ।

टखनो तक पानी खडा था—गढे थे, पत्थर थे, पक्षी मरे पडे थे, टहनियाँ टूटकर बिखरी पडी थी, किन्तु घोडा इन सबको फलाँगता चला गया ।

घोड़े के सुकोमल सवार को अब अपने पिता की याद आई—वह सडको का बडा इजीनियर था, वह सडक, जिसके सीने पर आज इस अधेरी रात में उसकी लडकी उडती जा रही थी, वह उसी की बनाई हुई थी ।

टालीमूहरी के दाईं ओर उसे ज्ञात था कि दो गुँडे एक ओर खाई में होगे, दो गुँडे दूसरी ओर झाड़ी में छिपे होंगे, और पाचवाँ कही छिपा हुआ सब कुछ देख रहा होगा ।

सफेद घोडे के सवार को पुरुषो-ऐसा वेष बनाकर अपने-आप पर भरोसा बढ गया था । वह सोचती, एक गोली पर्याप्त नही होगी, तब तो शायद वह दो गोलियाँ भी खा सके, और उसकी मुसकान तथा थपकियो पर पला हुआ तुरग उसकी लाश को भी कही उडा कर ले जायगा । रकाब में पॉव जमाना तो उसने देर से सीख रखा था, टॉग से चाहे धड अलग हो जाय, किन्तु रकाब मे से पॉव कभी न हिल पाए ।

बादल वैसे-के-वैसे बरस रहे थे, बिजली वैसी-की-वैसी कौध रही थी, झंझा अधिक तीव्र हो रही थी ।

"पूरे बारह बजे" फिर उसके कान में किसी ने फूँका ।

सफेद घोडे को और एड़ी लगाई गई । वह अधिक तेज दौड़ा, सामने टालीमूहरी का पुल था ।

सफेद घोड़े के सवार की आँखो के आगे कोई गोरी-गोरी आकृति आ गई, बिल्ली की-सी आँखे, रेशम-ऐसे भूरे बाल, सुन्दर लम्बी काया ।

सामने टालीमूहरी का पुल था, घोडा अधिक तेज हो गया। वर्षा यूँ हो रही थी, जैसे सारा आकाश चू पडेगा और फिर शुष्क हो जायगा। आँधी का एक थपेडा, और फिर तिड-तिड गोलियाँ बरसने लगी।

एक—दो—तीन—चार—और फिर सवार औधे मुँह गिर पडा।

एक—दो—तीन—घोडा भी गिर पडा।

बादल गर्जते रहे, बिजली कौदती रही, वर्षा अपना जोर दिखाती रही।

हींग लगी न फटकड़ी !

३६

जमीदार की एक आँख बह चुकी थी। उसके गलते और सड़ते हुए शरीर के घावो मे कीडे कुलबुला रहे थे। कोई औषधि काम नही कर रही थी—नव्वाब उसके पास कभी नही आया था, अब उसके ये शब्द "मरता क्यो नही, अब और क्या चाहता है" उसके कानो तक पहुँच चुके थे।

जमीदार के कमरे मे से भयानक दुर्गन्ध आ रही थी। प्रतिपल, प्रतिक्षण उसका तड़पते कटता, चीखते बीतता, कितनी-कितनी देर तक वह बेसुध रहता, हकीम नब्ज पकडे बैठे रहते। मौलवियो ने कुरान-शरीफ के पाठ आरम्भ कर दिये। रेशमाँ और नेकाँ प्रतिदिन उसके हाथो दरिद्रो मे अनाज और कपडे बँटवाती रहती।

फिर भी उसका पिंड नही छूटा था। रात भर जमीदार तडपता रहा, दिन अत्यन्त कठिनाई से कटता। नौकर तग आ चुके थे, हकीम-वैद्य तथा डॉक्टर झुँझलाने लगे थे। रेशमाँ हाथ जोड-जोडकर प्रार्थना कर रही थी—"हे ईश्वर, अब इन्हे और कष्ट मत दे।"

वे भुजाएँ, जिनके द्वारा भयानक-से-भयानक अत्याचार हुआ था, सूखकर काँटा बन चुकी थी, वह वक्षस्थल जो अकड़-अकड तथा ऐंठ-ऐंठ जाता था, हड्डियो का पिंजर बन चुका था; वे टागें, जो

काम-क्रोध और अभिमान के मार्ग पर चलती रहती थी, आज कीडो से अटी पडी थी ।

और जमीदार सोचता—वह, जिसके सामने कोई आयुपर्यन्त आँख उठाकर न देख सका, जिसके अत्याचारो की छानबीन का साहस नही होता था, आज वह अपने प्रत्येक पाप के लिए दस-दस बार दण्ड भुगत रहा था । मटके भर-भरकर पी हुई शराब आज किसी काम नही आ रही थी, मोतियो से भरपूर सन्दूक आज व्यर्थ ठुँसे पडे थे. दुर्ग की भाँति सुदृढ हवेली आज उसे काट खाने को दौडती ।' घोड़ो का ध्यान, कुत्तो की चिन्ता, बाजो की बाते—सब उसे छेद रही थी ।

जमीदार ने बार-बार क्षमा-याचना की—उन ज्यादतियो के लिए, जो कामातुर होकर करता रहा । उसने लाख-लाख बार अपने पाप कटवाए; उस क्रोधानल के लिए, लोभ के लिए, जिसने आयुभर उसे ऊँचा किये रखा, उसका प्रत्येक घमड उसे अपमानित कर रहा था ।

दो दिनो की वर्षा के बाद धूप और भी चमकीली निकली । जमीदार ने नेकाँ को भी बुलवा भेजा, नेकाँ भागभरी के गाँव की रहने वाली थी ।

जमीदार ने नेकाँ से विनय की कि किसी प्रकार वह जाकर भागभरी को बुला लाए । उसे यूँ ज्ञात होता था, जैसे उसके श्वास केवल इसलिए अटके हुए थे कि भागभरी के सामने हृदय चीरकर रख दे । उसने अपने आपको सयत किये रखा, किन्तु अब उससे न रहा गया । भागभरी, जो राजकुमार की माँ थी—भागभरी—जिसे सम्पूर्ण पोठोहार 'माँ' कहकर बुलाता था, भागभरी यदि उसे क्षमा कर दे तो शायद उसे आराम हो जाय; भागभरी यदि उसे क्षमा कर दे तो वह इस प्रकार घुलेगा नही, गलेगा नही, सडेगा नही ।

और भागभरी अब वह भागभरी नही रही थी । उसके दूध-ऐसे श्वेत केश हिम के समान झिलमिलाते, इस आयु में भी उसके कपोल दहकते, उसके चौड़े ललाट पर सत्य, श्रद्धा और प्यार की आभा झलकती रहती । फर्मान की माँ' भागभरी अब किसी से नहीं डरती थी । नेकाँ

ने जाकर उसे जमीदार की दशा बताई और वह उसी समय उठकर उसके साथ हो ली ।

हक्की-बक्की नेकाँ ने भागभरी को जमीदार की अत्यन्त भयानक बीमारी के सम्बन्ध मे बताया, उसके विनय-मिन्नतो के विषय मे बताया, उसकी दवाओ के बारे मे बताया, उसके दान की चर्चा की, कुरान शरीफ़ के पाठ के विषय मे बताया ।

द्वार खुलते गए, मार्ग उसके चरणो पर बिछ-बिछ गए । भागभरी एक सुगधि बिखेरती, एक शीतल-शीतल भीनी-भीनी पवन लिये जमीदार के कमरे मे जा पहुँची ।

जमीदार को विश्वास नही आ रहा था कि उसके सामने और उसके अपने कमरे मे भागभरी खडी थी । खद्दर के दूध ऐसे श्वेत वस्त्रो मे जैसे गगन से उतरी हुई कोई देवी हो । एक दबी हुई आँख से उसने घूर-घूरकर देखा—कही उसे धोखा तो नही हो रहा था । किन्तु भाग-भरी उसके सामने खडी थी—जैसे शान्ति सतोष की कोई सजीव प्रतिमा, जैसे शीतलता का कोई स्रोत, जैसे सुगधि मे गुँथी हुई कोई नारी !

भागभरी का अंग-प्रत्यग जमीदार को यूँ घूरता हुआ देख जैसे बोल पड़ा था—"तुझ पर ईश्वर का कोप हुआ है, निर्धनो पर अत्याचार का तुझे दण्ड मिल रहा है, जिसे तू अपने जीवन में करता आया है । ईश्वर की लाठी मे आवाज़ नही होती, ईश्वर के समीप किसी निर्धन और धनाढच में अन्तर नही होता । परलोक का नरक, परलोक का स्वर्ग तो किसी ने देखा ही नही । मेरा लड़का कहता है कि अत्याचारो का फल व्यक्ति यही भोग लेता है । नरक भी इसी ससार मे है और स्वर्ग भी, अपने किये का परिणाम यही निकल जाता है । फिर भी तू जमीदार है, हमने तेरा नमक खाया है, हम तेरी धरती पर रहते है, तेरी हवा मे साँस लेते है, हमने तेरा पानी पिया है, मैने तुझे क्षमा कर दिया, मैने तुझे क्षमा कर दिया । मैने तुझे बहादुर का खून भी, जिसे शायद कोई भी नारी क्षमा न कर सके, क्षमा कर दिया । वह सारी भूख, वह सारी

नग्नता, जिसका तू उत्तरदायी है, तेरे पिट्ठू उत्तरदायी है, क्षमा कर दिये। पोठोहार की बाढ तुझे क्षमा कर दी, जिसे तू यदि चाहता तो रोक सकता था। वे पुरुष-स्त्रियाँ और बालक भी तुझे क्षमा कर दिये, जो सोते में सदा की नीद सो गये, केवल तेरे अन्याय के कारण, तेरी उपेक्षा के कारण। मै तुझे पोठोहार के सम्पूर्ण प्राणियो की ओर से क्षमा कर रही हूँ, नही तो तेरा साँस यूँही अटका रहेगा। मै तुझे इसलिए क्षमा कर रही हूँ कि तू और तेरा शासन कुछ दिनो के अतिथि है, मै तुझे क्षमा कर रही हूँ, इसलिये कि निर्धनो के हाथ मे शक्ति आ चुकी है। किसान को उसका अधिकार मिलने वाला है, अब प्रत्येक किसान को स्वच्छ रहने का अधिकार मिलने वाला है, अब तो प्रत्येक किसान के रोग का इलाज हुआ करेगा। अब तो जो कोई जितना काम करेगा, उसे उतना ही खाने को मिलेगा; तेरी जमीदारी के पाँव अब उखड़ रहे है। अभी हडताल को पाँच दिन हुए है, पिछले दो दिनो की वर्षा मे खेतो के खेत बर्बाद हो चुके है। क्या तू जानता है कि तेरी हवेली मे अनाज का एक दाना नही रहा, और तीन दिन कटने दे—तेरे, नव्वाब और उसके गुडो की नाक मे दम आ जायगा। चारो ओर से नाकाबन्दी की जा चुकी है, मै तुझे क्षमा करती हूँ—तू अब लड भी नही सकता।"

नेकाँ ने आगे होकर देखा—जमीदार की आँख वैसी-की-वैसी खुली थी, किन्तु वह बेसुध पडा था, नब्ज जैसे कही गुम हो गई हो, अत्यन्त धीमी चल रही थी। कई जोड़-तोड किये गए, कई दवाएँ दी गईं, फिर कही जाकर होश आया।

जमीदार ने भागभरी से बैठने के लिए अत्यन्त नम्रता से कहा। नेकाँ से सकेत किया कि वह रेशमाँ को बुला लाए, इससे पूर्व कि रेशमाँ आती, उसने अपने तकिए के नीचे से एक कागज निकालकर भागभरी के हाथ मे दे दिया, शात-चित्त हो कर उसने ठंडी आह भरी, संतुष्ट होकर जैसे उसका सिर अत्यन्त कोमलता से तकिये पर जा गिरा।

रेशमाँ का जी नही चाहता कि वह भागभरी से गले मिलने के बाद विलग हो, उससे बार-बार चिमट जाती। जैसे उसे नशा चढ रहा हो, उस पर एक मादकता व्याप्त हो रही थी, एक सुगधि, जिसके लिए वह तरसती रही, माँ का हृदय, जिससे उसकी कल्पना तक अनजान थी, और जब वह उसके समीप बैठी तो उससे सटकर बैठने का प्रयत्न करती रही।

जमीदार के समीप कुछ समय के लिए बैठकर रेशमाँ भागभरी को अपना कमरा दिखाने के लिए ले गई, उससे छोटी-छोटी बाते करती रही जैसे पुत्रियाँ अपने माता-पिता से करती है। वह अपने हाथ से कढी हुई चादरे दिखाती रही, अपने हाथ से लगाई हुई सब्जियाँ दिखाती रही।

और रेशमाँ भागभरी से इस प्रकार मिली कि जैसे जन्म-जन्मान्तर से उसे जानती हो, जैसे उसकी कोख से उसने जन्म लिया हो, जैसे युगो से बिछुडी हुई वह फिर मिल रही हो।

रेशमाँ नाचती हुई चलती, हँस-हँस कर दुहरी होती, फूली न समाती, जैसे उसके जीवन की रिक्तता भर चुकी हो, जैसे इसके अत-स्तल का कोई उजडा भाग सहसा हरा-भरा हो गया हो।

रेशमा भागभरी को कँदलाँ के कमरे की ओर ले गई, किन्तु वह वहाँ नही थी, रेशमाँ हैरान थी कि कदलाँ ने तो उसे बताए बिना घर से बाहर कभी चरण नही रखा था।

फिर रेशमाँ भागभरी को हवेली के दूसरे भागो मे ले गई, उसने बागीचे का कोना-कोना उसे घूम कर दिखाया। अस्तबल मे एक-एक घोडे, एक-एक कुत्ते, एक-एक बाज और एक-एक जानवर उसे दिखाया। किसी को थपकी दी, किसी को प्यार से पुचकारा, किसी से बात की और वे कितनी देर तक यूँ ही घूमती रही।

भागभरी ने श्रमिकों और मजदूरो के क्वार्टर देखे, उनकी पत्नियो से, उनके बालकों से हँस-हँस कर मिलती रही, और प्रत्येक उसे रेशमाँ

से यूँ मिलता देखकर विस्मित होता ।

"क्यो वही बात हुई न जो मै तुमसे कहती थी"—अभी रेशमाँ और भागभरी कठिनता से एक दालान मे से निकल पाई थी कि एक पडोसिन ने दूसरी पडोसिन से कहा ।

"हीग लगी न फटकडी, और यह तो चुपके से आ धमकी है," दूसरी ने उत्तर दिया ।

"मै न कहती थी कि इसका बेटा बला का जादूगर है ।"

जहाँ-जहाँ भागभरी जाती—इस प्रकार की चर्चाएँ छिड जाती और लोग फर्मान की प्रतीक्षा में व्याकुल होने लगे ।

उसके नाम !

३७

इधर भागभरी जमीदार का दिया हुआ आदेशपत्र अपने वक्ष से लगाये रेशमाँ के साथ हवेली मे इस प्रकार घूम रही थी, जैसे जमीदार से उसका कोई विरोध ही न हो, और उधर "ठल्लियाँ" की कँदराओ मे फर्मान एक लाश के सिरहाने अपने साथियो को एक पत्र पढ कर सुना रहा था :

"—कल रात को द्वार के पीछे खडी थी जैसे सदैव रहती हूँ, और फिर मैने सुना कि चँडाल-चौकडी ने निर्णय किया है कि अगले दिन रात को टालीमूहरी के पुल पर पूरे बारह बजे छिपकर बैठ जॉयगे। उन्हे ज्ञात था कि "अघवाल" के जलसे के बाद फर्मान, तू उसी समय लौटेगा—दो राइफले सड़क की एक ओर, दो राइफले सडक की दूसरी ओर तेरी प्रतीक्षा कर रही होगी। मै अवाक् थी कि उन्हे इस बात का भी ज्ञान था कि तू रात को सफेद घोडे पर आएगा और तेरे साथ तेरा कोई साथी भी नही होगा। लाख-लाख बार निर्णय करने वालो ने उसे फिर दुहराया, शराब पीकर वे इन प्रस्तावो को और भी दृढ़ करते रहे।

"और फर्मान तू जानता है कि कल से किस प्रकार वर्षा हो रही है, झँझावात चल रहा है, बिजली कौंद रही है, बादल गरज रहे है, और

इनसे डरता हुआ तेरा कोई व्यक्ति मेरे पास न आया, और मै भी कही बाहर न निकल सकी और भीतर तो अभी चँडाल-चौकडी एकत्रित थी। मै तडपती रही, तडपती रही, रात बीत गई, दिन बीत गया, फिर रात आई, फिर भी तेरी ओर से कोई व्यक्ति न आया। वर्षा वैसी-की-वैसी हो रही थी, बिजली वैसी-की-वैसी कौद रही थी, बादल वैसे-के-वैसे गरज रहे थे।

"पूरे आठ बजे राक्षसो की भाँति मुँडासे बाँधकर थूकते-फुँकारते जाने वाले चले गए। मैने अपनी आँखो से देखा कि बँदूको मे बारूद भरा जा रहा था। मैने अपनी आँखो से देखा—बत्तीसियाँ भिची जा रही थी, होठ काटे जा रहे थे, और मेरे साथी ! कैसे वे तेरा नाम बार-बार लेते थे, ईश्वर उनकी जिह्वाओ मे ··।

"तेरी ओर से किसी के आने की प्रतीक्षा व्यर्थ थी, फिर भी मै प्रतीक्षा करती रही, करती रही। मुझे पता था कि इतनी घनी-काली रात मे और बादलो की इस प्रलय मे किसी को भी नही ढूंढ सकूंगी, फिर भी मै बार-बार विकल हो उठती। घडी ने नौ बजाए, घडी ने दस बजाए, बादल अभी तक गरज रहे थे, प्रकृति उसी प्रकार प्रलय मचा रही थी, आकाश पर कोई आशा का सितारा नही दिखाई देता था।

"और अब मै तुझे यह पत्र लिख रही हूँ, अब और प्रतीक्षा करना व्यर्थ है। हम मजदूरो के जीवन मे कभी विचित्रताएं नही हुआ करती, प्रकृति अपना नियम कभी नही बदलती। मुझे विश्वास है कि तू ठीक बारह बजे पुल पर से गुजरेगा, मुझे विश्वास है कि अत्याचारियो की राइफले अवश्य आग उगलेंगी, और फिर···और फिर···।

"मेरे भाई ! ले, अब मै तुझे बताती हूँ कि मै क्या करने वाली हूँ। यह पत्र लिखकर मै पुरुषो के से वस्त्र पहनूँगी, तुझे पता है कि मेरे पास ऐसे वस्त्रो के कई जोडे पड़े है, मै इन वस्त्रो में सदा पुरुष दिखाई देती हूँ; वैसे ही वस्त्र जो तू मुझे भेजता रहता है। और फिर इस घोर-अँधेरी रात में, इस वर्षा मै अस्तबल से सफेद साज लेकर निकल जाऊँगी,

और इससे पूर्व कि तू पुल पर से निकले, मैं निकलूँगी—कदलाँ ! वे गोलियाँ जो मेरी आँखो के सामने तेरे लिए भरी गई, वे मेरे सीने में उतरेंगी !

"मेरे साथी ! जीवन मे अपने आदर्श तक पहुँचने के लिए, अन्य कुछ करने के लिए, जिसकी विकलता हम दोनो मे है, तुझे सेवाओ के अधिक अवसर प्राप्त हुए है; प्रत्येक विपत्ति एव प्रत्येक दु:ख के समय तू जान तोडकर परिश्रम किया करता था, हम शेष साथी तेरे साथ चलते रहे। हम तेरे बलिदानो तथा तेरी सेवाओ का देख-देखकर दग रह जाते थे। हमे हमारे जीवन ने कभी ऐसा अवसर नही दिया था और आज यदि इस अवसर को मै यूँही न जाने दूँ तो मेरी ओर से ज्यादती न होगी।

"और यदि आज मै अपने नारी के सीने मे तेरे लिए भरी गई गोलियाँ खा सकी, तो मै तुझ पर कोई एहसान नही करूँगी। मै अपने प्राण इसलिये नही त्याग रही कि फर्मान बच जाय, मै तो यही चाहती हूँ कि वह कार्य, वह लगन, वह आदर्श, जो हमारा सबका साझा आदर्श है—कही पूर्ण होते-होते हमारे हाथो से निकल न जाय। हमारी मंजिल कितनी समीप आ चुकी है, हमारा लक्ष्य सर्वथा सामने दिखाई दे रहा है, और यदि आज मेरे साथी, तू हमारे बीच मे से उठ जायगा तो हम फिर वही पहुँच जायँगे जहाँ से हम चले थे।

"यह पत्र पढते हुए मै देख रही हूँ कि तेरी आँखो मे आँसू डबडबा रहे है, शेष साथी भी आँसू बहा रहे है, किन्तु फर्मान मै रक्त मे नही लिथड़ी हुई। मेरे वक्ष मे कोई छेद नही है, मै तो हँसती-खेलती अपने मार्ग पर चलती हुई अपना कार्य करती हुई सन्तुष्ट हो चुकी हूँ !

"अब मैने यह निर्णय करते हुए इतना समय भी नही लिया, जितना मैने मोटरो वाले पिता के बँगले मे से निकलते हुए लिया था। यह निर्णय करते हुए मैने इतना समय भी नही लिया, जब पार्टी के आदेशानुसार नव्वाब ऐसे चडाल की पत्नी बनकर मुझे पोठोहार मे आना पडा।

मेरे साथी, यह कोई बडी बात नही, जिसका सामना करने लिए मै आज जा रही हूँ, ऐसी मौत तो मै लाख बार मर चुकी हूँ।

"कभी उसके सामने गाना, जिसे कोई एक दृष्टि न देख सके, कभी उसके सामने नाचना जिसके रोम-रोम मे से दुर्गन्ध आ रही हो, उसके हाथो को चूमना, जिनको सडक की कुतिया चाटती रही हो, उन वस्त्रो को छूना, जिनमे गन्दी से-गन्दी नालियो की गदगी चिमटी हुई होती, एक आँख से हँसना, एक आँख से रोना, एक होठ से मुस्कराना और एक होठ काटना, हम-ऐसे लोग तो पग-पग पर मरते है, प्रत्येक चरण पर हमें झझोडा और नोचा जाता है।

"टालीमूहरी के पुल पर गरम-गरम जल मे नहाई हुई जब पूरे बारह बजे तेरे घोडे को ठोकर लगेगी, जब तू नीचे उतरकर मुझे पहचान लेगा, यदि मुझ मे रत्ती भर भी जान हुई तो मैं अपने हाथो से तुझे यह पत्र दूँगी ? वरना, तू यह पत्र मेरी जेब मे से निकाल लेना। यह वही कोट है, तू जिसे कई बार पहनता रहा है।

"अच्छा फर्मान—मेरा अन्तिम नमस्कार ! तुझे और अन्य साथियो को, और उन सबको मेरा अन्तिम नमस्कार, जो हमारे मार्ग पर चलते रहे है ! उन खेतो को मेरा अन्तिम नमस्कार जिनमें सोने-ऐसी गेहूँ होती है ! उन कुओ को मेरा अन्तिम नमस्कार, जिनमे दूध-ऐसा जल होता है ! पोठोहार की पहाडियो को मेरा अन्तिम नमस्कार, जिन पर हमने चट्टान-ऐसे सुदृढ संकल्प किये ! मेरा अन्तिम नमस्कार उन तारो को, जिनकी छाया में बैठकर हम सरगोशियाँ किया करते थे। मुझे क्षमा कर देना मेरे नेता, मै यह कदम उठाते हुए किसी से परामर्श न ले सकी ! मुझे अपने सारे साथियो से भी क्षमा करवा देना, मै उनमें से किसी-किसी से भी मिल नही सकी हूँ, यदि मेरे होने का भेद आज तक छिपाया गया तो इसका छिपाया जाना ही भला था।

"और मैं तुमसे अलग थोडे हो रही हूँ, मै प्रत्येक चरण पर तुम्हारे साथ रहूँगी। वे चरण, जो तुम मंजिल की ओर ले जाओगे, आर

वह मजिल जो हमारा सबका साझा आदर्श है, मेरे कधो में इतनी शक्ति है कि मै इनसे काम ले सकूँ, मै तुम्हारे साथ रहूँगी। जब जमीदारी मर रही होगी, मै तुम्हारे साथ हूँगी। जब प्रत्येक किसान अपने खेत का स्वामी स्वय होगा, जब धरती बाँटी जा रही होगी, मै तुम्हारे साथ हूँगी, जब तुम हँसोगे, जब तुम खेलोगे, जब तुम गाओगे, मै उस किसान के साथ आ खड़ी हूँगी, जो पहली बार अपने खेत मे अपने हाथ से अपने बैलो से हल चलाएगा। किसानो की उस मुस्कराहट मे मेरी मुस्कान भी सम्मिलित होगी, जब वह अपने खेतो को हरा-भरा और लहलहाता देखेगा। मै गाँव-गाँव पर उडकर देखूँगी, मोतियो-ऐसी पोठोहार की लाल-लाल गदम किसानो को अपने घरो मे ले जाती हुई। मै किसानो की पत्नियो के साथ मिलकर गदम की छान-फटक करूँगी। मै उस गदम को जाट-पत्नियो की लम्बी-लम्बी भुजाओ के साथ पीसूँगी, और फिर मै अपने स्वप्नो के पोठाहार मे जन्म लूँगी, जहाँ 'सुहाँ' को सिधाया जायगा और चप्पे-चप्पे पर पानी दिया जायगा। जहाँ हट्टे-कट्टे बैल, थलथलाती हुई गाये और फुकारती हुई भैसें घूमा करेगी। अभी मैंने जी भर के पोठोहार के 'माहिया'-ऐसे लोकगीत नही सुने, अभी मैंने जी भर के अपने साथियो से पोठोहार की मीठी भाषा नही सुनी, अभी सरू-सी लम्बी आकाश से अवतीर्ण अप्सराओ की भाँति पोठोहारनो के साथ मे अधिक उठी-बैठी नही, मै फिर अवश्य आऊँगी।

"मै उस समय आऊँगी, जब पोठोहार का प्रत्येक गाँव साफ-स्वच्छ होगा, जब नालियो मे गदगी नही होगी, जब कोई एक-दूसरे के साथ झगडा नही करेगा, जब पचायत के हाथ मे शासन की बागडोर होगी, जब घर-घर चर्खे गूँज रहे होगे, जब लोग सत्य को अपना सबसे महान् शासन समझेंगे।"

पढते-पढते फर्मान कही-कही रुक-रुक जाता, उसका कठावरोध हो जाता। उसके समक्ष उसकी सारी पार्टी अपने आँसुओ को रोकने का

व्यर्थ-प्रयास कर रही थी।

अभी पत्र समाप्त नही हुआ था कि नव्वाब अपने गुंडो तथा अपने कर्मचारियो को लिये वहाँ दाखिल हुआ और फर्मान को सामने खडा देख कर उनके हाथो के तोते उड गए। किसी के मुँह से बात नही निकलती थी, और धीरे-धीरे जब वे आगे बढे तो उन्होने देखा कि सामने कदलाँ की लाश पडी हुई थी, रक्त-चिह्न, जिन पर चलते चलते वे उस स्थान पर पहुँचे थे। उन्होने देखा कि यह कदलाँ के सीने का रुधिर था, कल रात जो गोलियाँ उन्होने चलाई थी, कदलाँ का सीना पार करके छन गई थी। जभी तो कंदला हवेली मे कही नही थी।

किसी की समझ मे कुछ नही आ रहा था।

युगयुग जीवन !



३८

भागभरी ने हवेली का कोना-कोना देखा। रेशमाँ घूम फिरकर एक बार फिर जमीदार के कमरे की ओर आई, जमींदार की नजरे जैसे देहली पर स्थिर होकर रह गई थी।

रेशमाँ प्रसन्न थी—अब फिर कितने समय के बाद जमीदार के चेहरे पर काँति झलक रही थी।

और अभी रेशमाँ और भागभरी कमरे मे आकर खड़ी ही हुई थी कि बाहर एक कोलाहल-सा सुनाई दिया, घोडो के सरपट दौड़ने की आवाज आई। रेशमाँ ने झाँककर देखा—नव्वाब और उसके गुंडे फर्मान तथा उसके साथी हवेली मे प्रविष्ट हो चुके थे और इससे पूर्व कि रेशमाँ तथा भागभरी कही छिप जाती, वे सब-के-सब वहाँ आ पहुँचे।

नव्वाब ने यह दोषारोपण किया था कि उसकी पत्नी कंदलाँ को फर्मान और उसके साथियो ने बहकाकर मार डाला है, उसकी लाश उनके कब्जे से मिली थी और रक्त का प्रतिशोध रक्त होना चाहिए।

रेशमाँ और भागभरी हिमवत् निश्चल हो गई। फर्मान ने कंदलाँ के हाथ का लिखा हुआ पत्र निकाला और फिर उसमे से आवश्यक भाग पढ कर सुनाए। फर्मान ने बताया कि कैसे नव्वाब और उसके साथियो ने फर्मान के लिए जाल बिछाया, और वे स्वय ही उसमें फंस गए थे।

कैसे यदि वह पाँच मिन्ट पहले टालीमूहरी के पुल पर से गुजरता, तो नव्वाब के सेवको ने उसे गोली का निशाना बना दिया होता।

फर्मान को केवल सत्य पर भरोसा था और उसे विश्वास था कि साँच को कभी आँच नही, किन्तु अपनी माँ को हवेली मे देखकर उसके मन मे एक टीस-सी उठ रही थी। कही जाल चारों ओर न फैला दिया गया हो, इसलिए उसने कुछ समय पश्चात् हवेली के बाहर देखा—भीड एकत्रित हो रही थी और 'राजकुम र जिंदाबाद' के नारे लगने लग गए थे।

क्षणभर मे यह समाचार गाँव-गाँव मे फैल गया था कि नव्वाब और उसके गुंडे फर्मान तथा उसके साथियो को बँदी बना कर ले गए थे, और जिसके हाथ लाठी लगी वह लाठी उठा लाया, जिसके हाथ छुरी लगी, वह छुरी लेकर दौड़ पडा। बहुत से नेजे पकडे हुए थे, बहुत-सो ने फावडे उठाए हुए थे, और जहाँ तक दृष्टि पहुँचती हवेली के चारो ओर लाठियाँ-ही-लाठियाँ, नेजे-ही-नेजे, छुरियाँ-ही-छुरियाँ दिखाई दे रही थी। यूँ जान पडता, जैसे एक बाढ उमड आई हो, गरज रही हो। लोग सोचते कि वे उस हवेली की ईंट-से-ईंट बजा देंगे, देखते-देखते उसकी ऊँची मुँडेरो को धरती से मिला देंगे, जैसे नव्वाब और उसके साथियो की बोटी-बोटी उडा देंगे और उनका चिह्नमात्र न रहने देंगे। भीड दाँत पीसती रही, उसके पट्ठे एंठते रहे, बार-बार नारे लगने रहे—"राजकुमार जिन्दाबाद !"

इस कोलाहल से गगन कँपायमान हो रहा था।

देखने वाले खिडकी मे से यह देख रहे कि क्या हो रहा है और ज्यो-ज्यो देर होती गई त्यो-त्यो भीड़ मुख्य द्वार की ओर बढने लगी। फिर कुछ युवक ऊँचे-ऊँचे और भारी-भारी द्वार के पट को धक्का देने लगे, बेलचे और फावड़े वाले सोचते कि वे तो इस हवेली की नीव खोद कर रख देंगे। युवको की एक टोली कह रही थी कि वे कितनो को धक्का दे-दे कर धरती पर लिटा देगे।

ऊपर के कमरे मे भागभरी तडप रही थी—कोई आकृति देखकर बताए कि रक्त किस-किस की आँखो मे उतरा हुआ है, राइफले और पिस्तौले कौन उठाए फिर रहे है, क्या कभी लाठियाँ भी गोलियाँ उगलती है ?

और फर्मान बार-बार माँ को मौन रहने का सकेत कर रहा था। वह नही चाहता था कि वह उन चडालो के मुँह आए, अपने-आप पर, अपने साथियो पर तथा अपने सत्य पर उसे पूरा भरोसा था। सारे समय फर्मान दृढता, शाँति और साहस के साथ निश्चल खडा रहा, खडा रहा।

कितनी देर तक नव्वाब बोलता रहा, झूठ के पुल बाँधता रहा। फिर उसके प्रत्येक गुँडे ने लाख-लाख झूठी सौगद उठाई, नई-नई विचित्र-से-विचित्र तथा भयानक-से-भयानक कहानियाँ रची।

जमीदार का हृदय डोलने लगा। वह सोचता—नव्वाब जो कुछ कह रहा था वह कही सत्य न हो, फिर वह सोचता—नव्वाब के साथी जो कुछ कह रहे थे वही सत्य न हो।

यदि वे मासूम थे तो इसमे भी कोई भेद था, इसमे भी कोई बडी बेईमानी छिपी होगी, किन्तु कँदलाँ का चरण जमीदार के लिए कितना प्राणदायक था। जब वह आई तो उसकी पहली बीमारी दूर होने लग पडी थी—अब उसके कमरे मे से घुँघरुओ की झकार नही आयगी, अब कभी काकली स्वर उसके कानो मे नही गूँजेगा।

नव्वाब कहता—कदलाँ को पढना-लिखना नही आता था, वह पत्र जो फर्मान के हाथ मे था। उसका अपना लिखा हुआ था, और जमीदार को यह बात सत्य जान पडती—वह सोचता—कही उसका हृदय झूठी साक्षी न दे रहा हो, किन्तु जब नव्वाब ने दोबारा पत्र की चर्चा की, तो रेशमाँ टूटकर आगे आई और कहने लगी कि यह सब झूठ था, यह सब छल था, किन्तु भागभरी ने उसे रोक लिया।

रावेल कहता—पिछली रात उसने बागीचे मे से घोड़ो की टापो की आवाज सुनी थी, किन्तु वर्षा के कारण वह बाहर नही निकल सका था।

जुम्मा कहता—उसने अपनी आखो से फर्मान को सफेद घोडे पर जाते देखा था।

शेरा कहता—उसकी पत्नी ने शहर मे ऐसी अफवाह सुनी थी कि फर्मान मारधाड पर लोगो को उकसा रहा था कि पहला बार वे नव्वाब पर करेगे।

फर्मान मौन था, फर्मान के साथी मौन थे, उनके पास केवल एक प्रमाण था और वह था पत्र, जिसे नव्वाब ने झुठला दिया था। इसका प्रमाण वह गॉव था, जहाँ जलसे मे वह सम्मिलित हुआ था। किन्तु उस जलसे की चर्चा क्योकर की जाय, और फिर उस गाँव के साथियो की बात कौन मानता। फर्मान ने मौन में ही भलाई समझी।

"इधर देखो, इधर देखो, इधर देखो।"

जहाना चीखता-चिल्लाता कमरे मे दाखिल हुआ, सबकी दृष्टि उस पर लगी हुई थी। जहाना के बाल बिखरे हुए थे, उसके वस्त्र फटे हुए थे, उसकी आँखे लाल थी, जैसे फट कर बाहर आ रहेगी। अपने दोनो हाथो से अपनी गरदन दबोचे हुए वह फटी-फटी आवाज मे चीख रहा था—"इधर देखो, नव्वाब की पत्नी ने आकर मुझे पकड लिया है, नव्वाब की पत्नी से मुझे बचाओ। मै कहता हूँ कि उसे मेरी गोली लगी और ये कहते है कि उसे इनकी गोली लगी। अब बताओ—उसने गरदन आकर किसकी पकड़ ली है, मुझे क्या ज्ञात था कि वह नव्वाब की पत्नी है, हम तो ससुरे राजकुमार की खोज मे गए थे, ऐसे गला घोट-घोटकर न मार।" और जहाने ने फिर इतने जोर से स्वय अपना गला दबाया कि उसका दम घुट गया।

नव्वाब और उसके साथी, सभी हक्के-बक्के रह गए, उनका भेद खुल गया। फर्मान और उसके साथियो के चेहरों पर गौरव झलकने लगा। नव्वाब ने डबडबायी आँखो से एक बार ऊपर की ओर देखा—बादलो के पीछे सितारो के संसार में कोई अवश्य था—वह यह अनुभव कर रहा था। नव्वाब के साथी खिसकने लगे, नव्वाब भी दाँत भीचता-

फुकारता सिर हिलाता बाहर जाने लगा। किन्तु जहाना द्वार में खडा हो गया। "अब कहाँ भाग रहे हो, पहले मेरे प्राण बचाओ।" अभी तक अपनी गरदन वह अपने हाथो से दबोचे हुए था।

हवेली के बाहर भीड आपे-से बाहर हो रही थी, असन्तुष्ट हुए जा रही थी, 'राजकुमार जिदाबाद' के नारो-पर-नारे लग रहे थे। यूँ जान पडता कि शताब्दियो की खडी दीवारो को लोग धक्का देकर तोड-फोड देंगे। भीड का कोलाहल बढता जा रहा था। बार-बार लाठियाँ उछलने लगती, बार-बार छडियाँ चमकने लगती। वे लोग नागो की भाँति बल खाते—फावडे, बेलचे, तेसे, आरे, चिमटे, हथौडे, मूसल, बेलन, बट्टे, पत्थर कुछ-न-कुछ प्रत्येक के हाथ मे था, कोई हाथ खाली नही था। बालक तख्तियाँ लेकर दौड़ आए। बूढियाँ चर्खे की सलाखे लेकर भागती आई, लोग जैसे इस प्रतीक्षा मे थे कि सकेत-मात्र हो और वे टूट पड़े, हवेली मे से एक हाथ हिले और वे जमीदार तथा उसके पिट्ठुओ का नामोनिशान तक उडा दें।

अन्तिम द्वार पर खडे हुए युवक ने 'राजकुमार जिदाबाद' कहकर हल्ला बोल दिया और द्वार किडकिडाता हुआ दूर जा पड़ा, तथा भीड भीतर दाखिल हो गई।

ऊपर कमरे में जमीदार की काँपती हुई भुजा तकिये के नीचे गई, तकिये से नीचे एक और कागज था, जो उसने निकाला और फर्मान के हाथ मे दे दिया।

नव्वाब और थर्थर काँपते हुए उसके पिट्ठू भागने का व्यर्थ प्रयत्न करते रहे, भीड नीचे दालान तक पहुँच चुकी थी।

क्षण भर के लिए जमीदार का जी चाहा—काश, उसमे उठने की शक्ति होती और वह उन लोगों को देख सकता जो यूँ मस्त होकर नारे लगा रहे थे।

जमीदार के दिये हुए कागज को पकडे भागभरी, रेशमाँ और फर्मान छज्जे पर जा खड़े हुए। भीड़ ने उन्हे देखा, तो नारों-पर-नारे

लगाने आरम्भ कर दिये, ऊँचे, और भी ऊँचे, आकाश जैसे फट जायगा। फर्मान ने कई बार हाथ खडा किया, किन्तु उसके साथियो का उत्साह कम न होता, लाख प्रयत्न करने पर भी वे रुक न सके।

फिर फर्मान के शेष साथी भी सामने आ गये और उन्होने हिला-हिलाकर अत्यन्त कठिनता से लोगो को चुप कराया।

और फिर फर्मान ने चिरपरिचित स्वर मे अपने साथियो को बताया कि उस क्षण से, जो धरती जिसके पास थी, वह उसका पूरी तरह मालिक था, पोठोहार मे जमीदारी समाप्त हो चुकी थी।

"राजकुमार जिदाबाद" के नारे आकाश को कँपा रहे थे कि फर्मान ने एक जोरदार नारा लगाया :

"बीबी कदलाँ जिदाबाद !
किसान-साथी जिदाबाद !!"

बालूजा प्रेस, दिल्ली में मुद्रित